जैन साहित्य एवं मंदिर उपकरण

हमारे यहाँ सभी प्रकार का दिगंबर जैन एवं भारत के सभी प्रमुख धार्मिक संस्थानों का सत साहित्य एवं मदिर में उपयोग हेतु उपकरण और प्रभावना में बाटने योग्य सामग्री सीमित मूल्य पर उपलब्ध है !

शुध्द चांदी के उपकरण आर्डर पर निर्मित किये जातें है!

(पांडुशिला, सिंघासन ,छत्र ,चंवर प्रातिहार्य , जापमाला , मंगल कलश,पूजा बर्तन चंदोवा,तोरण,झारी)

नोट :- हमारे यहाँ घरो मे उपयोग हेतु , साधुओं के उपयोग हेतु, अनुष्ठानो मे उपयोग हेतु शुध्द देशी घी भी आर्डर पर उपलब्ध कराया जाता है !

Contact:-
Sourabh Sagar Indore
9993602663
7722983010
sourabhjn1989@gmail.com

जैन

जय जिनेन्द्र

गाय का शुद्ध देशी घी

शुद्धता पूर्वक बनाया गया देशी घी

साधु व्रती एवं धार्मिक अनुष्ठानो को ध्यान में
रख कर बनाया गया शुद्ध देशी घी

घी ऐसा के दिल जीत जाये !

अब 1kg की पैकिंग में भी उपलब्ध

संपर्क सूत्र

Contact For Order

Sourabh Sagar Indore

Call & Whatsapp:

9993602663,7722983010

All India Home Delivery

विवेक मञ्जूषा

卐

लेखिका
आर्यिका श्री 105 विज्ञानमती माताजी

卐

प्रकाशक
धर्मोदय साहित्य प्रकाशन
सागर (म. प्र.)

विवेक मञ्जूषा

लेखिका : आर्यिका श्री 105 विज्ञानमती माताजी

सम्पादक : डॉ. चेतनप्रकाश पाटनी, जोधपुर

संस्करण : प्रथम, मार्च 2013

आवृत्ति : 2200 प्रतियाँ

ISBN : 978-93-82950-08-0

मूल्य : 55/-

संकल्पना : निधि कम्प्यूटर्स, जोधपुर

मुद्रक : विकास आफसेट, भोपाल

प्राप्ति स्थान : धर्मोदय साहित्य प्रकाशन
जैन मंदिर के पास
बाहुबली कॉलोनी, सागर (म. प्र.)
मो. 094249-51771
dharmodayat@gmail.com

सम्पादकीय

जैनधर्म और दर्शन अहिंसा को महत्त्व देता है। जैनाचार में मात्र साध्य को ही महत्त्व नहीं दिया गया है अपितु साधन को भी महत्ता प्रदान की गई है। यदि हमारे प्रयुक्त साधन अपवित्र हैं तो फिर कोई कारण नहीं है कि साध्य अपवित्र न हो। दूसरी बात, मनुष्य सामाजिक प्राणी है। अपनी जीवनयात्रा को सुचारु रूप से सम्पन्न करने में उसे न जाने कितने प्राणधारियों से सम्पर्क करना होता है, उनके बीच रहना होता है, विचार-विमर्श करना होता है, एक दूसरे का ख्याल रखना होता है, एक दूसरे के बारे में ज्ञान करना होता है, ऐसा किये बिना वह कुछ नहीं कर सकता है, प्रगति और विकास की सीढ़ियाँ नहीं चढ़ सकता है। लौकिक और भौतिक जगत् में ही नहीं नीति, धर्म, अध्यात्म के क्षेत्र में भी व्यक्ति का जो विकास होता है वह दूसरों का ध्यान रखने में से होता है–

लघुतत्त्वस्फोट ग्रन्थ में **अमृतचन्द्र सूरि** तेरहवें अध्याय (स्तोत्र) की नवम स्तुति में कहते हैं कि –

न कदाचनापि परवेदनां विना, निजवेदना जिन जनस्य जायते।
गजमीलनेन निपतन्ति बालिशा:,पररक्तिरिक्तचिदुपास्तिमोहिता: ।।9/309।।

हे जिन ! पर के ज्ञान के बिना कोई भी आत्मज्ञान को उपलब्ध नहीं होता है। परन्तु अज्ञानी मूढ़ जन ऐसी चेतना का अनुभव करना चाहते हैं जो पर के ज्ञान से सर्वथा रहित हो (क्योंकि वे मूढ़ता से यह विश्वास करते हैं कि पर का ज्ञान उनकी चेतना को दूषित कर देगा) ऐसे मूढ़ उसी प्रकार गिरते हैं जैसे आँखें बन्द कर लेने पर हाथी खाई में गिरता है।

यह तो निश्चय ही बड़ी उत्कृष्ट दशा का कथन है परन्तु मैं सोचता हूँ लोकव्यवहार में भी असल में जो दूसरों का ध्यान रखते हैं, रख सकते हैं उन्हें स्वयं का ध्यान स्वत: बना रहता है। इसके लिए विवेक की परम आवश्यकता है। मनुष्य को विवेकशील माना जाता है कि वह अपनी मन, वचन, काय की शक्ति के माध्यम से ऐसा कोई काम न करे जो अन्य जीव की गति, प्रगति का अवरोधक हो। धर्मप्राप्ति के लिए जीवमैत्री परमावश्यक है।

उसका बोलना, चुप रहना, उठना, बैठना, जागना, सोना इत्यादि कोई भी काम ऐसा न हो जिससे दूसरे को बाधा पहुँचे, उसकी हिंसा हो। धर्म के क्षेत्र में इसे अप्रमत्तता कहा जाता है और व्यवहार में इसे हम सजगता, सावधानी कह सकते हैं। यह चरित्र का एक विशिष्ट गुण है।

हम काम करें - कोई भी काम - पर सावधान रहें अर्थात् **मन** पर विवेक का चौकस पहरा हो। हम यह ध्यान रखें कि हमारे द्वारा किसी की कोई हानि तो नहीं हो रही है, हमारे आचरण से, व्यवहार से, वाणी से, हमारी सोच से किसी को कोई बाधा तो नहीं पहुँच रही है- यदि उत्तर 'हाँ' में है तो यह स्पष्ट है कि हम सावधान नहीं हैं, हमारा विवेक बुझा हुआ है और यदि हम स्व-पर हित का ध्यान रख रहे हैं तो हम सजग हैं, विवेकी हैं, जागृत हैं, दीप्त हैं, प्रदीप्त हैं।

विवेक ही सत् असत् की कसौटी निर्मित करता है। क्या अनुकूल है और क्या प्रतिकूल, इसकी समझ विवेक उत्पन्न करता है। तन-मन-धन की संचित शक्तियों का उपयोग कहाँ और कैसे किया जाना चाहिए, इसका निर्णय विवेक ही करता है। अभिप्राय यह है कि हमारे साहस-दु:साहस, सक्रियता-उदासीनता, यानी प्रत्येक चेष्टा पर विवेक का सजग पहरा हो यानी उसे ऐसे ही **कार्यों में** प्रवृत्त किया जाए जो जनमंगल के हों, समाज के कल्याण के हों- रचनात्मक हों - विनाशात्मक नहीं। विधेयात्मक हो-विध्वंसात्मक नहीं।

मनुष्य के पास पारस्परिक व्यवहार के लिए एक दूसरी शक्ति है- उसकी **वाणी**-भाषा। यथासम्भव हमें विवेकपूर्ण संतुलित, संयत और शिष्ट भाषा का उपयोग करना चाहिए ताकि सामने वाले के पास कोई गलत सन्देश न जाए। इस प्रकार विवेकपूर्ण सोच, विवेक समन्वित वाणी और विवेकमय क्रिया करने वाली आत्मा निश्चित ही अपनी विकास यात्रा को सहज, स्वाभाविक और रम्य बना सकेगी।

पूज्य **आर्यिका विज्ञानमती माताजी** ने अपनी इस कृति **विवेक मञ्जूषा** में यही बात बलपूर्वक बार-बार कही है कि हम अपनी प्रत्येक क्रिया का सम्पादन करते समय अपने विवेक को चौकस-सावधान रखें ताकि हिंसादि

पापों से बच सकें। माताजी की प्रेक्षण (आब्जर्वेशन) शक्ति विशिष्ट है। सम्पूर्ण पुस्तक पूर्णत: स्वानुभव के आधार पर रची गई है। पढ़ते समय स्वयं पाठक को इस बात का अनुभव होगा कि पूज्य माताजी ने प्रत्येक छोटी-बड़ी क्रिया को करते समय कितनी सावधानियाँ बरतने के लिए आगाह किया है। गृहस्थ भी मोक्षमार्गस्थ होता है, वह यदि थोड़ी-सी सावधानी बरते, अपने विवेक का उपयोग करे तो घर-धन्धे के आरम्भ से उत्पन्न होने वाले कितने ही पापों से बच सकता है। लोक में कहावत भी है कि धन्धा हम करें पर वह अन्धा न हो। विवेक की उसकी आँखें हों।

प्रारम्भ में 'विवेक' शब्द की व्युत्पत्ति और उसके अर्थ की सामान्य विवेचना सहित इसके आगमिक लक्षण-प्रायश्चित्त का एक भेद, की व्याख्या की गई है। अनन्तर दैनन्दिन जीवन में आवश्यक रूप से होने वाली विविध क्रियाओं के सम्पादन में विवेकपूर्ण सजगता-सावधानी बरतने की सलाह दी गई है। अनुक्रमणिका देख कर ही विषयक्षेत्र के विस्तार का अनुमान लग सकता है। पुस्तक केवल सिद्धान्त रूप में नहीं लिखी गई है अपितु पूज्य माताजी ने व्यावहारिक जीवन में प्रत्यक्ष रूप से घटित घटनाओं का रोचक विवरण देकर इसे विश्वसनीय और अनुकरणीय बना दिया है। पाठक गण यदि कार्य सम्पादन में उपयोगपूर्वक इन सावधानियों को अपनायेंगे तो निश्चित ही अपना जीवन समुन्नत पायेंगे। मैं विवेकी पाठकों से ऐसी ही अपेक्षा रखता हूँ।

मैं पूज्य माताजी को इस सुन्दर कृति के प्रणयन के लिए हार्दिक साधुवाद समर्पित करता हूँ और आपके श्रीचरणों में सविनय वन्दामि निवेदन करता हूँ। संघस्थ सभी आर्यिकावृन्द के श्रीचरणों में सादर वन्दामि।

सुरुचिपूर्ण कम्प्यूटरीकरण हेतु **निधि कम्प्यूटर्स** के **डॉ. क्षेमंकर** को धन्यवाद अर्पित करता हूँ।

सम्पादन-प्रस्तुतीकरण में रही भूलों के लिए सबसे सविनय क्षमाप्रार्थी हूँ।

– डॉ. चेतनप्रकाश पाटनी

स्वकथ्य

भारतीय संस्कृति में धर्म करने की परम्परा अनादिकाल से चली आ रही है। धर्म करने की अनेक प्रकार की विधाएँ हैं। भगवान के दर्शन, पूजा-पाठ, माला-जाप, स्वाध्याय, वृत-उपवास, विधान, पञ्च कल्याणक आदि सब धर्म करने की विधियाँ हैं। इनमें से कुछ कार्य व्यक्ति अकेला ही कर लेता है तो कुछ कार्य सामूहिक रूप से किये जाते हैं अर्थात् पञ्च कल्याणक प्रतिष्ठा करवाना, मंदिर बनवाना, साधुसंघ का नगर में वर्षायोग करवाना आदि बड़े कार्यक्रम व्यक्ति अकेला नहीं कर सकता है अर्थात् ये कार्य संगठित होकर ही किये जा सकते हैं। इनके अलावा कुछ ऐसे कार्य होते हैं जो घर के कार्य माने जाते हैं। धन कमाने, खाने, बनाने, सम्हालने आदि कार्य जिनको लौकिक जन पाप के कार्य ही मानते हैं, जिनको करते हुए व्यक्ति सोचता है कि हमने पूरे दिन पाप ही किया है, क्या करें हमें तो धर्म करने का अर्थात् माला जाप पूजा स्वाध्याय आदि धार्मिक कार्य करने का समय ही नहीं मिलता है। उनका ऐसा सोचना/कहना किसी अपेक्षा सही है, क्योंकि वास्तव में गृहस्थी के कार्य करने में पाप हो जाते हैं लेकिन हमारे आचार्य भगवन्तों ने आगमग्रन्थों में दो प्रकार के धर्म का विवेचन किया है। इसमें से मुनिधर्म को साक्षात् तथा गृहस्थ धर्म को भी परम्परा से मोक्ष का कारण बताया है। गृहस्थ धर्म का पालन घर में झाड़ू लगाना, भोजन बनाना, चूल्हा जलाना, पानी भरना, कपड़े धोना-निचोड़ना सुखाना आदि करते हुए किया जाता है। इन कार्यों को करते हुए भी व्यक्ति यदि विवेक रखे, अहिंसा धर्म जो सभी धर्मों का मूल है, उसकी रक्षा करता रहे तो धर्म के फल को प्राप्त कर सकता है। इसी ''विवेक पूर्वक कार्य करने रूप धर्म'' पर ही इस पुस्तक में संक्षेप में प्रकाश डाला गया है।

लेखन की प्रेरणा :

वी. नि. सं. 2536 में हम लोग पथरिया, सागर (म.प्र.) में रुके हुए थे। मध्याह्न काल में नगर की बहू-बेटियाँ एवं कुछ वृद्ध महिलाएँ उपदेश सुनने के लिए आती थीं। एक दिन सतना से धर्मात्मा श्रेष्ठी श्री निर्मलचन्दजी सर्राफ का बेटा एवं छह बहिनों का इकलौता भाई **पीयूष (लप्पू)** अपनी शादी के बाद पहली बार अपनी धर्मपत्नी श्रीमती नमृता के साथ दर्शन करने आया था। 60-70 महिलाएँ उपदेश सुन रही थीं, वह भी आकर उपदेश सुनने बैठ गया। उसे देखकर मुझे आश्चर्य हुआ कि आज इस निकृष्ट पंचम काल में जहाँ भौतिकता की चकाचौंध में नई

पीढ़ी के साथ-साथ वृद्ध लोग भी बहते जा रहे हैं, बहते हुए दिखाई देने लगे हैं, वहाँ भी/ ऐसे काल में आज धर्म जीवित है; धर्म जीवित रह सकता है; आज नई पीढ़ी, उसमें भी धनाढ्य परिवार के बच्चे व्यसनों से बचकर धर्म कर सकते हैं। इतनी महिलाओं के बीच बैठकर एक नौजवान, जिसकी नई-नई शादी हुई है, धर्म सुनने/समझने की रुचि रख सकता है। उपदेश सुनने के बाद वह मेरे पास आकर बोला-''माताजी! आप इन सब बातों को एक पुस्तक में संकलित कर दें तो हमारे जैसे गृहस्थ के जंजाल में फँसे हुए लोगों को भी धर्म का मार्ग मिल सकता है। आपका उपदेश सुनकर लगा कि हम लोग तो अविवेक के कारण पूरे दिन पाप ही करते हैं। हमें तो पता ही नहीं है कि हम पाप भी कर सकते हैं क्योंकि मुझे तो अब तक विश्वास था कि भगवान की पूजा-अभिषेक करना, साधुओं को आहार देना, उनके प्रवचन सुनना आदि कार्य करने वाला बड़ा धर्मात्मा होता है लेकिन आज आपकी बातें/उपदेश सुनकर लगा कि नहीं, मैं भ्रम में हूँ। वास्तव में, धर्मात्मा तो विवेकपूर्वक कार्य करने वाला है। आप मेरी विनती स्वीकार कीजिए। इन सबको एक पुस्तक में लिखकर हम पर अनुग्रह कीजिए।'' उसका यह निवेदन, प्रार्थना इस पुस्तक के संकलन का कारण बना। सच में ऐसी भव्यात्माओं से ही पंचम काल के अन्त तक धर्म टिका रहेगा। उसका जीवन सुखमय एवं विवेकमय हो, उसकी ऐसी ही धार्मिक भावनाएँ हमेशा बनी रहें, यही आशीर्वाद तथा उसके प्रति सद्भावनाएँ हैं। उसकी भावना के अनुसार सब लोग इस '**विवेक मञ्जूषा**' को पढ़कर विवेक पूर्वक कार्य कर पापों से बचें। सबके दु:खों का क्षय हो, कर्मों का क्षय हो, बोधि की प्राप्ति हो, समाधि पूर्वक मरण हो और जिनगुण सम्पत्ति प्राप्त हो, इसी भावना के साथ....।

'विवेक मञ्जूषा' एवं 'अनर्थदण्ड' में अन्तर :

'**विवेक मञ्जूषा**' यह नाम पढ़कर किसी के भी मन में यह प्रश्न उठ सकता है कि '**अनर्थदण्ड क्या**' अथवा अनर्थदण्ड नहीं करना और विवेकपूर्वक काम करने में क्या अन्तर है? एक ही बात तो है कि बिना प्रयोजन के काम नहीं करना, बिना प्रयोजन नहीं सोचना /बोलना आदि क्योंकि बिना प्रयोजन की चेष्टाओं से पाप का बन्ध होता है और बिना प्रयोजन के कार्य नहीं करने से भी व्यक्ति पापों से बच जाता है। यह सत्य है कि दोनों में व्यक्ति पापों से बचता है। स्थूल दृष्टि से देखा जाय तो दोनों में कोई अन्तर नहीं लगता है लेकिन दोनों में बहुत बड़ा अन्तर है। अनर्थदण्ड में जिन कार्यों (मन, वचन, कायिक चेष्टाओं) की हमारे जीवन

में आवश्यकता नहीं है, जिनको किये बिना भी हमारा जीवन अच्छी तरह से चल जाता है, चल सकता है फिर भी हम मोह के वशीभूत होकर उन कार्यों को करके पाप की पोटली अपने सिर पर बाँध लेते हैं। विवेक का अर्थ है जिन कार्यों को किये बिना हमारा जीवन चल ही नहीं सकता है उन कार्यों को करते समय प्रमाद, कषाय, अज्ञानता के कारण हम पापों का बन्ध करके अपना भव बिगाड़ लेते हैं। उन कार्यों को हम किस विधि से करें कि हमें पाप का बन्ध न हो और कार्य भी हो जाय अर्थात् **अनर्थदण्ड** में बिना प्रयोजन के पापों से बचने की और **विवेक मंजूषा** में प्रयोजनभूत कार्यों में प्रमाद-कषाय आदि के कारण से होने वाले पापों से बचकर हम कार्यों को किस विधि से करें कि हमारा गृहस्थ/सांसारिक जीवन अच्छी तरह से चले और हम पापों के गर्त से बच जावें, इसी बात की प्रेरणा दी गई है।

मञ्जूषा ही क्यों?

कई लोगों का प्रश्न रहता है कि आखिर आप अपनी पुस्तक के नाम के साथ अधिकतर **'मञ्जूषा'** शब्द क्यों जोड़ते हैं? क्या आपको मञ्जूषा शब्द बहुत अच्छा लगता है या आप अपनी कृति की एक अलग से पहचान बनाने के लिए मञ्जूषा शब्द जोड़ते हैं अथवा मञ्जूषा शब्द का ऐसा कोई विशेष अर्थ है जिससे कृति की गम्भीरता या आकर्षण बनता है?। वास्तव में ये प्रश्न अनुचित नहीं हैं, क्योंकि किसी भी कृतिकार की कृतियों के नाम के साथ एक शब्द को देखकर ऐसे प्रश्न सहज ही उठ सकते हैं और मैं सोचती हूँ समझदार व्यक्ति को ऐसे प्रश्न उठने ही चाहिए। पुस्तक के नाम के साथ मञ्जूषा शब्द जोड़ने का आशय उपर्युक्त विकल्पों में से कुछ भी नहीं है, क्योंकि ये सब बाहर की बातें हैं, आत्मकल्याण के क्षेत्र में इन सबसे कोई प्रयोजन की सिद्धि नहीं है। अधिकतर पुस्तकों के साथ मञ्जूषा शब्द जोड़ने का एक ही कारण है- हमारे बड़े माताजी **(आर्यिका श्री विशालमती माताजी)** को मञ्जूषा शब्द बहुत अच्छा लगता था। उनकी अल्प वय में ही समाधि हो गई। वे मुझे अकेली सी (उनकी समाधि के समय आर्यिका रूप में मैं और समाधि की तरफ अग्रसर वृद्ध आर्यिका विद्युत्मती माताजी) छोड़कर चले गये। उन्होंने मेरा जो उपकार किया उसको मैं किसी तरह नहीं चुका सकती। उन्हीं की स्मृति में उनका प्रिय 'मञ्जूषा' शब्द पुस्तक के नाम के साथ जोड़कर मैं उनके प्रति अपनी कृतज्ञता का निर्वाह करने की कोशिश करती हूँ। इत्यलम्। शुभम् भूयात्।

- आर्यिका विज्ञानमती

विवेकी गुरु माँ

राजस्थान की वीरता-शूरता पूर्ण पावन पुनीत वसुन्धरा अनेक इतिहासों की जननी है। अनेक संस्कृतियाँ इसकी गोद में पल्लवित हुई हैं, सभ्यताएँ, शिष्टताएँ प्रस्फुटित हुई हैं और चैतन्य गौरवमयी गाथाएँ कण-कण में गुंजन करती रहती हैं। वह गुंजन चाहे किसी भी क्षेत्र में हो राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक... और तो और मात्र मानव के कल्याण के लिए ही नहीं, जीव मात्र के कल्याण के लिए भी सर्वस्व न्यौछावर करने वाले महापुरुषों की जन्मदात्री राजस्थान की यह भूमि अपने आँचल में अनेकानेक आदर्श विभूतियों को सँवारकर जगत् को उनकी सुरभि से सुगंधित कर रही है। सुरभि प्रसारित करने वाली ऐसी विभूतियों में से एक हैं - **पू. आर्यिका श्री विज्ञानमती माताजी।**

आपका जन्म उदयपुर जिले के भिण्डर ग्राम में श्रेष्ठी श्री बालूलाल हाथी की धर्मपत्नी श्रीमती कमला देवी की गोद में आसोज (कुँवार) सुदी पंचमी को हुआ। आपकी बाल लीलाओं को देखकर पितामह ने लीला नाम से अलंकृत किया। बचपन से ही माँ ने अहिंसापूर्ण विवेकवर्धक संस्कारों से संस्कारित किया। अनन्तर उन संस्कारों को सुदृढ़ किया पूज्य **आचार्य शिवसागरजी महाराज** के उपदेशों ने, आचरण ने, सान्निध्य ने।

कहा जाता है कि सभी क्षमताएँ पुरुषार्थ और भाग्य पर निर्भर रहती हैं। इसमें भी पुरुषार्थ को प्रधान माना गया है। जहाँ पुरुषार्थ सही दिशा की ओर होता है वहाँ लक्ष्य की प्राप्ति अवश्य होती है। विपदायें ही सौख्य सम्पदा को प्राप्त कराने में कारण बनती हैं। हुआ भी ऐसा ही जहाँ लीला के मन में आर्यिका बनकर आत्मकल्याण करने की भावना थी, परंतु अपने संकोची स्वभाव के कारण माँ-बापू से कुछ कह नहीं पायी और उन्होंने हाथ पीले करके अपना कर्त्तव्य पूरा कर दिया। भोगों के गृहवास में जाकर भी आपका वैराग्य भाव बना रहा। गृहस्थी के कीचड़ में फँसकर भी आप कीचड़ से लथपथ नहीं हुईं तभी तो **आचार्यकल्प विवेकसागरजी महाराज** के वर्षायोग का सुनहरा अवसर पाकर पुरुषार्थ करना शुरू कर दिया। लगभग 5 माह तक उनका उपदेश सुनकर अंतरंग धारणा दृढ़ बना ली कि अब मैं इनके साथ ही जाऊँगी। लेकिन कर्म-रेखा ने बाधक बनकर तब नहीं जाने दिया। पुन: पुरुषार्थ तीव्र किया और लगभग 10-12 माह बाद आप गुरुवर के चरणों में पहुँच गयी। गुरुवर की

पारखी दृष्टि ने हीरे को परख लिया और 2 फरवरी, 1985 को कूकनवाली में उसे तराश भी दिया और बना दिया लीला को **आर्यिका विज्ञानमती।**

आर्यिका होकर आपने निरंतर शास्त्र स्वाध्याय, आगम का चिंतन, मंथन, मनन करना ही जीवन बना लिया और जो संस्कार (अहिंसा और विवेक के) बचपन में मिले थे, उनको पुष्ट कर लिया गुरुवर की चर्या से, उपदेश से, तभी तो आर्यिकाश्री की दृष्टि हर क्षण हर समय ''अहिंसा का पालन कहाँ-कहाँ कर सकते हैं, कैसे कर सकते हैं और श्रावकों को भी किस प्रकार पाप से बचा सकते हैं'' इसी विषय पर लगी रहती है।

हम धर्माचरण करके भी पाप से नहीं बच पायें तो धर्म करने का प्रयोजन क्या रहा, अत: धर्म का सही फल प्राप्त हो, हम पाप से बचें, आत्म-कल्याण के मार्ग में आगे बढ़ें; इसके लिए आवश्यक है बुद्धि को जागृत करके विवेक से कार्य करने की। गृहस्थ में रहकर खाना-पीना, सोना-चलना, कमाना-बनाना आदि आरम्भजनक कार्य करने तो पड़ेंगे, उनमें हिंसा भी होगी। पर हम उन्हें करते समय थोड़ा विवेक जागृत कर लें तो कार्य करते हुए भी पाप से बच सकते हैं। इसी भावना से भावित होकर पू. आर्यिका श्री ने **'विवेक मंजूषा'** कृति का सृजन किया है।

मुझे विश्वास है कि पूर्व कृतियों की भाँति पूज्य आर्यिकाश्री की यह कृति भी पाठकों के मन को लुभायेगी और उन्हें पतन के गर्त से निकालकर आत्मोन्नति के शिखर पर ले जायेगी अर्थात् साक्षात् पाप से बचाकर पुण्य प्राप्त करायेगी और परम्परा से मोक्ष को प्राप्त करने में साधक बनेगी।

सम्पादन कार्य में सिद्धहस्त **डॉ. चेतनप्रकाशजी पाटनी, जोधपुर** ने ही पूर्व कृतियों की श्रृंखला में इस कृति का भी सम्पादन किया है। आपका सम्पादन कार्य अनुभव की पगडण्डी से चलकर मंजिल तक ले जाता है। उन्हें गुरु माँ का शुभाशीष, वे अपने जीवन में विवेक की पूर्णता प्राप्त कर कैवल्य सम्पदा के धनी बनें।

अंत में 3 कम नौ करोड़ मुनिवरों के चरणों में अनंतों नमन करती हुई प्रार्थना करती हूँ कि हे मुनिवर! मेरी आत्मा भी विवेक की पूर्णता को प्राप्त करे....।

- आर्यिका आदित्यमती (संघस्थ)

अनुक्रम

- मंगलाचरण 13
- विवेक शब्द की व्युत्पत्ति एवं लक्षण 16

रसोई घर में

- पानी कैसे छानें 24
- जीवानी कैसे करें 32
- जीवानी करने का फल 35
- सब्जियों में 41
- आटा छानते समय 54
- वस्तुओं को तलने के बाद 58
- नाश्ता आदि रखते समय 61
- चूल्हा आदि जलाते समय 63

भोजन बनाते समय

- देखकर बनावें 70
- ढक्कन खोलते समय 72
- दाल आदि गलाते समय 72
- सब्जी का पानी कहाँ डालें 74
- रोटी बनाने में 75
- सामान्य-निर्देशन 77
- भोजन करते समय 78
- धृतराष्ट्- अन्धे हुए 81
- उपसंहार 87

धार्मिक अनुष्ठानों में

- मंदिर जाते समय 89
- कैसे वस्त्र पहनकर जावें 91
- चमड़ा पहनकर नहीं जावें 101
- खाली हाथ नहीं जावें 103
- दर्शन करते समय 109
- पंखा नहीं चलावें 110
- मोबाइल बन्द रखें 112
- अभिषेक करते समय 117
- भगवान के चरण छूते समय 127
- गंधोदक के विषय में 127
- पूजा करते समय 131
- द्रव्य चढ़ाने के विषय में 135
- मीटिंग मंदिर में नहीं करें 148
- पाठशाला में 148
- दीपक जलावें तो 150
- धूप चढ़ावें तो 154
- माला के विषय में 157
- जिनवाणी के विषय में 164
- दीक्षा दिवस आदि में 166
- मंदिर की सज्जा में 169
- वरक बनाने का उपकरण 171
- फर्श आदि बनाते समय 172
- कागज का उपयोग 174

अतिथि-संविभाग में

- पड़गाहन में 188
- आहार देते समय 190
- अभक्ष्य नहीं पर अशुद्ध 194
- रात में नहीं बनावें 197
- तीर्थयात्रा करते समय 198
- नियम लेते समय 203

प्रकीर्णक (अन्य-प्रकरण)

- पत्थर आदि हिलते हों तो 212
- किवाड़ादि खोलते समय 215
- मुरब्बे में चुहिया 217
- कपड़े के बैग में साँप 218
- सिर में जुएँ पड़ जावें तो 220
- यदि साँप आदि निकल आवें तो 223
- साँप को मारने से 225
- जीवों को भगाते समय 226
- टी.वी. देखते समय 227
- मोबाइल रखते समय 228
- वस्त्र पहनते समय 230
- कैसे कपड़े पहनें/पहनावें 230
- झाड़ू लगाते समय 232
- कचरा फेंकते समय 232
- पौंछा लगाते समय 235
- छेद हो तो बंद कर दें 238
- औषधि के प्रयोग में 239
- अविवेक से आँखों पर प्रभाव 240
- दवा सम्बन्धी परामर्श 241
- छत एवं फुटपाथ पर 243
- सरिए व्यवस्थित करें 246
- दाल-चावल आदि रखने में 248
- सेल्फ पर सामान रखते समय 250
- बेल्ट आदि खरीदते समय 251
- भोजन खरीदते समय 253
- E नम्बर क्या है 255
- E नम्बर देखने की विधि 255
- जब बाहर जाते हैं 256
- पानी में चींटी आदि गिर जावे तो 257
- पानी भरते समय 258
- घर में मंदिर नहीं बनायें 259
- गेहूँ आदि पिसाते समय 260
- व्यापार करते समय 261
- लोभ नहीं करें 263
- पैसा बैंक में जमा कराने से 266
- पैसा उधार देते समय 267
- उपसंहार 268

॥ श्रीवीतरागाय नमः ॥

मंगलाचरण

(ज्ञानोदय)

वृषभ आदि श्री तीर्थंकर के, चरण-कमल में वन्दन है,
विद्या ज्ञान अरु विवेकगुरु का, कोटि-कोटि अभिनन्दन है।
विवेक उपजे बिना कभी भी, धर्म नहीं हो पाता है,
धर्म मूल यह माना जग में, मोक्ष सौख्य का नाता है ॥1 ॥
भेदज्ञान अध्यात्म अर्थ है, ग्राह्य त्याज्य को जानेगा,
परम्परा से शाश्वत सुख को, विवेकवान ही पायेगा।
विवेक पाने विवेक गुरु की, शिष्या मैं कुछ बात कहूँ,
हर प्राणी में विवेक जागे, यही मात्र बस आज चहूँ ॥2॥

शुद्ध बनने के लिए मैं सर्वोत्तम शरण एवं मंगलमय **सिद्ध परमेष्ठी** भगवान के चरणों में परम भक्ति-भाव से नौ कोटि पूर्वक बारम्बार नमस्कार करती हूँ। भगवान **अरहंत देव** जिन्होंने हमें सिद्ध भगवान तथा अपने शुद्ध आत्म तत्त्व का स्वरूप बताया, जिनकी दिव्य देशना के बिना किसी को भी धर्म मिल ही नहीं सकता है उन **तीर्थंकर भगवान** को/**सयोग केवली भगवन्तों** के पदारविन्द में मैं कोटि-कोटि वन्दन करती हूँ। मैं **भगवान महावीर** स्वामी की, जिनके शासन में हमें धर्म करने की विधि प्राप्त हुई है, शत-शत बार वन्दना करती हूँ। उन सर्व **गुरुओं** को भी मैं नमोऽस्तु करती हूँ जिन्होंने अपनी साधना के अमूल्य समय में से समय निकालकर धर्म बताने के लिए शास्त्रों का लेखन करके हमें कृतकृत्य किया है। मैं वर्तमान में भवसागर से पार होने के लिए सर्वोत्तम नौका स्वरूप **जिनवाणी माँ** की भी अनन्त-अनन्तशः वन्दना करती हूँ। मैं **आचार्य गुरुवर श्री विद्यासागरजी महाराज, दीक्षा गुरु आचार्यकल्प स्वर्गीय गुरुवर श्री विवेकसागरजी महाराज** को नमन करती हूँ।

हमें दैनिक कार्यों में /धार्मिक अनुष्ठानों में किस प्रकार विवेक रखना चाहिए इसके बारे में मुझमें परम पूज्य **चारित्र चक्रवर्ती आचार्य गुरुवर श्री 108 शान्तिसागरजी महाराज** के पट्ट शिष्य **श्री 108 आचार्य वीरसागरजी महाराज** के पट्ट शिष्य **आचार्य श्री 108 शिवसागरजी महाराज** ने धर्म एवं विवेक के संस्कार डालकर मुझे मानों वट के समान धर्म का महावृक्ष बनाने के लिए एक बीज बोया था। उन्हीं के उपदेशानुसार माँ ने मुझे कई बार और कई स्थानों पर विवेक से काम करना सिखाया था। उस समय मैं कितना समझ पाई थी और कितना विवेक रख पाई थी यह तो मुझे याद नहीं है लेकिन आज भी मुझे वे बातें याद आती हैं और उन बातों से मुझमें विवेक जागृत होता है। आचार्य महाराज के वर्षायोग के पश्चात् समय-समय पर मुझे सन्तों का समागम एवं आशीर्वाद मिलता रहा। सभी सन्तों ने मुझे विवेक से कार्य करना सिखाया। वि.सं. 2039 में मुझे विवेक की साक्षात् मूर्त्ति श्री **108** आचार्यकल्प परम **पूज्य विवेकसागरजी महाराज** के चरणों का सान्निध्य मिला। सच में उन्होंने हमें जितना बोलकर विवेक नहीं सिखाया उतना मौन से, अपनी चर्या से सिखा दिया था। उन्हीं के साथ ब्रह्मचारिणी **बहिन कुसुम दीदी जी** एवं **कंचन दीदी जी** गुरुवर के साथ रहकर विवेक पूर्वक कार्य करती थीं उन्होंने भी मुझे विवेक सिखाया। उन सब संतों के द्वारा सिखाये गये विवेक को यद्यपि मैं पूर्ण रूप से अपने जीवन में नहीं उतार पाई और न ही याद रख पाई, फिर भी मुझे जितना याद है, जितना अनुभव में आता है उसमें से मैं थोड़ी सी विवेक पूर्ण बातें यहाँ लिखकर उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करना चाहती हूँ। मुझे विश्वास है कि इसे पढ़कर धर्मेच्छु, मुमुक्षु जीव विवेकपूर्वक कार्य करेंगे। इस पुस्तक को पढ़कर एक कार्य में भी विवेक उत्पन्न हो जावे अथवा पाप के प्रति हेय बुद्धि उत्पन्न हो जावे तो जिनेन्द्र भगवान के द्वारा बताया हुआ मार्ग इस धरती पर जीवित रहेगा और यही इस पुस्तक का प्रयोजन है। विवेक के बारे में बताते हुए यदि मैं कहीं चूक जाऊँ अथवा गलत बता दूँ तो विवेकी जन क्षमा करें एवं विवेकपूर्वक कार्य करें।

भूमिका :

चौरासी लाख योनियों से पार होकर अजर-अमर पद को पाने का इच्छुक यह संसारी प्राणी धर्म करने की बहुत कोशिश करता है, धर्म के आयतनों में जाता है, गुरुओं की सेवा करता है, संतों का उपदेश सुनता है, पूजा-पाठ,विधान, माला-जाप आदि धार्मिक अनुष्ठान करता है, पंच कल्याणक, वेदीप्रतिष्ठा आदि बड़े-बड़े आयोजनों में सहभागी बनता है, आहारदान, वैयावृत्ति, जिनवाणी की सेवा आदि अनुष्ठान करता है, परोपकार, दान, निर्धन जनों को तीर्थयात्रा आदि करवाकर अपनी चंचला लक्ष्मी का सदुपयोग करता है लेकिन विवेक के अभाव में धर्म नहीं कर पाता है। हाँ, यह जितने भी धार्मिक कार्य करता है उसमें इसे थोड़ा पुण्य तो मिलता है। उस पुण्य से इसे स्वर्ग मिल जाता है, थोड़े सांसारिक भोग मिल जाते हैं परन्तु धर्म का फल भोग नहीं होता, धर्म का फल तो पूर्वोपार्जित पाप कर्मों का क्षय होना, भविष्य के लिए पापों का बन्ध नहीं होना है तथा ऐसे पुण्य का आस्रव होना जिससे हमें धर्म करने की सुविधाएँ मिलें ; धर्म करने के भाव उत्पन्न हों, कहा गया है। यदि हम थोड़ा-सा विवेक रखें, थोड़ा-सा सोच-समझकर काम करने लगें तो हमें सही फल मिल सकता है। बिना श्रम-मेहनत के, बिना पैसा खर्च किये, बिना समय खर्च किये हम धर्म कर सकते हैं।

यह भी कोई जरूरी नहीं है कि धर्म मात्र मंदिर या साधु के चरणों में ही किया जाता है। धर्म तो घर में भी किया जा सकता है। आचार्य महाराज कहते हैं कि श्रावकाचार का पठन-पाठन भले ही पुस्तक से होता है, स्वाध्याय के समय होता है लेकिन उसका प्रेक्टिकल तो गृहस्थ के घर में होता है, घर के कार्यों को करते समय होता है, धन अर्जन करते समय होता है। रोटी बनाना, पानी भरना, सब्जी सुधारना, दीपक-लाइट-गैस आदि जलाना, झाडू लगाना, पीसना-कूटना आदि हजारों कार्य घर में होते हैं। गृहस्थ को ये सब कार्य करने पड़ते हैं। गृहस्थ का इन कार्यों को किये बिना काम चल ही नहीं सकता। इन सब कार्यों को करने में अनिवार्य रूप से हिंसा होती है। फिर भी यदि कोई गृहस्थ इन सब कार्यों को करते समय विवेक रखे, हिंसा से बचने की कोशिश करे तो थोड़ी हिंसा से तो यथाशक्य बच ही सकता है। इन कार्यों में जो जितना

विवेक रखता है उसको उतने ही धर्म का फल मिलता है।

हमारे गुरुओं ने हमें विवेक सिखाने के लिए **रत्नकरण्डक श्रावकाचार** आदि अनेक श्रावकाचारों के माध्यम से श्रावक धर्म का उपदेश दिया। हमारे श्रमण गुरुवर हमें हर उपदेश में विवेक रखने की प्रेरणा देते हैं। हम उनका उपदेश सुनकर विवेक रखने की कोशिश भी करते हैं किन्तु इतना विवेक नहीं रख पाते हैं जितना हमें रखना चाहिए। जिससे हममें श्रावकपना प्रकट हो सके। अस्तु, हम धर्म करने के लिए विवेक क्या है, किन-किन स्थानों पर हमें किस प्रकार विवेक रखना चाहिए, इस सम्बन्ध में यहाँ थोड़ा-सा विचार करते हैं।

विवेक शब्द की व्युत्पत्ति और लक्षण

(1) विवेक शब्द की व्युत्पत्ति विच् (पृथक् करना, जुदा करना, भेद करना) धातु में वि उपसर्ग पूर्वक घञ् प्रत्यय के योग से हुई है। वि+विच्+घञ्- वस्तु स्वरूप का ठीक-ठीक निश्चय करना। प्रकृति और पुरुष को जुदा-जुदा समझना (भेदज्ञान)। विवेक से अभिप्राय है - 1. भली-बुरी बातों को सोचने-समझने की शक्ति या ज्ञान, 2. मन की वह शक्ति जिसमें भले बुरे का ठीक और स्पष्ट ज्ञान होता है। अंग्रेजी में इसका पर्याय है- DISCRETION, PRUDENCE, CONSCIENCE.

(2) **देवादेवविचारो यः, पात्रापात्रे शुभाशुभे।**
गुणागुणे च शास्त्रादौ, विवेकः सोऽभिधीयते ।।317।।सु.र.

देव (सच्चे देव), अदेव (कुदेव), पात्र (सच्चे गुरु), अपात्र (जो मोक्षमार्ग में स्थित नहीं है), शुभ (पुण्य), अशुभ (पाप), गुण (जो आत्मा का हित करने वाले हैं), अगुण-दोष (जो जीवन के विनाशक हैं) और शास्त्र (जिनेन्द्र भगवान के द्वारा कथित आगम) आदि के विषय में जो विचार है, वह विवेक कहलाता है।

(3) **विवेको भेदविज्ञानं देहदेहस्थयोर्ध्रुवम्।**
विवेकः कथ्यते या च सारासाराज्ञता नृणाम्।।

शरीर और शरीर में स्थित आत्मा में जो भेदविज्ञान है, वह विवेक है तथा मनुष्यों का जो सारभूत और असारभूत का ज्ञान है, वह भी विवेक कहलाता है।

विवेक कल्पवृक्ष है :

विषयविरतिमूलं सत्तपः स्कन्धबन्धं,
सकलविनयशाखं ज्ञानविज्ञानपत्रम्।
विमलसमितिपुष्पं मुक्तिनारीफलाढ्यं,
भज निकृतकलङ्कं कल्पवृक्षं विवेकम्॥

हे भव्य ! तू विवेक रूप उस कल्पवृक्ष की सेवा कर, जिसका मूल विषयों से विरक्ति है, जिसका स्कन्धबन्ध सम्यक्तप है, जिसकी शाखाएँ सब प्रकार की विनय है, जिसके पत्ते ज्ञान-विज्ञान हैं, जिसके पुष्प निर्दोष समितियाँ हैं, जो मुक्ति स्त्री रूपी फल से सहित है तथा कलङ्क रहित है।

विवेक बिना सब व्यर्थ :

लक्ष्मीर्बुद्धिकृतज्ञतादिसुगुणा वृत्तं च दानं तपो,
वैराग्यं च जिताक्षता सुपठनं शास्त्रस्य देवार्चनम्।
निःसङ्गत्वमथो दयानिपुणता ध्यानं विवेकं बिना,
सारासारसमग्रचिन्तनमहो सर्वं वृथा प्राणिनाम्॥

अर्थ : विवेक के बिना प्राणियों के लक्ष्मी, बुद्धि, कृतज्ञतादि उत्तम गुण, चारित्र, दान, तप, वैराग्य, जितेन्द्रियता, शास्त्र का पढ़ना, देवपूजा, निर्ग्रन्थता, दया, निपुणता, ध्यान और सारभूत एवं असारभूत वस्तुओं का चिन्तन-यह सभी कुछ व्यर्थ है।

मानुष्यं सत्कुले जन्म लक्ष्मीर्बुद्धिः कृतज्ञता।
विवेकेन बिना सर्वं सदप्येतन्न किञ्चन॥पं.पं.विं.4/379॥

मनुष्य पर्याय, उत्तम कुल में जन्म, लक्ष्मी, बुद्धि तथा कृतज्ञता-ये सब विवेक के बिना, होते हुए भी कुछ नहीं हैं अर्थात् विवेक के अभाव में ये सार्थक नहीं हैं।

छन्दो व्याकरणं निघण्टु गणितं तर्कागमो ज्योतिषं,
शिक्षासूत्रविकल्पवैद्यकमलं काव्यं पुराणं तथा।
चम्पूनाटकनाटिका प्रहसनं कण्ठीकृतं प्रायशः,
स्याच्चैतच्च विवेकबीजरहितं सर्वं हि भारायते॥

जो तूने छन्द, व्याकरण, निघण्टु, गणित, न्यायशास्त्र, ज्योतिष, शिक्षासूत्रों के विकल्प, वैद्यक, काव्य, पुराण, चम्पू, नाटक, नाटिका और प्रहसन को प्राय: कण्ठ किया है वह सब यदि विवेक रूपी बीज से रहित है तो भार के समान ही है।

विवेक के अङ्कुर :

सत्सन्तोषसुखं यदिन्द्रियदमो यच्चेतस: शान्तता,
यद्दीनेषु दयालुता यद्वच: सत्यामृतस्यन्दनम्।
शौर्यं धार्यमनार्यसङ्गविरतिर्या सङ्गति: सज्जनै-
रेते ते परिणामसुन्दरतरा: सर्वे विवेकाङ्कुरा:।।

यह जो तुझे सन्तोष रूप उत्तम सुख प्राप्त हुआ है, जो इन्द्रियदमन है, चित्त की शान्तता है, दीनजनों पर दयालुता है, सत्य रूप अमृत को झराने वाला वचन है, धारण करने योग्य शूरवीरता है, अनार्य पुरुषों की संगति का अभाव है और सज्जनों के साथ सङ्गति है, ये सब तेरे फलकाल में अत्यन्त श्रेष्ठ विवेक के अङ्कुर हैं।

विवेक : अन्तरङ्ग तप

द्वादश तपों में से आभ्यन्तर तप **प्रायश्चित्त** के भेदों के अन्तर्गत 'विवेक' एक अन्तरंग तप भी है।

श्री धवल, पुस्तक 13 के अनुसार गण, गच्छ, द्रव्य और क्षेत्र आदि से अलग करना विवेक नाम का प्रायश्चित्त है।

जिस-जिस पदार्थ के अवलम्बन से अशुभ परिणाम होते हैं, उनको त्यागना अथवा उनसे स्वयं दूर होना यह विवेक तप है। अतिचार के कारणीभूत ऐसे द्रव्य, क्षेत्र और कालादिक से मन से पृथक् रहना अर्थात् दोषोत्पादक द्रव्यादिकों का मन से अनादर करना, यह विवेक है। **(भ.आ.)**

किसी मुनि का हृदय किसी द्रव्य, क्षेत्र, अन्न, पान अथवा उपकरण में आसक्त हो और किसी दोष को दूर करने के लिए गुरु उन मुनि को वह पदार्थ प्राप्त न होने दे, उस पदार्थ को उन मुनि से अलग कर दे तो वह **विवेक** नाम का **प्रायश्चित्त** कहलाता है। **(चा.सा.)**

अथवा अपनी शक्ति को न छिपा कर प्रयत्नपूर्वक जीवों की बाधा दूर करते हुए भी किसी कारण से अप्रासुक पदार्थ को ग्रहण कर ले अथवा जिसका त्याग कर चुके हैं, ऐसे प्रासुक पदार्थों को भी भूल कर ग्रहण कर ले और फिर स्मरण हो आने पर उन सबका त्याग कर दे तो वह भी **विवेक प्रायश्चित्त** कहलाता है। **(रा.वा. 9/22)**

इन्द्रियविवेक, कषायविवेक, भक्तपानविवेक, उपधिविवेक और देहविवेक ऐसे विवेक के पाँच प्रकार पूर्वागम में कहे गये हैं। अथवा शरीर विवेक, वसतिसंस्तर विवेक, उपकरणविवेक, भक्तपान विवेक और वैयावृत्त्यकरण विवेक ऐसे भी पाँच भेद कहे गये हैं। **(सा.धर्मा.)**

इन पाँच भेदों में से प्रत्येक के द्रव्य और भाव ऐसे दो-दो भेद हैं।

जिस दोष के होने पर उसका निराकरण नहीं किया जा सकता, उस दोष के होने पर यह विवेक नाम का प्रायश्चित्त होता है। **(श्री धवल, 13)**

जीवन का कोई भी पक्ष हो - सिद्धान्त या व्यवहार-सर्वत्र विवेक अपरिहार्य है। मोटे तौर पर इसे यों समझ सकते हैं-

अध्यात्म :

(1) **हेय**-छोड़ने योग्य, **उपादेय** - गृहण करने योग्य। इनमें से हेय को छोड़ना और उपादेय को गृहण करना आध्यात्मिक विवेक है। प्रश्नोत्तर रत्नमालिका में कहा भी है- **''भगवन् किमुपादेयं गुरुवचनं, हेयमपि च किमकार्यम्''** हे भगवन्! संसार में उपादेय क्या है? गुरुओं के वचन उपादेय है। हेय क्या है? अकार्यम्, जो जीवन को पतित करने वाले हैं, शारीरिक मानसिक, व्यावहारिक, आर्थिक दृष्टि से हानिकारक हैं। इहलोक और परलोक को नष्ट करने वाले हैं वे सभी अकार्य हैं, हेय हैं।

(2) आपत्ति के समय भी अपने वृत-नियम, संयम, न्याय-नीति आदि सत्पथ से च्युत नहीं होना ही वास्तव में विवेक है।

(3) प्रतिसमय पाप परिणति से दूर रहना विवेक है।

(4) परोपकार करते हुए भी अपने आत्मकल्याण को नहीं भूलना विवेक है।

(5) लौकिक भोगों की आकांक्षा को छोड़कर सच्चे देव-शास्त्र-गुरु की आराधना करना तथा सभी विकल्पों से ऊपर उठकर अपनी आत्मा की आराधना

करना विवेक है।

(6) किसी के द्वारा दोष बताये जाने पर उद्विग्न न होकर सुधारने की कोशिश करना विवेक है।

व्यवहार :

(1) जिन कार्यों को करने से दुर्गति नहीं होती है, लोकमर्यादा का पालन होता है, समाज/लोगों के बीच में अपमानित नहीं होना पड़ता है, घर से बाहर निकलते समय कभी मुँह नीचा नहीं करना पड़ता है, आदि व्यावहारिक विवेक है।

(2) जिन कार्यों को करने से इस लोक में इज्जत बिगड़ती है और मरने के बाद दुर्गति होती है ऐसे कार्य नहीं करना विवेक है।

(3) हमारी जिस प्रवृत्ति से लोग कुमार्गगामी बनते हैं उस प्रवृत्ति को छोड़ देना अर्थात् **''यद्यपि शुद्धं लोकविरुद्धं न करणीयं'' ।** अच्छा कार्य भी यदि लोकविरुद्ध है तो नहीं करना ही विवेक है।

(4) समीचीन कार्य में लगने वाली बुद्धि को ही विवेक कहते हैं।

(5) दुराचार से मुख मोड़कर सदाचार में प्रवृत्त होना ही विवेक है।

यद्यपि आध्यात्मिक विवेक सर्वोत्तम है, इसके बिना जीव कभी मोक्षलक्ष्मी को प्राप्त नहीं कर सकता है लेकिन ऐसा विवेक प्रत्येक व्यक्ति में नहीं आ सकता है। जिसमें ऐसा विवेक आ जाता है वह घर में नहीं रह सकता है, वह तो घर छोड़कर संन्यास ले लेता है, उसको तो दुनिया की बातें / कार्य तो बहुत दूर अपने शरीर का भी ध्यान नहीं रहता है। वह शरीर की सुरक्षा करना, सामान्य व्यवस्था करना भी छोड़ देता है, वह तो पाण्डव, गजकुमार, सुकुमाल, सुकौशल आदि के समान निश्चल हो जाता है, ऐसा विवेक सभी लोगों में आ नहीं सकता। इसलिए यहाँ पर उसको गौण करके **व्यावहारिक विवेक** का वर्णन किया गया है।

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह अकेला नहीं रह सकता है इसलिए उसे परिवार बसाना पड़ता है पत्नी/पति, पुत्र-पौत्र के साथ रहना पड़ता है। परिवार के साथ रहने पर सुखपूर्वक जीवन यात्रा चलाने के लिए अनेक उत्तरदायित्वों का निर्वाह करना पड़ता है। इसे कमाना, भोजन बनाना, धोना-

निचोड़ना आदि अनेक कार्य करने पड़ते हैं अथवा इन कार्यों को किये बिना परिवार में रहना असम्भव होता है। इन कार्यों को करते समय यह किस विधि को अपनावे जिससे इसे पाप का बन्ध नहीं हो अथवा कम हो, यह विचारणीय है।

गृहस्थ का मुख्य कार्यक्षेत्र घर, मन्दिर और व्यवसाय या आजीविका स्थल - ऑफिस, दुकान, कारखाना आदि है। एतत् सम्बन्धी विशेष सावधानियों की यहाँ चर्चा की जा रही है -

(1) रसोई घर में :

हम घर में रहते हैं। घर में रहते हुए हमें अनेक कार्य करने होते हैं। उनमें से एक कार्य अति आवश्यक है, वह है रसोई घर का। नहाये-धोये बिना, झाड़ू लगाये बिना, साफ-सफाई किये बिना दिन और सप्ताह भी निकाला जा सकता है लेकिन रसोई घर का काम किये बिना अर्थात् भोजन बनाये बिना एक दिन भी नहीं निकल सकता है, क्योंकि भोजन के बिना हमारा काम-चल ही नहीं सकता है। मेरे अनुमान से भारत के लगभग सभी घरों में भोजन बनता है। कुछ लोग जिनके पास भोजन बनाने का समय नहीं है या जो आलसी हैं अथवा जिनको अपने भावी/अगले भव या वृद्धावस्था तक शरीर को स्वस्थ बनाये रखने का ख्याल नहीं है वे लोग अपने घर पर भोजन न बनाकर ढाबा, होटल, भोजनालय आदि स्थानों से भोजन मंगवाकर अपनी उदरपूर्ति करते हैं, क्षुधा मिटाते हैं। वास्तव में उस भोजन से व्यक्ति की क्षुधा तो मिट जाती है, पेट भर जाता है परन्तु वैसी तृप्ति नहीं होती है जैसी तृप्ति माँ या पत्नी द्वारा बनाये भोजन से होती है क्योंकि माँ और पत्नी भोजन में अलौकिक वात्सल्य, प्रेम का रस भी भर देती हैं। यह रस होटल आदि के भोजन में नहीं आ सकता है। वहाँ प्रेम का नहीं पैसे का महत्त्व रहता है जबकि घर के भोजन में पैसे का नहीं प्रेम का महत्त्व होता है। होटल, ढाबा आदि से मंगवाकर भोजन करने वालों को भी स्वास्थ्य खराब हो जाने पर घर में भोजन बनाने के लिए मजबूर होना ही पड़ता है अथवा यों समझना चाहिए कि होटल आदि का खाते-खाते व्यक्ति बीमार हो ही जाता है, क्योंकि होटल आदि में भोजन परोसते/भेजते समय यही भावना रहती है कि कम-से-कम भोजन भेजना पड़े/परोसना पड़े...। खैर, इससे यहाँ कोई प्रयोजन नहीं है।

भोजन बनाना बड़े आरम्भ का कार्य है। घर में रहते हुए पाँच सूना / महा आरम्भ के स्थान माने गये हैं: (1) चक्की (2) चूल्हा (3) बुहारी (4) परंडा (5) ओखली इसीलिए आचार्य महाराज ने इन्हें अर्थात् चूल्हे आदि को ढककर रखने के लिए कहा है, क्योंकि इनको खुला छोड़ने से कभी भी कोई भी अनजान या नासमझ बच्चा आदि आकर अचानक चूल्हे को जला दे, चक्की को चला दे, झाड़ू से यद्वा तद्वा प्रवृत्ति करे तो चूल्हे आदि में बैठे हुए जीव मरण को प्राप्त हो जायेंगे। उसके साथ अकस्मात्/छुपकर चूल्हा आदि जलाने से जलाने वाले के हाथ आदि भी जल सकते हैं। चक्की में अंगुली आकर कट सकती है, चक्की के पाट के नीचे दबकर वेदना का कारण बन सकती है, झाड़ू के चुभने से खून आदि भी आ सकता है, आँख आदि में लग जाने पर पीड़ा हो सकती है। दूसरी बात इनसे नकारात्मक ऊर्जा उत्पन्न होती है जो हमारे जीवन के लिए दु:खप्रद होती है। तभी तो पुराने जमाने में इनको एक साइड में ऐसे स्थान पर रखा जाता था जो किसी को दिखे नहीं। जैसे-झाड़ू हमेशा किवाड़ के पीछे रखी जाती थी, चक्की (हाथ से चलाने की) को टाट की बोरी आदि से ढककर रखा जाता था...। तीसरी बात इनको देखकर आरम्भ के कार्य करने के ही भाव उत्पन्न होते हैं। व्यक्ति आरम्भ कर पावे या नहीं कर पावे, भावों से पाप का बन्ध तो हो ही जाता है। इतना सब होने के बाद भी अर्थात् ढककर रखने पर भी इनको घर में रखना तो आवश्यक है ही क्योंकि इनके बिना भोजन आदि की व्यवस्था नहीं बन सकती है।

चक्की :

जिसमें गेहूँ, दाल, चावल आदि पीसे जाते हैं। आँवला, जामफल, मूँगफली, तिल आदि की चटनी बाँटी जाती है, ऐसी आटा पीसने की चक्की, खल-बट्टा, मिक्सी, चटनी आदि पीसने की शिला, पत्थर आदि को चक्की कहा जा सकता है।

चूल्हा :

जिस पर भोजन, दूध, सब्जी आदि तैयार किये जाते हैं, पानी गरम किया जाता है, सर्दी से बचने के लिए हाथ-पैर तपाये जाते हैं वे हीटर, रॉड, सिगड़ी, चूल्हा, गैस चूल्हा, अहरा (जिस पर बाटी सेकी जाती है)।

बुहारी (झाड़ू) :

झाड़ू, फूलझाड़ू, नाली साफ करने की झाड़ू आदि वे चीजें जिनके माध्यम से किसी भी स्थान का कूड़ा-कचरा अलग किया जाता है वे सब बुहारी-मार्जनी के अन्तर्गत आ जाती हैं।

परण्डा (जल स्थान) :

जहाँ पानी से भरे बर्तन रखे जाते हैं, बाथरूम, लेटि-न, रसोई घर आदि में घड़े, टंकी, बाल्टी रखे जाते हैं, होदी-टाँका आदि बने हैं वे सब स्थान परण्डा के रूप में गिने जा सकते हैं। सामान्य रूप से जहाँ पीने के लिए शुद्ध पानी से भरे बर्तन रखे जाते हैं वह स्थान परण्डा कहलाता है।

ओखली :

जिससे या जिसमें कूटा जाता है, दाल आदि के छिलके निकालने के लिए धान, दाल आदि कूटे जाते हैं वह हमामदस्ता, ओखल आदि ओखली में गर्भित होते हैं।

इन पाँचों की सहायता से ही भोजन तैयार होता है अथवा घर की पूरी व्यवस्थाएँ चलती हैं। इनके उपयोग में हर क्षण हिंसा होती है। इनमें होने वाली हिंसा को **आरम्भी हिंसा** कहते हैं। घर में रहते हुए आरम्भी हिंसा से व्यक्ति पूर्ण रूप से नहीं बच सकता है। लेकिन विवेक रखकर कुछ पापों से तो अवश्य बच सकता है, हिंसा को कम अवश्य कर सकता है। हमें भोजन बनाते समय क्या-क्या एवं कहाँ-कहाँ, कैसी-कैसी सावधानी रखनी चाहिए उनमें से कुछ सावधानियाँ यहाँ कही जाती हैं–

रसोई घर कहाँ हो?

लगभग प्रत्येक घर में रसोई घर होता है। रसोई घर का हमारे स्वास्थ्य के साथ घनिष्ट सम्बन्ध है, भोजन का शरीर एवं आत्मा पर पूरा प्रभाव पड़ता है। जैसे स्थान, भाव एवं जिस व्यक्ति के द्वारा भोजन बनाया जाता है उसका प्रभाव हमारे शरीर एवं मन पर पड़ता है इसलिए हमारा रसोई घर कैसा है और कैसा होना चाहिए जिससे हमारे अहिंसा धर्म का पालन अच्छी तरह से हो सके। यदि अहिंसा का पालन होगा तो स्वास्थ्य तो अपने आप ही अच्छा रहेगा। अस्तु। कई लोगों के रसोई घर तो ऐसे स्थान पर होते हैं जहाँ सूर्य की किरणों

की बात तो बहुत दूर, सूर्य का प्रकाश तक वहाँ अच्छी तरह नहीं पहुँच पाता है। वे जब भी रसोई घर में काम करते हैं लाइट जलाकर ही करते हैं। लाइट का प्रकाश भले ही बहुत अच्छा हो/तेज हो वह सूर्य के प्रकाश के समान जीवाणुओं की उत्पत्ति को नहीं रोक सकता है और न ही पर्यावरण को शुद्ध कर सकता है और न ही सूर्य की किरणों से भोजन में उत्पन्न होने वाले विटामिन-प्रोटीन को ही उत्पन्न कर सकता है। ऐसे रसोई घर में बने हुए भोजन का भोग करते हुए क्या हम रात्रिभोजन के त्याग को निभा सकते हैं। अंधेरे स्थान पर बनाये गये भोजन में और रात्रि में बनाये गये भोजन में हिंसा की अपेक्षा कोई अन्तर नहीं है। दूसरी बात यदि भोजन बनाते वक्त अचानक बिजली चली जावे तो कैसा लगता है? अंधेरे के कारण कितने जीवों की हिंसा हो सकती है। तीसरी बात ऐसे (अंधेरे) रसोई घर में भोजन बनाकर हम भले ही साधु को अच्छे प्रकाश वाले स्थान पर आहार/भोजन करवावें तो भी हमें पाप का बन्ध तो होगा ही। क्योंकि हमने अँधेरे में या विद्युत् के प्रकाश में भोजन बनाया है। अत: हिंसा से बचने के लिए एवं स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिए भले ही एक कमरा कम बने लेकिन रसोई घर ऐसे स्थान पर ही बनायें जहाँ सूर्य की किरणों का प्रवेश होता हो। यदि इतना नहीं बन सके तो कम-से-कम सूर्य का प्रकाश तो अच्छी मात्रा में पहुँचता हो।

• जलगालन :

संसार में उच्चकुलीन सभ्य लोग पानी छानकर के ही पीते हैं लेकिन पानी छानने का उद्देश्य अलग-अलग होता है। कोई धूल, कंकर, कचरा आदि निकालने के लिए, तो कोई छोटे-मोटे मच्छर-मक्खी आदि को अलग करने के लिए छानते हैं। यही कारण है कि कोई जाली से तो कोई छन्नी से और कोई तो अपनी पहनी हुई साड़ी चुन्नी रूमाल आदि से ही पानी छान लेते हैं। उनके विचार से इनसे पानी छन जाता है और इसीलिए उनको जीवानी नहीं करने पर भी कोई विकल्प नहीं होता है लेकिन जीवानी किये बिना पानी छानने से कोई प्रयोजन ही सिद्ध नहीं होता है अत: पानी छानने की विधि कहते हैं -

पानी कैसे छानें?

कई लोग पानी भरने के पहले घड़े, बर्तनों को बिना छने पानी से धो

लेते हैं। उसके बाद छने पानी से भी धोते हैं लेकिन अनछने पानी से धुले हुए बर्तनों को छने पानी से एक दो बार धो लेने से क्या उनमें अनछने पानी का अंश समाप्त हो सकता है, कदापि नहीं हो सकता। आप दस बार भी उस घड़े को छने पानी से धो लें तो भी उसमें से अनछने पानी का अंश समाप्त नहीं हो सकता। मेरे अनुमान से उस पानी में यदि माइक्रोस्कोप से देखा जावे तो अनछने पानी के समान चलते-फिरते जीव दिख जायेंगे।

कई लोग इतने अविवेक से पानी छानते हैं कि पानी छानते समय जल्दी-जल्दी में अथवा लापरवाही के कारण दो चार गिलास पानी तो ऊपर से ही निकलकर इधर-उधर बह जाता है। कभी जिस बर्तन से पानी डाल रहे हैं उसकी धार में से एक साइड से पानी गिरता रहता है। कोई जब हैण्ड-पम्प से पानी छानते हैं तब घड़े का मुँह छोटा होने से आधा पानी बाहर बहता रहता है। इसी प्रकार कोई बोरिंग का बटन चालू करके एक बाल्टी / घड़ा पानी छानते हैं तो बोरिंग का पाइप मोटा होने से इतना पानी निकलता है कि उसको छानना कठिन हो जाता है। उस समय आधा पानी छनता है और आधा बिना छने ही घड़े में भर जाता है।

कई महिलाएँ/लोग ज्यादा सोला करते हैं। वे हर एक घण्टे में अथवा जब भी पानी पीते हैं छान कर ही पीते हैं। बार-बार पानी छानने से छन्ना पूरा सूख नहीं पाता है जिससे छन्ना चिकना हो जाता है। छन्ने के चिकने होने का अर्थ है कि उसमें काई का अंश आने लगा है। उसमें असंख्यात त्रस जीव उत्पन्न होने लगे हैं। बिना जीव उत्पन्न हुए छन्ना चिकना नहीं हो सकता है और जिस घड़े में से पानी लेकर छान रहे हैं उसी में बार-बार जीवानी (बिलछानी) करने से उस घड़े का पानी खराब (गन्दा) हो जाता है। दूसरे लोगों को उस पानी से ग्लानि आने लगती है।

ज्यादा सोला वाले बार-बार पानी न छानें, एक ही बार पानी छानकर कुनकुना करलें तो भी उसकी छह घण्टे की मर्यादा हो जाती है। वे छह घण्टे तक आराम से उसका उपयोग करके बार-बार पानी छानने के आरम्भ से बच सकते हैं अर्थात् छह घण्टे तक उसमें जीव उत्पन्न नहीं हो सकते हैं। पानी को अच्छा उबाल लें तो वह स्वास्थ्य के लिए भी लाभदायक है और अहिंसाप्रद

भी है।

कई लोग पानी छानने के पहले छन्ने को बिना छने पानी से गीला कर लेते हैं फिर पानी छानते हैं। ऐसा करने से छन्ने में बिना छने पानी का अंश रह जाता है वह अंश छने पानी में मिल जाता है। यह सुनकर प्रश्न उठ सकता है कि फिर छन्ने को किससे गीला करें, क्योंकि पानी छन्ने से ही तो छाना जाता है? इसका उत्तर यही है कि छन्ने को गीला करने की आवश्यकता ही कहाँ है? पानी छानते समय सबसे पहले थोड़ी देर पतली-पतली धार डालें जिससे छन्ना अपने आप गीला हो जायेगा।

कई लोग पानी छानकर छन्ने को बाल्टी पर उल्टा करके उस पर पानी डाल देते हैं। कई लोग जिस प्रकार दूध आदि छानने की छन्नी होती है उतनी बड़ी कपड़े की छन्नी बना लेते हैं। उसमें डबल छन्ना रहता है, उस छन्नी से पानी छानकर छन्नी को उल्टी करके अर्थात् छन्ने को बाहर की तरफ करके पानी डालते हैं। वे सोचते हैं कि उलटे छन्ने पर पानी डाल देने से जीव बाल्टी में गिर जायेंगे। लेकिन वे जीव बाल्टी में न गिरकर छन्ने के चारों तरफ ही बह जाते हैं, जाली के तार में जाकर फँस जाते हैं इसलिए इस प्रकार जीवानी करने से कोई विशेष लाभ नहीं मिलता है। छन्ने को एक हाथ से पकड़कर फैला लें फिर दूसरे हाथ से पतली-पतली धार से इस ढंग से पानी डालें कि पानी बाल्टी में ही गिरे, इधर-उधर नहीं।

कई लोग पानी छानने के लिए नल की टोंटी में थैली या जाली लगा देते हैं। जाली से तो पानी छनता ही नहीं है उससे तो पानी का कचरा अवश्य ऊपर रह सकता है लेकिन जीव तो जाली के घेरों में से निकल ही जाते हैं। थैली यदि पतली है तो उससे छना पानी भी अनछने जैसा ही होता है और छोटे-मोटे कपड़े की थैली बनाकर बाँधने पर पानी छनते समय कहीं ऊपर से तो कहीं आजू-बाजू से बहता रहता है, क्योंकि प्रेशर से आने वाला पानी मोटे कपड़े में से सहज रूप से नहीं निकल पाता है इसलिए उसमें अनछने पानी का सम्पर्क बनता ही रहता है। तीसरी बात थैली बाँधने से तो दोहरी हिंसा होती है। एक तो सिलाई के कारण अथवा उसे बार-बार खोला नहीं जा सकता है इसलिए उसकी जीवानी नहीं की जा सकती है और दूसरे वह दिन-रात गीली

रहती है इसलिए उसमें असंख्यात जीव उत्पन्न होते रहते हैं। यदि वह कभी सूख जाती है तो वे सब जीव भी उसमें ही सूखकर मरण को प्राप्त हो जाते हैं।

सावधानी :

(1) बोरिंग आदि का बिना छना पानी ही किसी बर्तन में भरकर दूसरे बर्तन में छान लें। ताकि पानी के बहने का पाप भी नहीं लगेगा और बिना छना पानी पीने में भी नहीं आयेगा।

(2) घड़े को सीधा छने पानी से ही धोएँ अथवा पहले ही छने पानी से धोकर रखें।

(3) खादी/लट्ठा के दोहरे सफेद छन्ने के अलावा अन्य किसी भी कपड़े से पानी नहीं छानें। अन्य कपड़े से पानी छानने पर पानी छानने का दिखावा मात्र होगा।

छन्ना कैसा हो?

वैसे छन्ने का कोई नाप नहीं होता है। मेरे विचार से तो जिस बर्तन में हम पानी छान रहे हैं, उस बर्तन के मुख से अच्छा बड़ा अर्थात् कम-से-कम चार गुणा तो होना ही चाहिए ताकि पानी छानते समय वह खिसककर अन्दर नहीं गिर जावे। छन्ना खादी का ही होना चाहिए, क्योंकि खादी का कपड़ा रोएँदार होता है, पानी छानने पर पानी के जीव उसमें रह जाते हैं जिससे उनकी रक्षा सहज रूप से की जा सकती है। छन्ने को धूप के सामने फैलाकर देखने पर यदि उसमें से सूर्य की किरणें पार नहीं होती हैं तो वह छन्ना पानी छानने के योग्य होता है। सिंथेटिक, मलमल या जिनके (खादी को छोड़कर) कपड़े बनवाकर पहने जाते हैं ऐसे वस्त्र, रूमाल, चुन्नी आदि से पानी छन ही नहीं सकता। हाँ, मन की तसल्ली के लिए अथवा छलपूर्वक पानी छानने का नियम पूरा किया जा सकता है। खादी का छन्ना भी यदि पतला है तो उससे पानी नहीं छन सकता है।

कभी-कभी छन्ना बहुत छोटा होता है जिससे वह पानी छानते समय बर्तन में ही गिर जाता है तो वे झट से छन्ने को पकड़कर फिर से बर्तन में लगाकर पानी छान लेते हैं। उस पानी को भी छना ही मानते हैं। वह पानी छना कैसे हो सकता है, क्योंकि उसमें बिना छना पानी तो मिल ही गया। हैण्ड-पम्प,

बोरिंग आदि में तो ऐसा छन्ना लगाने पर कभी ऊपर से तो कभी साइड से बिना छना पानी निकलता ही रहता है, वह पानी छना हुआ कैसे हो सकता हो?

कभी-कभी छन्ना पीला हो जाता है अथवा छाया में सूखते-सूखते काला पड़ जाता है। कई महिलाएँ छन्ने को हाथ में लेकर सूर्य की तरफ करके देखती हैं कि छन्ने में कितने छेद हो गये हैं। यदि एक-दो छेद हों तो छन्ना अलग नहीं करती हैं। जब 5-6 छेद दिखते हैं तो वे छन्ने को नहाने-धोने का पानी छानने में डाल देती हैं, वे यह नहीं सोचती हैं कि चाहे पीने का पानी हो या कपड़े धोने, नहाने का, पानी में तो उतने ही जीव होते हैं। यदि कपड़े धोने के पानी को भी सही छन्ने से नहीं छानते हैं तो उतना ही पाप लगता है। मेरे विचार से तो कपड़े धोने के पानी में ज्यादा पाप होता है, क्योंकि पीने का पानी इतना नहीं छानना पड़ता है जितना कपड़े धोने के लिए छानना पड़ता है। पीने के पानी में तो दो-चार घड़े पानी की ही आवश्यकता होती है जबकि कपड़े धोने के लिए तो उससे बहुत ज्यादा ही पानी की आवश्यकता पड़ती है।

कई लोग जब साधुओं के साथ विहार में जाते हैं अथवा कहीं घर से बाहर जाते हैं तो छन्ना लेकर नहीं जाते हैं। जब प्यास लगती है तो जेब से रूमाल निकाला या चुन्नी से या साड़ी के एक छोर को हैण्ड-पम्प आदि के लगाकर पानी छानकर पी लेते हैं। वे इतना भी नहीं सोच पाते हैं कि हमने रुमाल से नाक पौंछी है, पसीना, धूल, हाथ में लगी गन्दगी आदि पौंछे हैं, क्या वह गन्दगी रूमाल में नहीं चिपकी होगी? साड़ी चुन्नी में शरीर का पसीना, मैल आदि नहीं चिपके होंगे। वे सब पानी के साथ हमारे शरीर में नहीं पहुँचेंगे? दूसरी बात क्या रूमाल आदि छन्ने जैसे मोटे होते हैं जिनसे पानी छन जाये। आप स्वयं सोचें कि क्या आपका पानी छानकर पीने का नियम पल रहा है? ऐसा करते हुए क्या आपको अहिंसा धर्म का फल मिल सकता है?

कई लोग छन्नी से पानी छानते हैं, कई लोग फिल्टर के पानी को छना हुआ मानते हैं लेकिन जाली और फिल्टर का पानी क्लीन/साफ-सुथरा हो सकता है परन्तु छना हुआ नहीं, क्योंकि फिल्टर/जाली में इतनी क्षमता नहीं होती है कि पानी में स्थित त्रस जीव निकल जावे। उन जालियों में से कचरा तो अवश्य ही निकल जाता है लेकिन जीव नहीं। इसलिए छन्नी या फिल्टर

से छना पानी छना हुआ नहीं कहा जा सकता है।

उपर्युक्त विकल्पों को समझकर आप अच्छा गाढ़ा, खादी का छन्ना रखें ताकि छने पानी का नियम अच्छी तरह पल सके।

सावधानी :

(1) छेद होने जैसा लगते ही छन्ना बदल दें। छन्ने के कपड़े का अन्यत्र उपयोग कर लें ताकि ऐसा न लगे कि हम इतने जल्दी-जल्दी छन्ना कैसे बदलें?

(2) छन्ने को दो-चार दिन में अच्छा साफ धोकर धूप में सुखा दें ताकि वह पीला/काला न हो और न उसमें जीव राशि उत्पन्न हो।

(3) कपड़े धोने के लिए भी पानी छानने का छन्ना अच्छा ही रखें। पीने के पानी का छन्ना पुराना होने पर इसमें नहीं डालें ताकि अहिंसा धर्म का पालन हो सके।

(4) छन्ना खादी का, सफेद रंग का ही मंगवायें, अन्य रंग का नहीं। जो न ज्यादा मोटा हो और न ज्यादा पतला।

(5) छन्ना दोहरा (जिसको डबल करके पानी छाना जा सके) रखें, उसकी किनारी कभी नहीं मोड़ें अन्यथा जीवानी करते समय जीव किनारी में अटक/उलझ कर मर जाएंगे।

(6) पानी छानते समय यदि छन्ना मोटा होने से पानी नहीं निकल रहा हो तो छन्ने को दबाकर पानी नहीं निकालें क्योंकि ऐसा करने से अन्दर के अर्थात् पानी के जीव मर जाएँगे।

प्रासुक जल में भी :

कई लोग साधुओं की वैयावृत्य करने में रुचि रखते हैं। वे साधुओं के कमण्डलु/दीदी-भैया की केटली/केन आदि में भरने के लिए प्रासुक (गर्म) पानी लेकर जाते हैं। कमण्डलु में प्रासुक पानी भरने से घण्टों तक उसका उपयोग करने पर भी पानी अनछना नहीं होता है। वे अपने घर से अच्छा छानकर गरम करके पानी ले जाते हैं। पानी भरते समय कमण्डलु आदि में से पहले का पानी निकालकर अलग तो कर देते हैं लेकिन कमण्डलु को सुखाए बिना ही धोकर पानी भर देते हैं अर्थात् पानी भरने के पहले कमण्डलु को सुखाते नहीं हैं। कमण्डलु को दो-चार बार धो लेने पर भी उसमें पहले के पानी का अंश समाप्त नहीं

होता है इसलिए जब पहले वाले पानी की मर्यादा समाप्त हो जाती है अर्थात् उसमें जीवों की उत्पत्ति/योनिस्थान (जीवों की उत्पत्ति के योग्य) बन जाते हैं तो उसमें जीव उत्पन्न हो जाते हैं। वह पानी भी नये प्रासुक पानी में मिला हुआ ही रहता है। जिससे उसका उपयोग करते समय उन सब जीवों की हिंसा होती ही है अत: पानी भरने के पहले किसी कपड़े से कमण्डलु को अन्दर भी अच्छा पोंछकर थोड़ी देर धूप में हवा में रख दें ताकि वह अन्दर से भी अच्छी तरह सूख जावे। पहले के पानी का अंश उसमें न रहे अन्यथा प्रासुक पानी भरने के बाद भी आप हिंसा के पाप से नहीं बच सकते हैं कमण्डलु पोंछने के कपड़े के एक छोर को कमण्डलु की टोंटी में डालकर अन्दर से निकाल लें ताकि टोंटी में भी पानी का अंश नहीं रहे। टोंटी को इस प्रकार नहीं सुखाने से टोंटी कभी सूखती ही नहीं है क्योंकि उसमें हवा नहीं जा पाती है।

कभी-कभी प्रासुक पानी को छोटे मुँह वाले डिब्बे/केन आदि में रख लिया जाता है ताकि उसमें जीव भी नहीं गिरें और जब आवश्यकता पड़े उसका उपयोग किया जा सके। प्रथम दिन तो कुछ नहीं होता क्योंकि उसमें पहले पानी नहीं था लेकिन दूसरे दिन जब उसमें पानी भरते हैं तो पहले के पानी का अंश पूर्णतया समाप्त नहीं हो सकता है, क्योंकि छोटा मुँह होने से उसमें हाथ नहीं जा सकता है। हाथ डाले बिना डब्बे को अन्दर से सुखाया नहीं जा सकता। बिना सूखे, पानी का अंश समाप्त नहीं हो सकता। पानी का अंश समाप्त हुए बिना अहिंसा धर्म नहीं पल सकता। इसलिए यदि प्रासुक पानी को रखना है तो बड़े मुँह (जिसमें कपड़ा डालकर अच्छी तरह पोंछा जा सके) की बॉटल/केन में रखें ताकि दूसरे दिन उसको सुखाकर पानी भरा जा सके, अहिंसा धर्म की पालना की जा सके। दूसरी बात छोटा मुँह होने पर अन्दर यदि कोई जीव चला गया हो तो वह भी नहीं दिखता है इसलिए चौड़े मुँह की बॉटल ही रखें।

कभी-कभी चूल्हे/भट्टी पर नहाने-धोने के लिए सामूहिक अथवा साधु-संघ के कमण्डलु में भरने के लिए पानी गरम किया जाता है। भगोना खाली होने के पहले अर्थात् पूरा खाली होने के पहले ही उसमें दूसरा पानी डाल दिया जाता है, ऐसे ही कभी-कभी तो 8-10 दिन तक भी पानी में पानी मिलता जाता है। ऐसा करने से उस पानी में इतने त्रस जीव उत्पन्न हो जाते हैं कि उसको

चार बार भी छान लो तो भी समाप्त नहीं होते हैं इसलिए भगोने को शाम के समय या पानी गरम करने के पहले कपड़े से पोंछ कर अच्छी तरह सुखा लें ताकि पहले के पानी का अंश उसमें न रहे। ज्यादा उचित तो शाम को सुखाना ही है क्योंकि लम्बे समय का अन्तराल होने से सूख भी जाता है और सुबह जल्दी-जल्दी आकुलता भी नहीं करनी पड़ती है, इससे अहिंसा धर्म का पालन भी हो जाता है।

आजकल बॉटल लेकर घर से बाहर निकलने की परम्परा है। बॉटल को प्रतिदिन धोया और भर लिया। जिनको छना पानी पीने का नियम है वे उस पानी को कैसे पी सकते हैं? यदि सलिया / लकड़ी आदि में कपड़ा लपेटकर बॉटल के अन्दर डालकर उसे साफ नहीं किया जावे तो बॉटल का सूखना बहुत कठिन है। यदि बॉटल को नहीं सुखाते हैं तो उसमें अनछने पानी का अंश बना रहता है जो छने हुए पानी को अनछना करता जाता है। अत: आप बॉटल भरने के पहले ही या शाम को ही उसे सुखा लें। बच्चों के स्कूल की बॉटल को भी खाली करके सुखा दें ताकि दूसरे दिन उसमें छना हुआ पानी भरा जा सके।

सावधानियाँ :

(1) प्रासुक पानी भरने के लिए बॉटल बड़े/चौड़े मुँह की रखें ताकि वह हाथ डालकर कपड़े से पोंछी जा सके।

(2) साधु के कमण्डलु को सुबह-शाम पोंछने का नियम ही बना लें ताकि आगे भी यह परम्परा बनी रहे। कमण्डलु की टोंटी को कपड़ा डालकर अवश्य पोंछे। पतले कपड़े के एक सिरे को मोड़कर डालने से टोंटी में चला जायेगा।

(3) पानी के भगोने को हमेशा ढककर रखें। पानी गरम हो जाने पर चूल्हे, भट्टी आदि में से ईंधन को व्यवस्थित करने का, गैस हो तो उसे बन्द करने का ध्यान रखें ताकि व्यर्थ ईंधन भी न जले और उबलता हुआ पानी भी नहीं लेना पड़े।

(4) भले ही पानी गरम करने का काम नौकर करते हों तो भी पानी छानना, जीवानी करना एवं भगोना सुखाने का काम आप स्वयं करें या सामने खड़े रहकर करवावें, क्योंकि धर्म दूसरों से नहीं, अपने करने से होता है।

चाहे घर का छन्ना हो या सामूहिक छन्ना, उसे सुखाने का ध्यान अवश्य रखें। जहाँ सामूहिक पानी गरम होता है या पानी छानने की व्यवस्था है वहाँ विशेष रूप से ध्यान रखें, क्योंकि वह पंचायती काम होता है वहाँ कोई जिम्मेदार व्यक्ति नहीं होने से विशेष प्रमाद होता है अत: आप थोड़ा-सा ध्यान रखकर धर्म कर सकते हैं। हम थोड़ा विवेक रखें, प्रमाद छोड़ें और पापों से बचें ताकि हमारा पानी छानना सफल हो।

जीवानी कैसे करें :

पानी छानकर छन्ने को तीन बार छना पानी डालकर धो लेना जीवानी का सामान्य लक्षण है लेकिन इतना करने मात्र से जीवों की रक्षा नहीं हो सकती। जीवों की रक्षा के बिना पानी छानने का कोई महत्त्व नहीं है। जीवानी के पानी को कुँए में इस प्रकार पहुँचाना चाहिए जैसे हम अपने हाथों से घड़े में पानी डाल रहे हों। यह जीवानी की मुख्य विधि है, इसमें पूर्ण रूप से जीवों की रक्षा होती है। जीवानी को ऊपर से ही कुँए में डाल देना तो ऐसा लगता है कि किसी आदमी को दो-तीन मंजिल ऊपर से नीचे गिरा देना। ऐसा करने पर उसकी जैसी हालत होती है उससे भी ज्यादा खराब हालत उन जीवों की होती है अथवा वे तो मर ही जाते हैं। अत: सही ढंग से जीवानी करनी चाहिए।

कई लोग पानी छानकर बिना छने पानी से जीवानी (बिलछानी) कर देते हैं। उनको यह पता ही नहीं है कि जीवानी कैसे करनी चाहिए, क्यों करनी

चाहिए? कई लोग बिना छने पानी के हाथों से ही अर्थात् हाथों से बिना छना पानी झर रहा है, उन्हीं हाथों को छने पानी में डालकर पानी ले लेकर, छन्ना धो लेते हैं और यही मानते हैं कि हमने छने पानी से जीवानी की है। कई लोग पानी छानकर छन्ने को बचे हुए बाल्टी आदि के पानी में डालकर अथवा चलते हुए नल के नीचे ही धोकर निचोड़ लेते हैं। कई लोग बावड़ी टैंक, टाँका, हौदी आदि में से पानी लेकर छानते हैं और छन्ने को बावड़ी आदि में ही डालकर धो लेते हैं अर्थात् जीवानी कर देते हैं, क्या यह जीवानी की विधि सही है? क्या इस प्रकार जीवानी करने से जीवों की रक्षा हो सकती है?

कई लोग नल के पानी की जीवानी भी कुँए आदि में कर देते हैं, यह बिल्कुल उचित नहीं है। जहाँ से हम पानी लाए हैं वहीं पर जीवानी पहुँचाना चाहिए, क्योंकि द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव के निमित्त से जीवों के जीवन पर प्रभाव पड़ता है। जिस प्रकार महाराष्ट-/दक्षिण के लोगों को रेगिस्तान की गर्मी सहन नहीं होती उसी प्रकार पानी के छोटे-छोटे जीव भी अपना क्षेत्र आदि परिवर्तित हो जाने पर मरण को प्राप्त हो जाते हैं।

कई लोग बोरिंग के पानी की जीवानी कुँए में कर देते हैं। पहली बात तो बोरिंग/जेट आदि के चालू होते ही घर्षण तथा लाइट के प्रेशर से पानी के सभी जीव मरण को प्राप्त हो जाते हैं। इसलिए उस पानी को छानने से भी कोई मतलब नहीं रहता है फिर भी उस पानी में पुन: जीवों का उत्पाद हो जाता है। अत: उस पानी को भी छानकर जिस टंकी में जेट आदि का पानी भरा है वहाँ जीवानी की जा सकती है।

नल, बोरिंग, जेट, हैण्ड-पम्प आदि के पानी की जीवानी का कहीं विधान नहीं है लेकिन फिर भी यदि मोटर से नल आदि के पानी को सेंटेक्स हौदी, बड़ी-टंकी आदि में भरकर पाइप लाइन से बाथरूम आदि में पानी आता है तो उस पानी को छानकर जीवानी को विधिपूर्वक सेंटेक्स आदि में पहुँचाने पर भी काफी पापों से बचा जा सकता है एवं पानी छानने और जीवानी करने की परम्परा को जीवित रखकर जैनत्व जीवित रखा जा सकता है। अथवा यदि 6-7 इंच का बोरिंग है तो भी उसमें से पानी खींचा जा सकता है। कई मंदिरों में इसी प्रकार की व्यवस्था है। उसमें भी यदि व्यक्ति चाहे तो 2-3 इंच की

छोटी केटली/केन से जीवानी कर सकता है। 6-7 इंच के पाइप में 2-3 इंच का केन सहज रूप से पलट सकता है अर्थात् उलटा/आड़ा हो सकता है।

इसी प्रकार यदि किसी के कुँए का पानी पीने का नियम हो तो वह भी 6-7 इंच के पाइप वाला कुँआ बनवाकर जीवरक्षा /जीवानी करके पापों से बच सकता है और अपने नियम का पालन कर सकता है।

प्रश्न - एक दिन एक महिला ने पूछा-माताजी ! हम लोग नल के पानी को छानकर उसकी जीवानी नाली में डाल दें या बिना छने पानी का उपयोग करें, इसमें अन्तर ही क्या है? क्योंकि जीव तो दोनों में मरते ही हैं फिर पानी छानने से क्या लाभ?

उत्तर - आपका प्रश्न उचित है कि जीवानी को नाली में डालने से या सही विधि से जीवानी नहीं करने से पानी छानने पर भी जीव मर ही जाते हैं फिर भी पानी छानते समय हमारे मन में दया का भाव तो अवश्य रहता है। **दूसरी बात** पानी छानना जो जैन का एक लक्षण माना गया है उसकी परम्परा समाप्त नहीं होगी। **तीसरी बात** हमने पानी छानकर जीवानी नाली में डाली तब तक तो पानी के जीवों की रक्षा हो ही जायेगी। **चौथी बात** पानी छान लेने से हमारे हाथ, ब्रूश, साबुन, कूटने (कपड़े धोने का) आदि से अथवा हमारी कार्य में तो वे जीव नहीं मरेंगे तथा **पाँचवीं बात** सबसे बड़ा लाभ हमने जिनेन्द्र भगवान की आज्ञा का पालन किया। भले ही हमें मजबूर होकर जीवानी को नाली में डालना पड़ा। अत: यह सोचकर कि हम जीवानी नहीं कर सकते इसलिए बिना छना पानी काम में ले लें यह तो उचित नहीं है।

सावधानी :

(1) जहाँ से पानी लाए हैं वहीं अर्थात् कुँए, बावड़ी, सेंटेक्स आदि में से पानी आ रहा है, लाये हैं तो वहीं जीवानी करें, अन्य स्थान पर नहीं।

(2) जीवानी करते समय ध्यान रखें, थोड़ा-सा भी पानी नीचे नहीं गिरे। इसमें बिना छने पानी से भी ज्यादा जीव होते हैं।

(3) जीवानी को इधर-उधर नहीं रखें। यदि तत्काल जीवानी करने का समय नहीं है तो ऐसे स्थान पर रखें जहाँ से कोई उठाकर उसका उपयोग न कर पावे।

(4) कपड़े धोने, पानी पीने आदि के लिए ज्यादा पानी भरना पड़ता है। कम-से-कम उस पानी की जीवानी तो अवश्य करें।

(5) यदि सेंटेक्स, टंकी आदि के पास पहुँचने की व्यवस्था नहीं है तो सीढ़ी आदि लगवा लें, प्रमाद नहीं करें।

(6) जीवानी करने को भी भगवान की पूजा, स्वाध्याय आदि के समान ही धर्म समझें, पुण्यकार्य समझें ताकि जीवानी करने में आलस नहीं आवे।

जीवानी करने का फल :

एक सेठ हमेशा पानी छानकर विधिपूर्वक जीवानी करता था। एक दिन वह जल्दी में था इसलिए वह पानी छानकर जीवानी का पानी एक तरफ रखकर किसी काम से घर के बाहर चला गया। पीछे से उसकी बहू ने पता नहीं होने के कारण उस पानी को काम में ले लिया। जब सेठ ने घर आकर जीवानी के पानी का बर्तन देखा तो पानी नहीं था। पूछने पर मालूम पड़ा कि पानी तो बहू ने काम में ले लिया है। सेठ को इससे बहुत दुःख हुआ। उसने गुरु के चरणों में जाकर अपनी गलती की निन्दा-गर्हा करते हुए प्रायश्चित्त माँगा। गुरुवर ने कहा-''यह बहुत बड़ा पाप है। इस पाप को नष्ट करने के लिए तुम चौरासी हजार मुनिराज को आहारदान दो।'' सेठ ने कहा-''गुरुवर, इतने साधुओं को एक साथ आहार करवाना तो असंभव लगता है। यदि इसके बदले में कोई विकल्प हो तो मैं उसे पूरा करके अपना पाप नष्ट कर सकता हूँ। आप कृपा कर कोई दूसरा प्रायश्चित्त बताइये।'' मुनिराज को दया आ गई। उन्होंने कहा ''बेटा! यदि तुम ऐसा नहीं कर सकते हो तो एक ऐसे दम्पती को भोजन कराओ जो विवाह होने के बाद भी अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन करता हो। सेठ ने कहा-गुरुवर ! यह कैसे मालूम पड़ेगा कि यह दम्पती अखण्ड ब्रह्मचर्य का पालन करता है। गुरुवर ने कहा - ''जिस दम्पती के भोजन करने पर तेरे रसोई घर का चन्दोबा सफेद हो जावे वे ही अखण्ड ब्रह्मचर्य पालने वाले दम्पती (युगल) होंगे।'' उसने गुरुवर की बात को स्वीकार करके प्रतिदिन नवविवाहित युगलों को भोजन कराना प्रारम्भ किया। वर्षों बाद एक दिन एक दम्पती जब भोजन करने बैठे तो सेठ के रसोई घर का चन्दोबा सफेद होने लगा। उनका भोजन पूरा होते-होते ही पूरा चन्दोबा सफेद हो गया। सेठ की समझ में आ गया कि अब मेरा पाप धुल

गया है। यह घटना सही है या गलत यह तो मुझे भी पता नहीं है लेकिन मेरे अनुमान से तो जीवानी करने में, इसमें भी अर्थात् 84000 मुनिराज को आहार देने के पुण्य से भी ज्यादा फल मिलता होगा, क्योंकि पानी की एक बूँद में असंख्यात त्रस जीव होते हैं। घड़ों पानी छानने के बाद उस छन्ने में कितने त्रस जीव निकलते होंगे, उन सबकी हत्या का पाप कितना होता होगा? इसकी तो कल्पना ही नहीं की जा सकती है। इसलिए पानी छानकर जीवानी अवश्य करें।

बिना छना पानी पीने से :

लोक में सामान्य रूप से अनछना पानी पीने से होने वाली हानियाँ सबको ज्ञात हैं। बिना छना पानी पीना सैकड़ों बीमारियों का घर है। फिर जो सीधा हैण्ड पम्प चलाकर या बोरिंग, नल आदि के नीचे अंजुली बनाकर पानी पी लेते हैं उनके पेट में तो पानी में नहीं दिखने वाले छोटे-छोटे जीवों की बात तो बहुत दूर आँखों से दिख सकने वाले छोटे मेंढ़क, नागिन, मच्छर, मछली आदि भी पेट में पहुँच जावें तो कोई आश्चर्य वाली बात नहीं है। इतिहास इसका साक्षी है और वर्तमान में भी ऐसी घटनाएँ जब कभी जहाँ-कहीं घटती रहती हैं। मालवा प्रान्त में स्थित ऊन क्षेत्र के नामकरण का कारण भी यही था। वहाँ के राजा ने सीधा बिना छना पानी पिया तो पानी के साथ एक छोटी सी पतली नागिन भी उसके पेट में पहुँच गई। पानी को चबाया नहीं जाता है। इस कारण वह नागिन जीवित ही उसके पेट में पहुँच कर वृद्धि को प्राप्त होने लगी। वह जब पेट में डंक मारती तब राजा को भयंकर वेदना होती थी। राजा उस वेदना से घबराकर नदी में डूबकर अपने प्राणों का विसर्जन करने के लिए अपनी रानी को साथ लेकर नदी की तरफ जा रहा था। रास्ते में एक स्थान पर रानी को स्वप्न आया कि ''राजा के पेट में अनछने पानी के साथ एक नागिन पहुँच गई है। उसी के काटने के कारण राजा को पेट में वेदना होती है। तुम राजा को चूने का पानी पिलाओ, राजा का दर्द ठीक हो जायेगा।'' रानी ने प्रात: उठकर वैसा ही किया। फलत: राजा को जोर से वमन हुआ। वमन के साथ राजा के पेट की नागिन बाहर निकल आई। राजा ने जीवन-प्राप्ति की खुशी में उस स्थान पर सौ मन्दिर, सौ बावड़ियाँ, सौ तालाब आदि बनाने की घोषणा की। लेकिन निन्यानवे मंदिर आदि ही बन पाये थे तभी उसकी मृत्यु हो गई। उसी दिन से

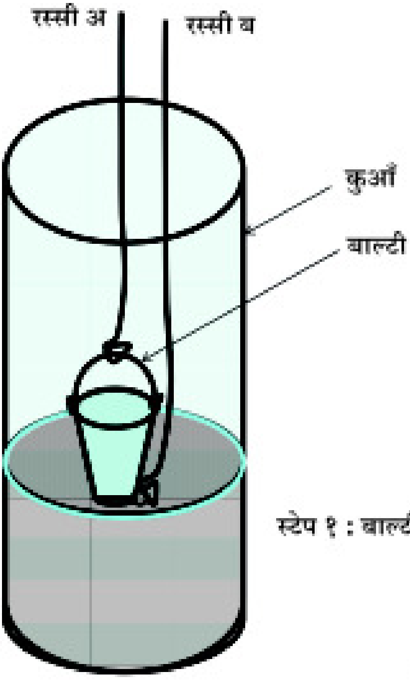

स्टेप १ : बाल्टी कुए के अन्दर डालना

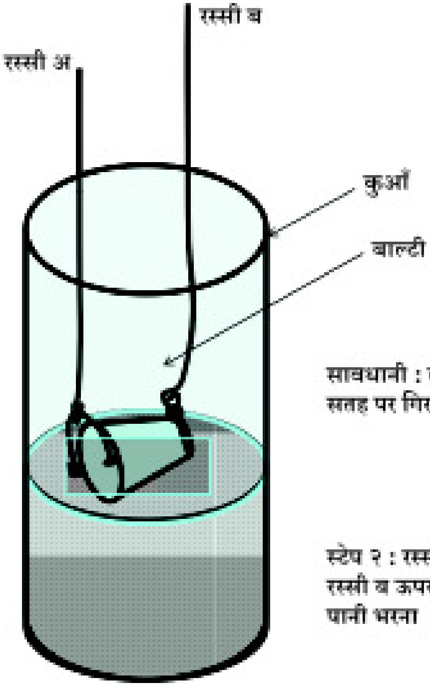

सावधानी : बाल्टी पानी की सतह पर गिराना नहीं

स्टेप २ : रस्सी अ नीचे व रस्सी ब ऊपर करके बाल्टी से पानी भरना

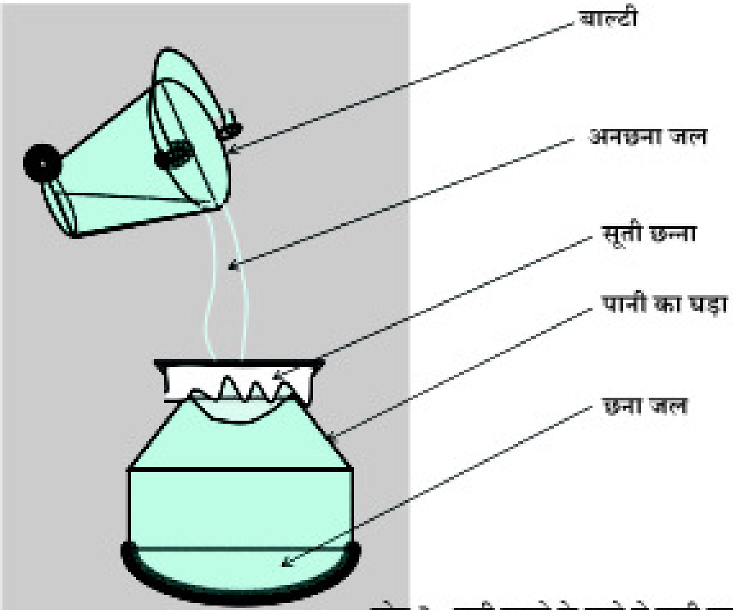

स्टेप ३ : सूती कपड़े के छन्ने से पानी छानना

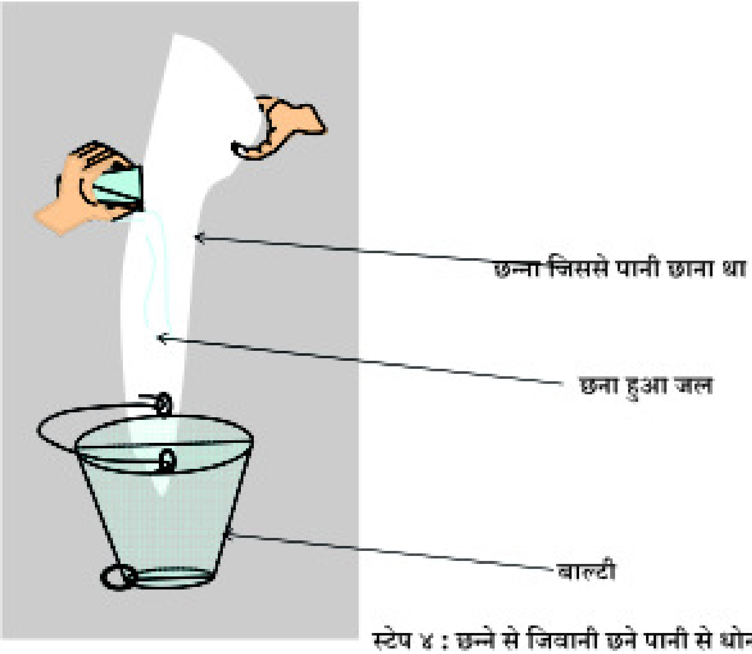

स्टेप ४ : छन्ने से जिवानी छने पानी से धोना

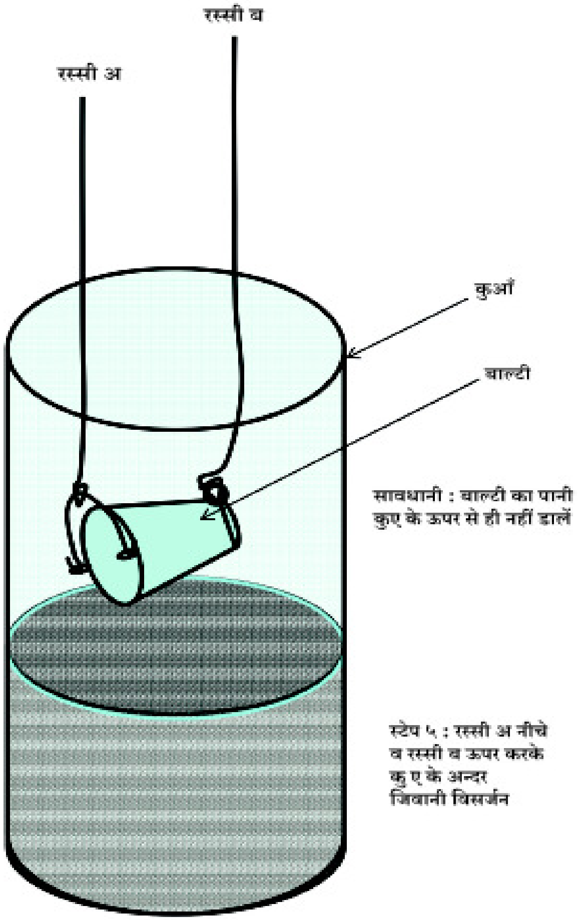

उस स्थान का नाम 'ऊन' पड़ गया। वास्तव में उसका नाम तो पावागिर है।

इसी प्रकार राजा भोज एक बार तालाब में तैर रहे थे। अचानक भूल से बिना छना पानी उनके पेट में चला गया। उस पानी के साथ एक छोटी सी मछली भी पहुँच गई। वह मछली चलते-चलते राजा के सिर में पहुँच गई। जिससे उनके सिर में भयंकर वेदना होने लगी.....। अनेक प्रकार के इलाज करने पर भी जब कोई भी वैद्य राजा की पीड़ा ठीक नहीं कर पाया तो राजा ने सभी वैद्यों को फाँसी की सजा सुना दी। सजा सुनकर एक अनुभवी वैद्य ने राजा से एक बार पुन: इलाज करने का अवसर माँगा। राजा ने उसके विनय

को देखकर इलाज की स्वीकृति दे दी। वृद्ध वैद्य ने राजा के सिर में एक चीरा लगाया तो उसमें से वह छोटी-सी मछली निकली।

कुछ दिन पहले एक किसान ने अपने जीवन की एक घटना बताई थी। उसने कहा-एक बार मेरे पेट में कुछ उछलने लगा। मैंने बहुत डॉक्टरों को दिखाया, बहुत जाँचें करवाईं। आखिर मैंने एक दिन एक डॉक्टर से कहा-कि ''डॉक्टर साहब ! मैं आपको लिखकर देता हूँ कि मैं मर जाऊँ तो कोई बात नहीं, लेकिन आप तो मेरा पेट चीर देखो, आखिर अन्दर क्या है?'' डॉक्टर ने जब उसका पेट चीर कर देखा तो उसके पेट में एक छोटा सा मेंढ़क उछलता हुआ दिखा। इसकी खोज की गई कि आखिर पेट के अन्दर मेंढ़क आया कहाँ से? कई डॉक्टरों ने मिलकर निष्कर्ष निकाला कि शायद इसने बिना छना पानी पिया होगा। उस पानी के साथ में मेंढ़क भी पेट में पहुँच गया होगा। वही मेंढ़क पेट में पलकर उछल रहा था। यह है अनछना पानी पीने का फल।

ऐसी ही अनेकानेक घटनाएँ घटती रहती हैं। हम सावधानी रखें, छन्ना साथ रखें, छन्ने से पानी छानकर ही पियें ताकि हिंसा से भी बच सकें और स्वस्थ भी रह सकें।

सावधानी :

(1) गाँव से बाहर जाते समय छना हुआ (हो सके तो प्रासुक) पानी साथ लेकर जावें। यदि ज्यादा दिन का सफर है तो छन्ना भी अवश्य ले जावें।

(2) बाहर जाने के लिए एक छन्ना बनाकर अलग ही रख लें ताकि बाहर निकलते समय छन्ना ढूँढ़ना न पड़े और घर का छन्ना ले जाने पर घर वालों को तकलीफ न पड़े।

(3) घर आते ही या बाहर गाँव में जहाँ ठहरे हैं छन्ना सुखा दें ताकि गीलेपन के कारण जीव उत्पन्न न हों।

(4) प्याऊ या किसी टंकी आदि में से पानी पीवें तो भी छानकर पीवें।

उपसंहार :

पानी छानना स्वास्थ्य एवं धर्म दोनों के लिए एक आवश्यक उपयोगी कर्त्तव्य है। जैनधर्म में तो पानी छानने को जैन का एक चिह्न ही कह दिया गया है अर्थात् जो पानी छानकर नहीं पीता है वह जैन कहलाने योग्य नहीं है अर्थात्

वह नाम मात्र का जैन है वास्तविक नहीं। अन्य धर्मों में भी पानी छानने का विधान बहुतायत से पाया जाता है। पुराने जमाने में न पानी का इतना उपयोग होता था, न पानी छानने के लिए जाली, थैली आदि की व्यवस्थाएँ थीं, न ही सहज रूप से इतना पानी उपलब्ध होता था अर्थात् नल, हैण्डपम्प, बोरिंग आदि की सुविधाएँ नहीं होने से कुँए से खींचकर अपने सिर पर पानी के घड़े लाने पड़ते थे इसलिए सीमा में ही अर्थात् कम पानी लाकर ही काम चलाया जाता था जिससे पानी छानना और जीवानी करना सहज था अर्थात् पानी छानने और जीवानी करने के लिए बहुत मेहनत करने की आवश्यकता नहीं पड़ती थी लेकिन आज के युग में हर स्थान पर बहुत पानी की आवश्यकता पड़ती है। लघुशंका करने, शौच जाने आदि छोटे-छोटे कार्यों में जहाँ एक लोटे से काम चल जाता था वहाँ आज कम-से-कम भी एक बाल्टी पानी तो खर्च करना ही पड़ता है। जहाँ एक-दो बाल्टी पानी से मिट्टी गीली कर आंगन को लीप कर 15-20 दिन तक आँगन को साफ-सुथरा रखा जाता था वहाँ आज प्रति दिन दो-तीन बाल्टी पानी से आंगन को साफ करना आवश्यक होता है। इसी प्रकार पहले लोग दिन में दो बार भोजन करते थे और एक-दो बार (एक साथ लोटा भर) पानी पीते थे लेकिन आज दिन में दो-चार बार तो सामान्य रूप से खाते हैं अर्थात् दो चार बार तो खाते ही हैं या यों कहो कि पूरे दिन और रात खाते ही रहते हैं और थोड़ा-थोड़ा पानी पीते रहते हैं इसलिए पानी छानकर काम में लेना बहुत कठिन हो गया है, फिर भी पानी छानने की परम्परा पंचम काल के अंत तक नष्ट नहीं हो सकती, क्योंकि पंचम काल के अंत तक धर्म और धर्मात्माओं का सद्भाव रहेगा। हाँ, धर्मात्मा बहुत कम लोग होंगे। फिर भी उन कम लोगों में हमारा नम्बर आ सकता है अथवा हम भी धर्मात्मा हो सकते हैं, बन सकते हैं। अत: हम थोड़ी मेहनत करें, प्रमाद छोड़ें, पानी छानकर पीवें/काम लें। पापों से बचें, आत्मकल्याण का मार्ग प्रशस्त करें। यही मानव-जीवन का सार है।

सब्जियों में :

प्राय: गरीब से लेकर अमीर सभी घरों में सब्जियाँ खाई जाती हैं। किसी के घर में महंगी तो किसी के घर में सस्ती, सब्जी अवश्य खाई जाती है। भले

ही गरीब व्यक्ति हो टमाटर, पालक, नीबू-मिर्ची आदि सब्जियाँ खा ही लेता है, क्योंकि हरी सब्जी स्वास्थ्य के लिए एक अति आवश्यक खाद्य है। उस सब्जी को खाने के लिए सुधारना, बनाना, रखना आदि अनेक कार्य करने पड़ते हैं। इन कार्यों को चाहे विवेक पूर्वक करें या अविवेक से, बराबर समय लगता है लेकिन यदि विवेक से करें तो अहिंसा धर्म का पालन होता है और अविवेक से करें तो मात्र पाप का ही बन्ध होता है। हम सब्जियों को बनाने, रखने आदि में क्या-कैसे विवेक रखें, इस सम्बन्ध में यहाँ पर विचार किया जाता है-

सब्जी सुधारने का उद्देश्य :

सब्जी सुधारने में सामान्य व्यक्ति का उद्देश्य भले ही छिलके निकालना, डण्ठल साफ करना, नरम और सुन्दर बनाना हो अथवा बिना उद्देश्य के ही रूढ़िवश सब्जी सुधारना हो लेकिन समझदार व्यक्ति का उद्देश्य तो अहिंसा का पालन करना ही होता है। वह सब्जी सुधारते समय मात्र यह नहीं सोचता है कि सब्जी में यदि कीड़े आदि हैं तो वे हमारे खाने में नहीं आवें। हम जैन हैं, शाकाहारी हैं, हमें माँसाहार का त्याग है इसलिए हमें सब्जी में से कीड़े निकालकर अलग कर देने चाहिए। अपितु वह तो यह सोचता है कि सब्जी के जीव-जन्तु की रक्षा कैसे की जावे? इस प्रकार के विचारों से उसके दोनों कार्य सिद्ध होते हैं। उसके माँसाहार के त्याग का नियम भी निभता है और जीवरक्षा का फल भी मिलता है। विवेक के बिना जीवों की रक्षा का उद्देश्य बनाकर भी जीवों की रक्षा नहीं की जा सकती है, क्योंकि जीवों की रक्षा करने के लिए जीवों की रक्षा कैसे हो सकती है, यह सोचना आवश्यक है। कोई सब्जी सुधारकर सड़ी-गली अथवा कीड़े वाली सब्जी को धोवन के पानी में डाल देता है तो कोई उठाकर गाय के सामने रख देता है। कोई उसे ले जाकर सड़क पर रख देता है तो कोई दरवाजे पर खड़ा-खड़ा या एक-दो मंजिल ऊपर से ही फेंक देता है। ऐसा करने वाले सोचें, क्या हमने सब्जी सुधार कर भी अहिंसा धर्म का पालन किया है? सड़ी सब्जी को धोवन के पानी में डाल देने पर तो वे जीव हमारे पेट में जाकर अथवा सब्जी छोंकते समय न मरकर पानी में डूबकर मर गये। सड़क पर फेंकने से किसी मोटर साइकिल, गाड़ी आदि के या किसी व्यक्ति के पैर के नीचे कुचलकर मर गये, उनकी रक्षा तो नहीं हुई। हम खाते

तो भी हमारे निमित्त से अर्थात् हमारे दाँतों से कुचले जाकर या पेट में जाकर वे जीव मरते और सड़क पर डाला, पानी में डाला तो भी हमारे निमित्त से ही वे मरे। दोनों में ही पाप का बन्ध तो हमें ही हुआ। अत: सब्जी सुधार कर सड़ी सब्जी को किसी छाया के स्थान में रख दें। इतने से विवेक में हम भारी पाप से बच सकते हैं। अवश्य बचें, इसी में हमारा कल्याण है।

सावधानी :

(1) यदि आप भिण्डी सुधार रहे हैं तो पहले भिण्डी को चारों तरफ से देख लें। यदि कहीं छेद आदि दिखे अथवा ऐसा लगे कि यहाँ से सड़ी हो सकती है तो पहले उसको धीरे से तोड़कर (बिना चाकू लगाये तोड़ें तो अच्छा है) देखें यदि सड़ी हो तो चाकू से निकालकर अलग कर दें। उसके बाद उसके टुकड़े करें। अच्छी भिण्डी हो तो भी दो टुकड़े तो कर ही लें।

(2) सेम, बरवटी (चँवले की फली) आदि जो खुल सकती है उसे बीच में से खोलकर देख लें, उसके बाद उसके टुकड़े करें। टमाटर, मिर्ची, जामफल आदि को पहले दो टुकड़े करके देख लें, फिर छोटे टुकड़े करें।

(3) जामफल, सेवफल, टमाटर, केरी आदि को भूनते (बफाते) समय पहले दो टुकड़े करके देख लें। ताकि उनमें कोई जीव हो तो दिख जावे, फिर दोनों को मिलाकर भूनें।

(4) टमाटर, अंगूर आदि का रस निकालते समय भी पहले दो पीस करके देख लें। टमाटर खाते समय भी सीधा मुँह से नहीं चूसें या छोटा टमाटर है तो सीधा पूरा-पूरा मुँह में नहीं रखें। जामफल, केला आदि को भी दो-तीन पीस करके खाना शुरू करें।

(5) अनानास, सीताफल, रामफल आदि के छिलकों में बहुत खण्ड होते हैं। उन खण्डों के बीच-बीच में छोटे-छोटे जीव बैठे रहते हैं, उनको पहले एकागृता से देखें फिर टुकड़ें करें।

सब्जी अवश्य धोवें :

वैसे सभ्य तथा पढ़े-लिखे लोग सब्जी को धोकर ही बनाते हैं लेकिन वे सब्जी सुधार कर छौंकने के पहले धोते हैं, सुधारने के पहले नहीं। शायद वे सोचते होंगे कि सब्जी में ऐसा क्या लग गया जो धोया जावे तथा वैसे ही

मालिन (सब्जी वाली) तो सब्जी पर पानी छिड़कती ही रहती है। **दूसरी बात** सब्जी के छिलके तो उतर ही गये। बाहर का कुछ भी गन्दा पदार्थ उसके अन्दर तो गया नहीं इसलिए सब्जी को धोने की ज्यादा आवश्यकता नहीं है। फिर हम सब्जी छौंकने के पहले तो धो ही लेते हैं। लेकिन क्या उन्हें यह पता नहीं है कि सभी सब्जियाँ सुधारने के बाद अच्छी तरह से नहीं धोई जा सकती हैं। जैसे भिण्डी, केला, गोंदा, कटहल आदि को सुधारने के बाद धोने से लार उत्पन्न हो जाती है। अंगूर, सेवफल, आलूबुखारा आदि के टुकड़े करने के बाद धोने से उनका स्वाद फीका हो जाता है। जिस प्रकार बीज सहित मुनक्कों को रगड़ कर धोने पर भी वह फीकी नहीं होती, लेकिन बीज निकालकर धोने से फीकी हो ही जाती है। अच्छे पके आम, टमाटर आदि में से टुकड़े बनाते समय ही रस निकलने लगता है। क्या उन सबको टुकड़े बनाने के बाद धोया जा सकता है, आप स्वयं विचार करें। दूसरी बात सब्जी बनाते समय इतना समय भी नहीं रहता है कि सब्जी को अच्छी तरह रगड़कर धो लिया जाय।

एक दिन एक राजा को नगर के बाहर एक नया-सा वृक्ष दिखाई दिया। राजा ने एक ज्ञानी वैद्य से उस वृक्ष के बारे में पूछा। वैद्य ने कहा-यह वृक्ष अमृत फल का है। इस वृक्ष के फल को खाने वाला कभी बीमार नहीं होगा और यदि उसके शरीर में कोई बीमारी होगी तो वह तत्काल समाप्त हो जायेगी। राजा ने उस वृक्ष की महत्ता सुनकर उसकी अच्छी तरह से सुरक्षा करवा दी। समय पाकर उस वृक्ष पर फल लगे। माली ने एक दिन उस वृक्ष पर एक फल को पका हुआ देखकर तोड़ा और राजा के चरणों में भेंट कर दिया। राजा ने वह फल अपने इकलौते पुत्र राजकुमार को दे दिया। राजकुमार ने फल लेकर खा लिया। फल खाते ही राजकुमार के प्राण पखेरू उड़ गये। राजकुमार के मरने से राजा ने क्रोधित होकर वैद्य को कारागृह में डलवा दिया तथा उस फल वाले वृक्ष को भी जड़ से कटवा दिया। जब रोगी, दुःखी, वृद्ध तथा जीवन से ऊब जाने वाले लोगों को यह मालूम हुआ कि इस वृक्ष का फल खाने से राजकुमार की मृत्यु हो गई है तो वे भी मरने के लिए उस वृक्ष के फल खाने लगे। जिस-जिस ने फल खाये वे स्वस्थ हो गये। फल खाने वालों की असाध्य बीमारियाँ ठीक हो गईं। जब राजा को इस बात का पता चला कि नगर के

सैकड़ों लोग उस वृक्ष के फल खाने से स्वस्थ हो गये हैं तो उसने वैद्य को कारागृह से मुक्त कर राजकुमार की मृत्यु का कारण ढूँढ़ने का आदेश दिया। वैद्य ने जब खोज-बीन की तो पता चला कि एक दिन एक चील मरे हुए सर्प का टुकड़ा लेकर उस वृक्ष के ऊपर से उड़ रही थी। तभी साँप के शरीर में से विष की एक बूँद उस फल पर गिर गई। विष की गर्मी से वह फल असमय में अर्थात् समय के पहले ही पक गया। उसके साथ एक भी फल नहीं पका। उसी फल को लाकर माली ने राजा को दे दिया और राजकुमार ने बिना धोए ही उस फल को खा लिया। फल पर विष का जो अंश लगा था वह फल के साथ ही राजकुमार के पेट में पहुँच गया। इसी कारण फल खाते ही राजकुमार की मृत्यु हो गई। क्या बिना धोए सब्जी, फल खाने वालों के साथ ऐसी घटना नहीं घट सकती है? अवश्य घट सकती है। अपने प्राणों की रक्षा करना भी विवेक है। अहिंसा धर्म है अत: सब्जी सुधारने के पहले उसे अच्छा रगड़कर अवश्य धो लें ताकि ऐसी घटना आपके साथ नहीं घटे। दूसरी बात वर्तमान में अधिकतर सब्जी फलों पर कीटनाशक दवाइयाँ छिड़की जाती हैं, खाद डाली जाती है। उस खाद के कण उछल करके या जीव-जन्तु उन खाद के कणों को उठा-उठाकर सब्जी-फलों पर रख देते हैं वे भी स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं। जब बिना धोये ही सब्जी-फल खाते-बनाते हैं तो वे कण हमारे शरीर में पहुँचकर अनेक प्रकार की बीमारियाँ उत्पन्न करते हैं। अत: सब्जी-फलों को धोकर ही खावें। **तीसरी बात**-सब्जी वाले लेटि-न-बाथरूम जाकर भी हाथ-पैर नहीं धोते हैं। उन्हीं हाथों से सब्जी तोड़ लेते हैं, भर लेते हैं, उसी डिब्बे-लोटे से (जिसे लेकर लेटि-न गये थे) उन पर पानी छाँट लेते हैं उन सबके बैक्टिरिया तथा उन पर इधर-उधर की धूल आदि भी चिपकी रहती है। बाजार में सब्जी खरीदने वाले सब्जियों को गंदे हाथों से भी छूते रहते हैं इसलिए सब्जियों को धोए बिना कभी काम में नहीं लें। इतना विवेक रखें।

ध्यान से सुधारने पर भी :

पालक, मैथी आदि पत्ती वाली सब्जियों में दो-चार जोड़ (जोइंट) जैसे दिखते हैं। उनमें अधिकतर जीव चिपके रहते हैं। उन्हें अच्छी तरह शोधन करें। एक बार मेरे हाथ में चोट लगने से सूजन आ गई थी। सूजन उतारने के लिए

किसी ने कहा-एरण्ड वृक्ष के पत्तों पर तेल लगाकर गरम करके बाँधो, ठीक हो जायेगी श्रावकों ने पत्ते लाकर बहिनों को दे दिये। बृह्मचारिणी बहनें पत्तों को अच्छी तरह से देख रही थीं, फिर भी मैंने कहा-इन पत्तों को अच्छी तरह से देखना। तुम लोगों के देखने के बाद मैं देखूँगी। यदि एक भी जीव निकल आया तो मैं पत्ते नहीं लगवाऊँगी। बहिनों ने कहा-ठीक है माताजी! यदि इसमें से आप यदि एक भी जीव निकाल देंगे तो हम आपको एक भी पत्ता नहीं लगायेंगे। बहिनों ने जब एक पत्ते को अच्छी तरह शोधन करके रखा तो दूर से ही मैंने उस पत्ते को गौर से देखा-मुझे एक जोड़ में एक जीव सा दिखा। मैंने पीछी से उसको स्पर्श किया तो एक छोटा, बिल्कुल नहीं दिखने वाला बारीक जीव चलने लगा। मैंने कहा-''देखो, यह जीव चल रहा है। इतने चैलेंज से शोधन करने के बाद भी यदि पत्ते में जीव रह सकता है तो स्थूल दृष्टि से और बातें करते-करते शोधन करने वालों की पत्तियों में कितने जीव रह जाते होंगे, विचारणीय विषय है।

इसी प्रकार सब्जी सुधारने के विषय में हमारी परम पूज्या बड़ी (आर्यिका विशालमतीजी) माताजी ने बताया कि एक बार हम लोग गुरुवर के साथ विहार कर रहे थे। एक तरफ शुद्ध भोजन बन रहा था तो एक तरफ श्रावक लोग भिण्डी की सब्जी सुधार रहे थे। मैंने उनसे कहा-''भैया, भिण्डी अच्छे से शोधन करके सुधारना। इनमें आठ-दस घर होते हैं किसी भी घर में जीव हो सकते हैं।'' उन्होंने कहा-''जी, दीदीजी हम लोग तो इतनी अच्छी तरह से भिण्डी शोधते हैं कि कोई भी उसमें से एक जीव भी नहीं निकाल सकता है।'' मैंने कहा-''ठीक है, आज तुम लोगों की शोधन की हुई भिण्डी का मैं शोधन करूँगी। यदि एक भी जीव निकल गया तो आप लोग क्या करेंगे?'' उन्होंने कहा-''दीदी, यदि आप इन भिण्डियों में से एक भी जीव निकाल दोगी तो हम लोग जीवन भर के लिए भिण्डी खाने का ही त्याग कर देंगे।'' क्योंकि उन्हें विश्वास था कि हमारे शोधन करने के बाद एक भी जीव नहीं रह सकता है। उनकी शोधन की हुई भिण्डी को दीदी ने शोधा तो उनमें से दो-तीन लटें निकल आईं। उन लोगों ने जिन्दगी भर के लिए भिण्डी खाने का त्याग कर दिया। आप भिण्डी का कितना शोधन करते हैं स्वयं सोचें। मेरी सलाह से तो आप स्वयं शोधन

करें अथवा किसी विश्वासपात्र और विवेकवान के हाथ से शोधन की हुई भिण्डी की सब्जी ही खायें। दूसरी बात, जब आपके पास समय नहीं हो तो आप भिण्डी की सब्जी ही नहीं बनावें, फुर्सत के समय ही भिण्डी की सब्जी बनायें, खायें। ताकि आपके पेट में कीड़ें भी नहीं पहुँच पायें और अहिंसा की पालना भी हो।

सब्जी कौन सुधारे :

अधिकतर महिलाएँ अपनी वृद्ध सास को सब्जी सुधारने के लिए बैठा देती हैं। वे सोचती हैं कि वृद्ध सास माँ पानी के घड़े उठाकर लाना, ऊपर-नीचे चढ़ना-उतरना, दौड़-भाग करना आदि श्रम वाले कार्य नहीं कर पाती हैं इसलिए उनसे सब्जी सुधरवा लो। वे यह नहीं सोच पाती हैं कि वृद्ध सास को आँखों से कितना दिखता होगा? वह सब्जी में कितने जीव-जन्तुओं को देख पायेगी। कई महिलाएँ तो भिण्डी की सब्जी तक वृद्धा सास से सुधरवा लेती हैं जबकि अच्छी आँखों वाले नवजवान भी भिण्डी का अच्छा शोधन नहीं कर पाते हैं वह वृद्धा क्या देख पाएगी ? हाँ, वृद्धा सास अच्छे सुन्दर, जैसे आप चाहें, सब्जी के पीस बना करके रख देगी, छिलके-डण्ठल भी निकाल देगी, लेकिन अहिंसा का पालन तो नहीं हो पावेगा। कुछ दिन पहले एक नवयुवक बोला-माताजी, मैंने आज आपको आहार दिया इस खुशी में मैंने जीवन भर के लिए भिण्डी का त्याग कर दिया। मैंने आश्चर्य से कहा-आप आलू-प्याज खाते हैं, होटल आदि की अभक्ष्य वस्तुएँ भी खाते हैं? उनका त्याग न करके पहले भिण्डी का त्याग क्यों कर रहे हैं? उसने कहा-माताजी, भिण्डी में प्रत्यक्ष हिंसा होती है। दिखती है। मैंने कहा-वह कैसे? उसने कहा-‘‘माताजी, भिण्डी का कितना ही शोधन कर लो तो भी उसमें जीव रह ही जाते हैं।’’ आप सोचें आप की वृद्ध सासू माँ भिण्डी को कितना शोध पायेगी? जब मैं छोटी थी मैंने देखा था, एक वृद्धा चने छीलने के बाद नीचे गिरे छिलके डण्ठल आदि इकट्ठे कर रही थी। चने के छिलकों के साथ एक बड़ी लट चल रही थी। उसने जमीन को हाथ से साफ किया। उसके हाथ से लट रगड़ गई। यूँ समझ लो लट की चटनी सी बन गई। उसको इतनी बड़ी/लम्बी लट भी नहीं दिखी तो सब्जी में होने वाली सब्जी के रंग की ही छोटी-छोटी लटें कैसे दिख सकती हैं।इसमें वृद्धा की गलती ही क्या है जितना उसको दिखता है उतना तो वह देख ही लेती

है। इसी प्रकार कई महिलाएँ अंधेरे स्थान में बैठकर सब्जी सुधारती हैं। अंधेरे में सब्जी सुधारने से भी जीवों की हिंसा से नहीं बचा जा सकता है।

कई महिलाएँ चूल्हे/गैस पर सब्जी छौंकने के लिए तेल आदि चढ़ा कर सब्जी सुधारती हैं, क्या वे इतनी जल्दी सब्जी सुधारते समय जीवों को देख पायेंगी। कई महिलाएँ गप-शप करती हुईं सब्जी सुधारती हैं। कई महिलाएँ बच्चों को खिलाते हुए, कई इधर-उधर देखते हुए सब्जी सुधारती हैं। एक बार कुछ बच्चों ने बताया-''माताजी ! हम एक बार पंगत (सामूहिक भोजन) में भोजन करने गये थे। वहाँ जामफल की सब्जी बनी थी, उसमें लटें तैर रही थीं।'' आप सोचें ऐसा क्यों हुआ? लगभग 5-7 किलो जामफल की सब्जी बनी होगी। उसमें से एक-आध जामफल में लटें होंगी लेकिन सुधारने वाले ने एकागृता से सब्जी का शोधन नहीं किया, नहीं सुधारा। इसलिए उसमें लटें रह गईं। मैं तो सोचती हूँ सब्जी में लटें हों या न हों यदि विवेकपूर्वक नहीं सुधारते हैं तो हिंसा का पाप तो लगता ही है। टमाटर, मिर्ची आदि में उसी रंग की लटें रहती हैं यदि थोड़ा-सा ध्यान नहीं दिया तो टमाटर के साथ उनकी भी सब्जी बन जाती है और बिना देखे खाने वालों के पेट में पहुँच जाती है। कभी-कभी स्वच्छ-सुन्दर दिखने वाली ताजा सब्जी में भी लटें हो सकती हैं। हम ऊपर से अच्छी दिखने वाली सब्जी को लापरवाही से सुधार लेते हैं, क्या ऐसा करना उचित है, क्या ऐसा करते हुए हम अहिंसा का पालन कर सकते हैं? नहीं, अत: अच्छी आँखों वाले तथा चश्मा लगता हो तो लगाकर शांति से बैठकर सब्जी सुधारें। सब्जी सुधारने को सामान्य काम नहीं समझें, अपितु रत्नकरण्डक श्रावकाचार का स्वाध्याय करना समझें।

रस में कीड़े उछले :

एक बार एक परिवार के सभी रिश्तेदारों ने मिलकर आम के मौसम में निकट के बड़े शहर से अच्छे अर्थात् महँगे वाले आमों की पेटियाँ मँगवाईं। सबने एक ही दिन आम का रस निकाला। सबका रस लगभग तैयार हो चुका था। खाने की तैयारियाँ चल रही थीं तभी एक परिवार के किसी सदस्य ने रस को गहरी दृष्टि से देख लिया तो रस में फुदकते हुए कीड़े नजर आये। उसने घर वालों से कहा, ''ऐसा लग रहा है कि रस में कीड़े हैं।'' सबने उसकी बात

हँसी में टाल दी। लेकिन उसने जोर लगाकर कहा कि रस में निश्चित कीड़े हैं। तब सबने रस को अच्छी तरह से देखा तो सच ही रस में बहुत सारे कीड़े थे। तत्काल सभी रिश्तेदारों के यहाँ खबर दी गई तो सभी ने अपने-अपने रस में झाँककर देखा तो सभी के रस में कीड़े थे। यदि एक व्यक्ति रस को अच्छी तरह से नहीं देखता तो आप सोचें क्या होता? सबने रस इसलिए भी अच्छी तरह नहीं देखा कि इतने अच्छे आमों में कीड़े होने की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी लेकिन यह नियम तो नहीं बनाया जा सकता है कि फ्रेश-ताजा चीजों में कीड़े न हों।

अविवेक का 20 वर्ष पहले का एक उदाहरण मुझे आज भी याद आता है। एक शहर में हम लोग रुके हुए थे। हम लोगों के साथ लगभग 75 वर्ष की एक आर्यिका जी भी थीं। जब वे आहार करने गईं तो श्रावकों ने उन्हें खरबूजा दिया। उस खरबूजे में लम्बी सी लट चल रही थी। 75 वर्ष की वृद्धा को वो लट दिख गई लेकिन खरबूजा सुधारने वाले को/बनाने वाले को/ शोधन करने वाले को नहीं दिखी। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि हम सब्जी सुधारते समय कितनी सावधानी रखते होंगे? रखते हैं ? विवेक के अभाव में आज तक कितने जीव हमारे पेट में पहुँच गये होंगे हमें कितना पाप लगा होगा, सोचकर सब्जी सुधारते समय ध्यान रखें ताकि पाप से बच सकें।

सावधानियाँ :

(1) सब्जी सुधारते समय सब्जी के जिस टुकड़े में जीव हो या जो सब्जी सड़ी हो उसको एक तरफ छाया में सुरक्षित स्थान पर रख दें।

(2) छिलकों को पोलिथीन में भरकर नहीं फेंके, क्योंकि गाय-सूअर आदि छिलकों के साथ पोलिथीन को भी खा जाते हैं जो उनके मरने का कारण बन सकता है।

(3) सब्जी को 'काटो' न कहकर 'सब्जी सुधारो' बोलें, क्योंकि 'काटो' वचन सुनते ही ध्यान पशु आदि काटने की तरफ चला जाता है।

(4) शान्ति से बैठकर सब्जी सुधारें, आकुलता नहीं करें, क्योंकि सब्जी बनाने की अपेक्षा भी अहिंसा की दृष्टि से सब्जी सुधारना ज्यादा मौलिक है।

(5) बहुत छोटे बच्चे या वृद्धों से सब्जी नहीं सुधरवाएँ। यदि उनसे ही सुधरवाना

है तो पहले आप स्वयं बड़े-बड़े टुकड़े करके शोधन कर लें फिर उनसे छोटे टुकड़े करवा लें।

(6) किसी अनजान (अविवेकी) या नासमझ ने सब्जी सुधारी है तो छौंकने के पहले अच्छी तरह अवश्य देखें।

(7) रात में या अँधेरे में बैठकर सब्जी नहीं सुधारें।

(8) गप-शप करते हुए, टी.वी. देखते हुए सब्जी नहीं सुधारें।

सब्जियाँ ज्यादा हों तो :

भारत के अधिकतर स्थानों / गाँवों में सप्ताह में एक दिन बाजार लगता है। बाजार के दिन विशेष रूप से सब्जियाँ आती हैं। लोगों को पाँच-छह दिन की सब्जियाँ एक साथ खरीदनी पड़ती हैं अथवा छोटे गाँव के लोग जब बड़े शहर आदि में जाते हैं तो भी चार-आठ दिन के लिए सब्जियाँ-फल खरीद कर लाते हैं। उन सब्जियों को यदि व्यवस्थित ढंग से नहीं रखा तो बारिश/गर्मी आदि के मौसम में सब्जियाँ सड़ जाती हैं। कभी-कभी पूरा कद्दू खरीद लाते हैं या बगीचे, खेत आदि में लग जाते हैं अथवा कोई जान-पहचान वाला (छोटे गाँव का) कद्दू-लौकी आदि दे जाता है। जब तक वे बन्द रहते हैं उनमें दरार नहीं आती है अर्थात् उनमें हवा नहीं जाती है तब तक वे सुरक्षित रहते हैं परन्तु दरार आ जाने पर या फोड़ देने पर नमी या गर्मी के कारण उनमें फफूँद आने लगती है, वे सड़ने लगते हैं। पूरे कद्दू की सब्जी चाहे कितना भी बड़ा परिवार हो, नहीं खायी जा सकती है इसलिए बचा हुआ कद्दू आठ-दस दिन तक रखा रह सकता है। ऐसी स्थिति में उसमें निश्चित रूप से विकृति उत्पन्न होती है। यह अहिंसा धर्म की दृष्टि से तो पापात्मक है ही, उसके साथ स्वास्थ्य के लिए भी हानिकारक है। अत: आप कद्दू फोड़ने के पहले मौसम का ध्यान अवश्य रखें। यदि बारिस या गर्मी का मौसम है तो पहले यह सोच लें कि एक-दो दिन में ही हम इस कद्दू का उपयोग किस प्रकार कर सकते हैं, अन्यथा हिंसा का भागी बनना ही होगा।

इसी तरह पपीता, लौकी, तरबूज, खरबूज, कटहल, फूट ककड़ी आदि ऐसे फल/सब्जियाँ हैं जो एक दिन में खतम नहीं हो पाते हैं उनको खरीदने/फोड़ने/सुधारने के पहले सावधानी रखें अर्थात् बचे हुए फल-सब्जियों को

रिश्तेदार, आस-पड़ोस में अथवा गरीब लोगों को दे दें या फ्रिज आदि में सुरक्षित रखें ताकि उनमें उत्पन्न होने वाले जीवों की हिंसा से बचा जा सके।

सावधानी :

(1) यदि आप पूरे कद्दू आदि को खा भी नहीं पाते हैं और आप इतने उदार भी नहीं हैं कि किसी को बाँट सकें तो उसके पतले-पतले टुकड़े (चिप्स जैसे) बनाकर सुखाकर भी हिंसा से बच सकते हैं।

(2) कद्दू, बड़ी लौकी, तरबूज आदि को सही ढंग से रखें ताकि उनमें दरार नहीं आवे।

(3) यदि किसी कारण दरार आ गई हो तो उपर्युक्त विधि से उसका उपयोग कर लें।

(4) मौसम देखकर सब्जियाँ खरीदें। वैसे सावन भादवे में स्वास्थ्य की दृष्टि से भी सब्जियाँ कम खानी चाहिए। गर्मी के मौसम में खटाई, आम, ककड़ी आदि खाना ही ज्यादा उचित है इसलिए इन दिनों में सब्जियाँ कम खरीदें।

फ्रिज में रखते समय :

कई लोग बहुत आलसी होते हैं। अथवा कोई जल्दी काम करने की आदत वाले होते हैं। वे बाजार से सब्जी लाकर सीधी-सीधी फ्रिज में रख देते हैं। कभी-कभी तो यदि पालक, मेथी की पत्ती, धनिया पत्ती आदि के बण्डल को ही फ्रिज में रख देते हैं। बण्डल को खोलकर फटकते तक नहीं हैं, क्योंकि उन्हें शायद पता ही नहीं रहता है कि यह पत्तियों का बण्डल कब बाँधा गया होगा। सबसे पहले नम्बर का बाँधा गया बण्डल कितनी देर तक खेत में ही पड़ा रहा होगा। उसमें कितने छोटे-छोटे जीव आकर बैठ गये होंगे अथवा साँप, मेंढ़क, बिच्छू, छिपकली आदि बड़े जीव भी आकर बैठ सकते हैं। खेत वाला अपने टोकरे में सब बण्डलों को भरकर ले आया। छोटे जीव जो पत्तों पर चिपके रहते हैं वे तो उनको छोड़कर कहीं जाना ही नहीं चाहते हैं और बड़े साँप मेंढ़क आदि मरने के डर से अथवा जब तक वे भूख-प्यास से या गर्मी आदि से घबरा नहीं जाते, बाहर नहीं आते हैं। बिना खोले, फटके बण्डल को फ्रिज में रख देने पर वे जीव फ्रिज की ठण्डक को सहन नहीं कर सकने के कारण उसी में मर जाते हैं। अथवा थोड़ी देर जीवित रहते हैं तो अन्य वस्तुओं को भी चखकर

(जूठा करके) विषैला कर देते हैं। इसी प्रकार की एक घटना मैंने सुनी थी-

एक महिला ने पत्तियों (भाजी) का बण्डल बिना खोले ही फ्रिज में रख दिया। उस बण्डल में एक सँपोला (छोटा-सा साँप) बैठा था। फ्रिज की सर्दी से घबरा कर वह बण्डल के बाहर निकलकर (पास में रखी) दूध की तपेली पर चढ़ गया। वह दूध में गिरकर मर गया जिससे उसका शव दूध में नीचे बैठ गया। प्रात: बच्चों को स्कूल जाना था इसलिए उसने जल्दी-जल्दी तपेली को थोड़ा टेढ़ा करके दूध निकाला, गरम किया और बच्चों को पिला दिया। बच्चे दूध पीकर स्कूल चले गये। थोड़ी ही देर में स्कूल से बच्चों के मूर्च्छित होने के समाचार आये। मम्मी-पापा तत्काल स्कूल पहुँचे। लेकिन तब तक तो दोनों बच्चों के प्राण निकल चुके थे। स्कूल के अध्यापकों को कुछ भी समझ में नहीं आया कि अचानक दोनों बच्चे मर कैसे गये? डॉक्टर को बुलाया गया। डॉक्टर ने बच्चों की जाँच करके बताया कि दोनों बच्चों की विष चढ़ जाने से मृत्यु हुई है। बच्चों के शरीर में कहीं भी किसी विषैले जन्तु के काटने का कोई चिह्न नहीं था। घर में खोज की गई कि आखिर बच्चों को विष चढ़ा कैसे? तभी माँ को याद आया कि शायद हो सकता है दूध में कुछ विकृति हो, क्योंकि दूध के अलावा बच्चों ने कुछ खाया-पिया नहीं था। उसने फ्रिज में से दूध की तपेली निकालकर देखी तो उसमें एक छोटा-सा सांप मरा हुआ निकला। उसे देखकर सबने सोचा आखिर फ्रिज में साँप आया कहाँ से? जबकि उनके यहाँ फ्रिज कभी खुला छोड़ा ही नहीं जाता था। तब उस साँप के रंग आदि को देखकर समझ में आया कि यह साँप भाजी का है। यह सुनकर उस महिला को याद आया कि कल ही मैंने भाजी का बण्डल बिना खोले ही फ्रिज में रख दिया था संभवत: उसी में यह साँप........।

बिना देखे-बिना खोले बण्डल को फ्रिज में रख देने का कितना बड़ा दुष्फल हुआ। साँप तो मरा ही, साथ में दो बच्चे भी मर गये। यदि उस दूध को और कोई पीता तो वह भी मर जाता। छोटे जीव तो कितने मरते होंगे, उनकी तो गिनती ही नहीं की जा सकती है। अत: आप फल-सब्जी को फ्रिज में रखने के पहले अच्छी तरह शोधन करके, धोकर रखें ताकि सब्जी पर चिपके हुए कीटाणुओं की हिंसा नहीं हो और आपके स्वास्थ्य पर भी दुष्प्रभाव नहीं पड़े।

सावधानी :

(1) सब्जी, फल के गुच्छों आदि को फ्रिज में रखने के पहले बिखेर कर, फटक कर देख लें।

(2) फ्रिज को बार-बार खुला नहीं छोड़ें ताकि उसमें चूहा, छिपकली आदि नहीं घुस पावे।

(3) यदि लाइट बहुत कम आती हो तो फ्रिज में सब्जियाँ नहीं रखें।

सब्जी बनाते समय :

आप सब्जी बनाते समय सब्जी को छौंककर खुली न छोड़ें, क्योंकि सब्जी खुली छोड़ने से कोई भी जीव उसमें गिर सकता है। कभी-कभी तो सब्जी खुली छोड़ देने पर छिपकली, छोटे मेंढ़क आदि भी गिर जाते हैं। भिण्डी आदि ऐसी सब्जियाँ हैं जिनको ढक देने पर लार छूटने लगती है उनको बनाते समय बर्तन का ढक्कन या तो एक तरफ से थोड़ा-सा खोल लें या जाली से ढककर बनावें ताकि सब्जी में लार भी नहीं छूटे और जीव भी नहीं गिरे। एक महिला हमेशा सब्जियाँ खुली छोड़कर ही बनाती थीं। उसका विचार था कि सब्जियों को ढककर बनाने से सब्जी का रंग खराब हो जाता है। एक दिन वह कद्दू की सब्जी बना रही थी। उसमें एक छोटी सी छिपकली आकर गिर गई। जब उसने खुरपे से सब्जी हिलाई तो छिपकली के टुकड़े हो गये। उस दिन योग से वो ही सबसे पहले भोजन करने बैठी। भोजन के अन्तिम ग्रास में उसको छिपकली का एक टुकड़ा दिखा। तब तक उसको जहर चढ़ चुका था। तत्काल डॉक्टर को दिखाया। डॉक्टर ने उसे उल्टियाँ करवा करके पूरा विष निकाल दिया। पुण्योदय से वह ठीक हो गई। फिर भी उस बुद्धिमती ने सब्जी ढककर बनाना शुरू नहीं किया। आपको यदि सब्जी ढककर बनाना अच्छा नहीं लगता है तो आप जाली से ढककर बनायें। ताकि पाप से भी बच सकें और स्वस्थ भी रह सकें।

यदि आपने आध-पौन घण्टे पहले भी सब्जी सुधार कर रखी है तो बनाते समय अर्थात् छौंकते समय एक बार पुन: देखलें। उसमें कोई जीव आकर बैठ गया हो या खाने के लोभ में उसमें आ गया हो तो दिख जावे। यदि सब्जी को पानी में डाल रखा है तो भी एक बार देखलें, क्योंकि कभी-कभी ठण्डक

के कारण चींटी आदि कीड़े-मकोड़े आ जाते हैं।

सब्जी धोकर सुधारने के बाद भी यदि रखी रही है तो उसे यदि धोने योग्य सब्जी है तो एक बार पुन: अवश्य धो लें ताकि यदि कोई जहरीला जीव उसको चख गया हो, उसका मल-मूत्र सब्जी में गिर गया हो या विषैला जीव उसको सूंघ गया हो तो धुल जावे अन्यथा सब्जी खाने वाले को भी जहर चढ़ सकता है अत: सावधान रहें।

आप सब्जी बनाने के पहले, जिस बर्तन से सब्जी छौंक रहे हैं और जिस बर्तन में सब्जी छौंकना है दोनों को देख लें तथा धो लें। घी-तेल को भी एक बार दृष्टि डालकर देख लें उसमें भी कोई विषैले जीव-जन्तु हो सकते हैं। एक बार एक महिला परवल की सब्जी छौंक रही थी। परवल में बड़े-बड़े बीज थे। उसने बीजों को निकालकर खरल में बाँट लिया। बाँटने के बाद सोचा कि क्यों बर्तन व्यर्थ खराब किया जावे। उसने खरल ही उठाकर पीसे हुए बीजों को कढ़ाई में डाल दिया। खरल के नीचे एक छिपकली बैठी थी। जैसे ही उसने बीजों को कढ़ाई में डाला वह छिपकली उछलकर उस महिला की गोदी में गिर गई। यूँ समझो छिपकली उछल गई इसलिए कढ़ाई में नहीं गिरी। यदि वह उस महिला की तरफ नहीं उछलकर कढ़ाई में उछलती तो एक कटोरी साफ करने के आलस में कितनी बड़ी हिंसा हो जाती। छिपकली मरने का पाप किसको लगता? सब्जी बनाने वाले को ही न, अत: सब्जी बनाते समय विवेक रखें।

इसी प्रकार सब्जी सुधारते, रखते, बनाते समय और भी जो सावधानी आवश्यक है, विचार करके विवेक पूर्वक कार्य करें।

● आटा छानते समय :

सभी घरों में प्रतिदिन रोटी बनती है। मेरे अनुमान से मात्र उच्च कुलों में जब भी रोटी बनाई जाती है, आटा छानकर बनाई जाती है। चाहे रोटी बनाते समय रोटी बेलने के लिए थोड़े से आटे की भी आवश्यकता पड़े तो भी आटा छानकर ही डाला जाता है लेकिन आटा छानने का उद्देश्य शायद 10% लोगों को भी पता नहीं होगा। कोई आटे को बारीक करने के लिए छानते हैं तो कोई काकी, नानी, दादी, माँ आदि जब भी रोटी बनाती हैं आटा छानकर बनाती

हैं इसलिए परम्परा से प्रेरित हो आटा छानती हैं। आटा छनता अवश्य है। बिना लक्ष्य के किया गया श्रम कुछ भी फल देने वाला नहीं होता है। इस प्रकार रूढ़ि से किया गया काम तो ऐसा लगता है कि जैसे -

किसी गाँव के एक घर में शादी हो रही थी। वहाँ अचानक एक बिल्ली आ गई। दूल्हे की माँ ने सोचा कहीं बिल्ली रास्ता नहीं काट दे। यदि बिल्ली ने रास्ता काट दिया तो अपशकुन हो जायेगा। इसलिए उसने बिल्ली को एक टोकरे से ढक दिया। दूसरे दिन जब शादी पूरी हो गई, घर में दुल्हन आ गई तो दूल्हे की माँ को याद आया कि अरे, मैंने कल बिल्ली को टोकरे के नीचे ढक दिया था, बेचारी तड़फ रही होगी। उसने जल्दी-जल्दी जाकर टोकरा हटाया। टोकरा हटाते ही बिल्ली निकलकर भाग गई। यह सब घटना बहू देख रही थी। यह भी कोई रस्म होनी चाहिए यही सोचकर बहू ने पूरी बात याद रख ली। कालान्तर में बहू के पुत्र की शादी का अवसर आया तो उसने अपने पति से कहा-पहले आप एक बिल्ली लेकर आओ, उसके बाद में सब कार्यक्रम होंगे। उसके पति ने कहा-''क्यों, शादी में बिल्ली की क्या आवश्यकता है?'' उसने कहा-''जब मेरी शादी हुई थी माँ (सासूजी) ने एक टोकरे के नीचे बिल्ली को ढक कर रखा था। जब मैं घर में आ गई तब मेरे सामने ही बिल्ली को निकाला था। यह भी अपने घर में शादी की रस्म है.....।'' इस घटना से स्पष्ट समझ में आता है कि रूढ़ियाँ कितनी मौलिक होती हैं। इसलिए आप उद्देश्य बनाकर काम करें।

आटा छानने का उद्देश्य जीवरक्षा होना चाहिए। जैन धर्म की और जैनियों की कोई भी क्रियाएँ अहिंसा से हटकर नहीं होती हैं। रखे हुए आटे में कहीं चींटी आदि जीव-जन्तु चढ़ गये हों या उसी में उत्पन्न हो गये हों अथवा किसी जीव ने मरे हुए जीवों के कलेवर लाकर डाल दिये हों, वे जीव आटा छानने से चलनी के ऊपर आ जावें। हमारे खाने में न आवें, क्योंकि हम शाकाहारी हैं, अहिंसक हैं, भगवान महावीर के अनुयायी हैं। जो विवेकवती महिलाएँ होती हैं वे आटा छानकर निकले हुए चौकर को थाली आदि में डालकर शोधन करके पुन: आटे में मिला लेती हैं क्योंकि उन्हें पता रहता है कि चौकर से युक्त आटे की रोटी खाने से कब्जी नहीं होती है, पेट जल्दी साफ हो जाता है। जो न

धर्मात्मा होते हैं और न ही विवेकवान होते हैं वे बिना शोधन किये ही चौकर को गाय के सामने या धोवन में या सड़क पर फेंक देते हैं। बिना शोधे चौकर को गाय आदि के सामने डालने से आटा छानने का फल नहीं मिलता, क्योंकि चौकर में जो जीव-जन्तु थे वे हमारे आटा लगाते, रोटी बेलते-सेकते समय हमारे हाथ से न मरकर गाय के मुँह में जाकर मर गये या पानी आदि में डूबकर मर गये, उनकी जान तो नहीं बची। इससे तो आटा छानना और नहीं छानना बराबर ही हो गया। इसमें तो आटा छानने की मेहनत और चलनी खरीदने का आर्थिक व्यय विशेष ही हुआ।

कई महिलाएँ चौकर को किसी बर्तन में भरती जाती हैं। ऐसा करने से चौकर के जीव पानी आदि में डूबकर तो नहीं मरते हैं लेकिन चौकर के डिब्बे में इतनी इल्लियाँ उत्पन्न हो जाती हैं जिनकी गिनती नहीं की जा सकती है। महीने-पन्द्रह दिन में कभी प्रमादवश डिब्बा उठाकर बिना शोधे ही गाय के बाँटे में डाल देती हैं अथवा बेच देती हैं। सामने वाला आपके चौकर को शोधन करके गाय को खिलायेगा। ऐसी तो कल्पना ही नहीं की जा सकती है। क्योंकि हमारे जैसे धर्मात्मा लोगों ने ही चौकर को शोधन करके नहीं दिया तो वह कैसे शोधन कर सकता है? क्या ऐसा करना उचित है? क्या ऐसा करते हुए हिंसा से बचा जा सकता है? कदापि नहीं। अत: चौकर को शोधन करके ही फेंके या खावें।

आटा, सूजी, मैदा आदि बाजार से खरीदकर कभी उपयोग नहीं करें, क्योंकि बाजार की सूजी-मैदा आदि महीनों/वर्षों तक रखे रहते हैं। इन चीजों में विशेष रूप से जीव भी उत्पन्न होते हैं। कभी-कभी तो पाँच-सात किलो मैदे में मुट्ठी भर लटें निकल आती हैं। मुझे तो ऐसा लगता है कि बाजार के मैदे को तो जितनी बार छानो लटें निकलती ही जाती हैं, लटें समाप्त ही नहीं होती हैं। इसलिए आप थोड़ी-सी मेहनत करके घर पर ही मैदा/सूजी तैयार करके सैकड़ों जीवों की हिंसा से बच सकते हैं। इसके साथ-साथ इससे होने वाली बीमारियों से भी बच सकते हैं।

दूसरी बात, सूजी बनाने के लिए फैक्टि-यों में जो गेहूँ खरीदे जाते हैं वे अधिकतर सस्ती क्वालिटी के होते हैं। यदि अच्छी क्वालिटी के भी हों तो

भी बहुत दिनों तक रखे रहने से उनमें जीव उत्पन्न हो ही जाते हैं। उनको साफ करने का समय किसी के पास नहीं है और न ही फैक्ट-ी वाले उन्हें साफ करने की आवश्यकता ही समझते हैं, क्योंकि वे मैदा-सूजी आदि फैक्ट-ी वालों को नहीं खाने होते हैं और खाने भी हों तो वे धर्म को नहीं समझते हैं इसलिए उनको इस बात का कोई विकल्प भी नहीं होता है। उनको तो मात्र पैसे से मतलब रहता है तभी तो वे बिना शोधन किये ही उनकी (गेहूँ की) सूजी/मैदा तैयार कर लेते हैं। उस मैदे के साथ करोड़ों जीवों का कलेवर भी हमारे खाने में आ जाता है। ऐसा मैदा खाते हुए हम कैसे शाकाहारी हो सकते हैं और कैसे अपने आप को विवेकवान कह सकते हैं। अत: मैदा-सूजी हाथ से ही तैयार करें या अपने विश्वासपात्र सेठ के यहाँ से मैदा खरीद कर काम में लें। मैदा लाकर अच्छी तरह शोधन करें। ताजा मैदे में जीव नहीं भी होते हैं।

सावधानी :

(1) आटा छानकर चौकर को किसी प्लेट या थाली में लेकर शोधन करें। यदि कोई जीव आदि हो तो उन्हें निकालकर एक तरफ छाया में रखें ताकि वे अपनी आयु तक जीवित रह सकें।

(2) चौकर को इकट्ठा करते हैं तो बहुत दिन तक नहीं रखें। गाय आदि को डालने के पहले शोधन कर लें।

(3) चौकर को शोधन कर आटे में ही डाल दें तो दोहरा लाभ होगा।

(4) आटे के बर्तन को ढककर रखें ताकि जीवों के कलेवर, धूल, कचरा आदि उसमें नहीं गिरें।

(5) नया आटा भरने के पहले बर्तन के किनारे आदि अच्छी तरह साफ कर लें ताकि पुराने आटे के कण उसमें न रहें। पुराने आटे के कण रहने से भी बहुत जल्दी जीव उत्पन्न होते हैं। बर्तन को धोकर भी साफ कर सकते हैं।

(6) यदि चलनी (आटा छानने की) में एक छेद भी हो गया हो तो उसे बन्द कर दें, क्योंकि उस छेद में से भी जीव आटे के साथ नीचे निकलकर हमारे भोजन में आ सकते हैं।

(7) मैदा-सूजी को विशेष रूप से शोधन करके काम में लें।

वस्तुओं को तलने के बाद :

संसार में प्राणी शरीर की स्वस्थता एवं शरीर को पुष्ट बनाने के लिए इतना नहीं खाता है जितना जिह्वा से स्वाद लेने के लिए खाता है। वस्तु को जितने मसाले, तेल हींग आदि से संस्कारित किया जाता है उतना ही उसका स्वाद तो बनता है लेकिन उसमें से विटामिन प्रोटीन लगभग समाप्त हो जाते हैं। प्राकृतिक वस्तुएँ जितनी स्वादिष्ट होती हैं उतने स्वादिष्ट संस्कारित पदार्थ नहीं होते फिर भी व्यक्ति को संस्कारित पदार्थों का स्वाद ज्यादा अच्छा लगता है, उनको खाने में आनन्द आता है क्योंकि उसने आजतक प्राकृतिक वस्तुओं का स्वाद लिया ही नहीं है। मेरे अनुमान से पशु-पक्षी कोई संस्कारित वस्तुएँ नहीं खाते हैं इसलिए वे स्वस्थ रहते हैं और मनुष्य बीमार रहते हैं/हो जाते हैं, क्योंकि संस्कारित वस्तुओं को खाते समय खाने का विवेक समाप्त हो जाता है। उसी का फल होता है कि हम अच्छा खाकर भी अस्वस्थ हो जाते हैं। अस्तु। वस्तु को स्वादिष्ट बनाने की एक विधा तलने की भी है। किसी घर में 8-15 दिन में पूड़ी, पकौड़ी, पापड़-पपड़ियाँ आदि तले जाते हैं तो किसी घर में दो-चार दिन में तले जाते हैं। मध्यप्रदेश में लगभग 90% घरों में प्रतिदिन कढ़ाई में कुछ-न-कुछ तला जाता है। कुछ तले या न तले पूड़ी तो अवश्य तली ही जाती है। वैसे स्वास्थ्य की दृष्टि से तली हुई चीजें खाने का अर्थ लीवर/पाचनतंत्र को खराब करना है। यहाँ बात तलने में विवेक की है। पूड़ी आदि तलने के बाद घी तेल पूरा तो समाप्त हो ही नहीं सकता है, क्योंकि थोड़ा तेल बचने पर उसमें कोई भी वस्तु तली नहीं जा सकती है। उस बचे हुए तेल को कई लोग यह सोचकर कि शाम को अथवा कल तो फिर तलना है, कढ़ाई को क्यों साफ किया जावे ऐसे ही रख देते हैं। तेल-घी की खुशबू से चींटियाँ, मक्खियाँ, मच्छर आदि-आदि आकर तेल-घी खाने की कोशिश करते हैं। वे घी-तेल तो कम खा पाते हैं लेकिन चिकनाई के कारण उसी में चिपक जाते हैं। कभी-कभी तो 100-50 चींटियाँ उस थोड़े से तेल में गिरकर मर जाती हैं। इसी प्रकार मक्खियाँ और मच्छर भी आकर उसमें गिरकर मर जाते हैं। जब हम शाम को या दूसरे दिन कुछ तलने के लिए कढ़ाई देखते हैं तो उसमें चींटियाँ, मच्छर आदि दिखते हैं, हम उनको निकालकर फेंक देते हैं। उन सब

जीवों के मरने का पाप किसको लगता होगा? कई लोग तलने के बाद कढ़ाई आदि को ढक देते हैं लेकिन कढ़ाई किसी भी ढक्कन से अच्छी तरह ढकी नहीं जा सकती है। उसमें इधर-उधर की पोल से जीव पहुँच ही जाते हैं, क्योंकि प्रत्येक जीव को अपना आहार ढूँढ़ने में सबसे ज्यादा चतुराई होती है। कई लोग उस तेल को एक डिब्बे में भर लेते हैं लेकिन डिब्बे को अच्छी तरह पौंछते नहीं हैं इसलिए डिब्बे के किनारे में थोड़ा-थोड़ा तेल भर जाता है या किनारे चिकने रह जाते हैं, उन किनारों में भी मच्छर आदि चिपककर मर जाते हैं। बिना किनारी का डिब्बा भी यदि बाहर से थोड़ा-सा भी चिकना रह जाता है तो उसमें जीव चिपककर मर जाते हैं।

हम लोगों के पास भी कभी-कभी महिलाएँ घी की डिब्बी, मलाई की कटोरी या तेल की शीशी लेकर आती हैं। उस डिब्बी, शीशी के किनारों में या उसी पर दो-चार मच्छर चिपके हुए मिल ही जाते हैं या वे वहीं छोड़कर चली जाती हैं तो कभी-कभी प्रातःकाल उठकर देखने पर उनमें सैकड़ों की संख्या में मच्छर/चींटियाँ जीवित /मरी हुई मिल जाती हैं। यदि शीशी/डिब्बी को पहले से साफ पौंछ लेते, अच्छी तरह ढककर रखते तो शायद इतनी चींटियाँ, मक्खी, मच्छर आदि चिपककर नहीं मरते।

कभी-कभी पराठे आदि बनाने के लिए कटोरी में तेल/घी निकालते हैं। उसमें भी ऐसी ही स्थितियाँ बनती हैं, कभी जब नया घी-तेल मंगाना होता है तो पुराने घी-तेल को किसी कटोरी आदि में निकाल लेते हैं उनमें भी ऐसी ही स्थिति बनती है। कई घरों में चम्मच से घी-तेल निकालते हैं अथवा चम्मच या कपड़े से पराठे आदि बनाते समय घी-तेल लगाते हैं। घी निकालकर चम्मच को ऐसे ही बिना पौंछे ही रख देते हैं, उनमें भी ऐसी ही स्थिति बनती है। उस चम्मच आदि में भी थोड़ा-सा घी-तेल इकट्ठा हो जाता है। उसमें चिकनाई के कारण जीव आकर चिपकते हैं। उस चम्मच कटोरी आदि को आटे से पौंछ लेते या बर्तनों के साथ तत्काल साफ कर लेते, जिस कपड़े से घी-तेल लगाया था उस कपड़े को इधर-उधर न फेंककर जला देते या कपड़ों के साथ धो लेते तो इस हिंसा से अवश्य बच जाते हैं, बच सकते हैं।

पापड़/खीचले आदि को जब तलकर रख देते हैं तो उनमें से थोड़ा-

थोड़ा तेल जिसमें पापड़ आदि रखे हैं उस बर्तन में इकट्ठा हो जाता है। पापड़ आदि को तलने के बाद ढका नहीं जाता है। वह थोड़ा-सा तेल पापड़-खीचले से तो ढका ही रहता है इसलिए बाहर नहीं दिखता है लेकिन उसकी पोल में से जीव अन्दर चले ही जाते हैं और भोजन के लोभ में अपनी जान गँवा देते हैं।

कभी-कभी घरों में पापड़-खीचले आदि बेलने के लिए कटोरी में घी/ तेल निकालते हैं। यदि एक ही दिन में पापड़ बेले जायें तो फिर भी बेलन, चकला पाटा, तेल की कटोरी आदि को व्यवस्थित कर देते हैं लेकिन कभी थकान के कारण अथवा समय नहीं बचने के कारण बेलन-चकला आदि को ऐसे ही रख देते हैं पूरी रात और जब तक दूसरे दिन पापड़ बेलना शुरू नहीं करते तब तक उस कटोरी में, उन बेलन, चकला आदि पर मच्छर आदि चिपकते रहते हैं, चिपक सकते हैं अत: तेल घी की कटोरी, बेलन, चकला आदि को व्यवस्थित ढंग से रखें ताकि जीवों की हिंसा न हो।

सावधानी :

(1) आप चम्मच, कढ़ाई, कटोरी आदि में लेकर जब भी तेल का उपयोग करें, तेल का काम होते ही तत्काल उनको साफ कर लें। अथवा टाट/ फट्टी आदि से अच्छी तरह पौंछ लें ताकि उनमें चिकनाई नहीं रहे।

(2) पापड़-खीचले आदि को तलने के थोड़ी देर बाद ही किसी दूसरे बर्तन में रख लें अथवा तलकर किसी पेटी में भरें ताकि उसका ढक्कन बन्द किया जा सके। ठण्डे होने के बाद ढक देने पर वे नरम भी नहीं होते हैं।

(3) कढ़ाई आदि के तेल को किसी डिब्बे आदि में भरकर बन्द कर दें और डिब्बे को अच्छी तरह पौंछ लें तो डिब्बे पर एक भी जीव नहीं चिपकेगा।

(4) यदि कटोरी आदि में तेल-घी निकाला है तो पूरे का उपयोग करलें अथवा डिब्बे में डालकर ढक दें अथवा आटे या बेसन से पौंछ लें ताकि उसका उपयोग हो जावे। यह सबसे अच्छा तरीका है।

(5) आप यह लोभ नहीं करें कि बार-बार कढ़ाई, कटोरी आदि साफ करने से तेल ज्यादा खराब होगा। भले ही साल में सौ-दो सौ ग्राम तेल ज्यादा खर्च हो जावे, इतना नुकसान नहीं होगा जितना लाभ जीवों की रक्षा करने से आपको मिलेगा।

नोट – ये सब कार्य अहिंसा की दृष्टि से, पाप से बचने के लिए करें। मात्र साफ-सफाई और तेल बचाने के लिए नहीं, क्योंकि उद्देश्य के अनुसार ही कर्मों का बन्ध होता है।

नाश्ता आदि रखते समय :

अधिकतर घरों में नमकीन चूड़ा, पपड़ियाँ, पूड़ी, खीचला, पापड़ आदि वस्तुएँ तलकर 7-8 दिन के लिए नाश्ता तैयार करके रख लिया जाता है। कभी-कभी जल्दी-जल्दी में नमकीन आदि को गरम-गरम ही डिब्बे में रख लिया जाता है। यदि दो - तीन दिन तक नाश्ता आदि निकालने का काम नहीं पड़े तो उस नाश्ते में से महक/गन्ध आने लगती है। नाश्ते में से थोड़े-थोड़े तार निकलने लगते हैं। यद्यपि वे तार थोड़े दिन तक दिखते नहीं हैं लेकिन यदि अधिक दिन तक वह डिब्बा नहीं खुले तो नाश्ते पर फफूँद आने लगती है। उस फफूँद में अनन्त निगोदिया जीव होते हैं। कहते हैं कि सुई की नोक के बराबर फफूँद में भी अनन्त जीव होते हैं। उस फफूँद को छूते ही अनन्तानन्त जीव एक साथ मरण को प्राप्त हो जाते हैं। मजबूर होकर नहीं चाहते हुए भी और जानते हुए भी उस फफूँद को पौंछना ही पड़ता है। यदि हम पहले ही थोड़ा विवेक रखते, नाश्ते आदि को थोड़ा ठण्डा करके डिब्बे में भरते तो हमें इतना बड़ा पाप नहीं करना पड़ता।

इसी प्रकार पापड़, खीचले, बड़ी आदि बनाते समय भी ध्यान रखें। पापड़ आदि को अच्छा सूख जाने के बाद ही ठण्डा करके डिब्बे आदि में भरें अन्यथा दो-चार दिन में डिब्बा खोलकर देखने पर पापड़ पर पापड़ चिपके हुए मिलेंगे। पापड़ के बीच में एक गोलाकार बनने लगेगा। यह पापड़ में विशेष जीव उत्पन्न होने का एक संकेत है अत: अनावश्यक हिंसा से बचने के लिए पहले से ही सावधानी रखें।

कभी-कभी घर में मगद बेसन के लड्डू भी इसी प्रकार से रख लिये जाते हैं अथवा शादी, बर्थडे आदि के कार्यक्रमों में बनने वाले गुलाबजामुन, लड्डू, मोतीचूर, बर्फी आदि मिष्टान्न बच जाते हैं। जो समझदार होते हैं वे तो इन मिठाइयों को स्कूल, रिश्तेदार, गरीब लोगों को बाँटकर खतम कर देते हैं और जिनका लोभ संवृत नहीं हो पाता है वे उनके छोटे-छोटे टुकड़े करके या

चूरा करके सुखा देते हैं, उनकी मिठाइयों में विशेष जीव उत्पन्न नहीं होते हैं। बची हुई पूड़ियों को भी एक-एक को अलग-अलग बिखेरकर सुखा देते हैं। जो इस प्रकार विवेक नहीं रखते हैं उनकी मिठाइयों में फफूँद की बात तो बहुत दूर लम्बी-लम्बी लटें तक उत्पन्न हो जाती हैं। जब मैं छोटी थी तब एक घर में शादी हुई थी। शादी में बूँदी के लड्डू मुख्य रूप से बने थे। शादी के बाद बचे हुए लड्डुओं को उस महिला ने विवेक का अभाव होने से पूरे के पूरे या किसी के दो-तीन पीस करके धूप में सुखा दिये। लड्डू ऊपर-ऊपर से सूखे दिखने लगे। लेकिन चार-आठ दिन में ही उनमें से लाल-लाल रंग की दो-तीन सेंटीमीटर लम्बी लटें निकलने लगीं। उसका कारण मुझे अब समझ में आया कि लड्डुओं के अन्दर नमी थी और बाहर से धूप की गर्मी लगी। इस तरह शीतोष्ण योनि बन जाने से लटें उत्पन्न हो गईं। इसी प्रकार कभी-कभी रोटियाँ बच जाती हैं, कभी अतिथिसंविभाग करते समय, तो कभी मेहमानों के आने की सम्भावना के कारण या कभी घर के सदस्यों के ही रात हो जाने से या अचानक बाहर चले जाने से या बीमारी आदि के कारण रोटियाँ बच जाती हैं। उन रोटी-पराठों को भी अच्छी तरह फैलाकर नहीं सुखाया, अलट-पलट नहीं किया तो उनमें भी कभी फफूँद तो कभी हरी-हरी काई लग जाती है और कभी तो रोटियाँ काई के कारण काली हो जाती हैं।

कभी टिफिन लेकर बाहर गये या पिकनिक आदि में गये , जितना भाया उतना खाया, शेष टिफिन में रखा रहा। घर पर आकर टिफिन को एक तरफ रख दिया। दो-चार दिन तक खोलना ही भूल गये तो बची हुई पूड़ी, सब्जी, लौंजी आदि में फफूँद आ जाती है। टिफिन पूरा खाली है तो भी यदि उसे साफ नहीं किया अथवा अच्छी तरह पौंछकर नहीं रखा तो उसमें अर्थात् लौंजी आदि के कणों/अंशों में इसी प्रकार के जीव उत्पन्न हो सकते हैं इसलिए टिफिन को सुबह-शाम के बर्तनों के साथ ही साफ कर लेना चाहिए।

भोजन के बाद बची हुई दाल, ज्यादा पानी वाली सब्जी आदि को यदि जल्दी-जल्दी व्यवस्थित नहीं किया तो उसमें इतने जीव उत्पन्न हो जाते हैं जिनकी गिनती नहीं बताई जा सकती है। कभी-कभी तो ठण्डी दाल भी उबलती सी नजर आने लगती है। उसमें बुलबुले उठने लगते हैं। उसे खाने का मन तो

हो ही नहीं सकता है; कोई जबरदस्ती खा ले तो स्वास्थ्य खराब हुए बिना नहीं रहता है।

सावधानी :

(1) नाश्ता आदि को गरम-गरम ही डिब्बे आदि में भरकर बन्द न करें। यदि करना ही पड़े तो समय मिलते ही डिब्बा खोलकर सबको उलट-पलट कर लें।

(2) ऐसा लोभ नहीं करें कि दाल-सब्जी आदि को जीवों की उत्पत्ति के बाद फेंकना पड़े। रात-भर रखने की अपेक्षा शाम को ही किसी गरीब को देकर उपयोग करें। ऐसा नहीं कर सकते हैं तो फेंकना भी लाभदायक ही है।

(3) यदि ज्यादा मात्रा में दाल-सब्जी बची है तो जिसके यहाँ गाय-भैंस हो या डेरी हो तो भूसे में मिलाकर खिला दें। इसमें यदि स्कूटर से भी जाना पड़े, थोड़ा समय भी लगे तो भी दाल-सब्जी के सड़ने के पाप से बचकर अहिंसा धर्म का पालन होगा।

(4) नाश्ता ठण्डा करके भी भरा हो तो भी हवा लगाते रहें।

(5) यदि ऐसा करने की गुंजाइश नहीं है, दाल-सब्जी फेंकनी ही पड़ रही है तो एक जगह ढेर लगाकर नहीं फेंके। बिखेर-बिखेर कर डालें ताकि वे सूख जावें, उनमें बदबू नहीं आवे, जीव उत्पन्न न हों।

चूल्हा आदि जलाते समय :

यद्यपि आज गैस का जमाना है फिर भी चूल्हा, सिगड़ी, बुरादे की सिगड़ी, मिट्टी की सिगड़ी आदि का अभाव नहीं कहा जा सकता है। रसोई घर में भले ही इनका उपयोग कम होता है लेकिन नहाने-धोने का पानी गरम करने में तो इनका उपयोग अधिकतर कर ही लिया जाता है। सिगड़ी आदि जलाने के लिए सिगड़ी में शाम को ही कागज, पत्ते, लकड़ी के पतले-पतले छिलके आदि अग्नि को जल्दी पकड़ने वाला ईंधन भरकर रख देते हैं ताकि सुबह इन कार्यों में समय खराब नहीं करना पड़े। सुबह जल्दी से माचिस से ईंधन को जला देते हैं। कई बार उस ईंधन में छिपकली, साँप, मकड़ियाँ आदि जीव आकर बैठ जाते हैं। अग्नि जलते ही वे निकलने की कोशिश करें तो भी नहीं निकल पाते हैं, क्योंकि उनके चारों ओर अग्नि ही अग्नि होती है। चाहे शाम को अच्छी

तरह शोधन करके भी रखा हो, आप जलाने के पहले ईंधन को निकालकर थोड़ा-सा फटक अवश्य लें ताकि इन जीवों की हिंसा के पाप से बच सकें।

पुराने जमाने में अधिकांश स्थानों पर चूल्हा जलाने के पहले राख अलग कर दी जाती थी तो कई घरों में सुबह-शाम अथवा शाम की रोटी बनाने के बाद चूल्हा लीप लिया जाता था, ऐसा वे किस उद्देश्य से करते थे वह तो मुझे भी पता नहीं है लेकिन लीपने मात्र से तो अहिंसा नहीं पल सकती। आप राख निकालें या नहीं निकालें, चूल्हा लीपें या नहीं लीपें, जलाने के पहले एक बार देख अवश्य लें, क्योंकि कभी-कभी चूल्हे में भी छिपकली, मेंढ़क, साँप आदि बैठ सकते हैं चूहे आदि अपना घर बना सकते हैं। एक दिन एक लड़की ने बताया-माताजी, मैं एक दिन बर्तन साफ कर रही थी। मेरे हाथ में घड़ी बँधी हुई थी। मैंने पानी से घड़ी खराब न हो जाय यह सोचकर घड़ी खोलकर चूल्हे में रख दी, क्योंकि बाहर रखती तो किसी बच्चे आदि के उठाकर ले जाने की सम्भावना थी। मैं बर्तन साफ करके अपने काम में लग गई। शाम का समय था इसलिए घड़ी की याद भी नहीं आई। घड़ी रात-भर चूल्हे में ही रखी रही। सुबह उठकर चूल्हा लीपा हुआ था इसलिए मामी जी ने बिना देखे ही जला दिया। चूल्हे में ईंधन के साथ घड़ी भी जल गई। जब मुझे घड़ी की याद आई तो मैंने सीधी चूल्हे में घड़ी ढूँढ़ी। घड़ी तो जल चुकी थी, चूल्हे में से केवल डायल चेन आदि मिले। हम सोचें, घड़ी जैसी बड़ी चीज भी चूल्हा जलाने के पहले नहीं दिखी तो छोटे-छोटे जीव कैसे दिख सकते हैं? ऐसे प्रमादी लोगों के चूल्हे में तो मेरे अनुमान से साँप-बिच्छू, चूहा आदि भी जल जावे तो कोई आश्चर्य वाली बात नहीं है।

कई बार गैस का चूल्हा जलाते समय भी यदि उसको नहीं देखा गया तो उसके नीचे लगे पाइप आदि के आश्रित मकड़ियाँ, छिपकली, कॉक्रोच आदि बैठे रह सकते हैं। यद्यपि गैस चालू करते ही उसकी गन्ध से वे जीव अपनी जान बचाने की कोशिश करते हैं लेकिन सभी इतने जल्दी नहीं भाग पाते हैं। एक दिन एक लड़की ने जल्दी में सरसरी दृष्टि से ही गैस को देखकर जला दिया। चूल्हा जलते ही उसमें से मकड़ियाँ जल्दी-जल्दी निकलकर भागने लगीं। उसने जल्दी से गैस बन्द कर दिया फिर भी मेरे अनुमान से 8-10 मकड़ियाँ तो जलकर

मर ही गई होंगी। जो गैस चालू करने के पहले चूल्हा बर्नर, पाइप आदि को देखते ही नहीं हैं उनके यहाँ कितने जीवों की हिंसा होती होगी, कहा नहीं जा सकता है। कभी-कभी बर्तन में दाल-दूध आदि उबल जाने अथवा चासनी/ शक्कर आदि के कण रह जाने से चींटियाँ आकर चासनी आदि खाने लगती हैं। कभी-कभी रात्रि में गैस पर काम किया है तो अथवा नहीं भी किया है तो भी बिजली जलने के कारण कीड़े, पतंगे आदि आकर गिर जाते हैं उनको खाने के लिए भी चींटियाँ आ जाती हैं जो गैस जलाते ही मर जाती हैं।

कोई भी ईंधन हो अर्थात् कोयला, लकड़ी, कण्डे, कागज, पत्ते, टूटे-फूटे कार्टून के टुकड़े, लकड़ी के गट्टे, लकड़ी का बुरादा अथवा इधर-उधर का कोई भी ईंधन (संसार की प्रत्येक चीज जल सकती है) हो उसका यथायोग्य शोधन अवश्य करें। लकड़ी आदि को सुबह थोड़ा फटकार कर धूप में डाल दें। शाम को अच्छी तरह झटका कर उठावें तो काफी जीवों की हिंसा से बच सकते हैं। कण्डे, कार्टून के टुकड़े आदि यदि नमी का मौसम है तो विशेष रूप से ध्यान लगाकर देखें। छोटे-छोटे जो चल नहीं रहे हों उनको तो आँखों से देखना भी कठिन है ऐसे लाखों जीव उसमें हो सकते हैं। एक महिला ने बात ही बात में कहा-माताजी ! मैंने भी अब गैस जलाना शुरू कर दिया है। मैंने कहा-क्यों? क्या कोयले, लकड़ी आदि ईंधन नहीं मिलता है? उसने कहा-नहीं, कोयले, लकड़ी आदि की तो हमारे यहाँ कोई कमी नहीं है लेकिन चौमासे में मैंने एक दिन सिगड़ी जलाने के पहले कोयलों को फटकार कर देखा तो उनमें इतने जीव दिखे कि मेरा तो दिल दहल गया। मुझे इतनी ग्लानि आई कि मैंने तत्काल संकल्प कर लिया कि मैं चातुर्मास में तो कभी भी कोयले आदि ईंधन नहीं जलाऊँगी।

एक दिन एक मंदिर के अध्यक्ष ने बताया-माताजी ! हमारे मंदिर में धूप चढ़ाने के लिए अंगारे तैयार किये जाते हैं। हम एक वर्ष के लिए इकट्ठे लकड़ी के गट्ठे खरीद लेते हैं। उन गट्ठों में इतने जीव होते हैं, कहा नहीं जा सकता है। उन्हें देखकर मुझे तो लगता है कि हम भगवान के सामने धूप चढ़ाकर धर्म कर रहे हैं या उससे भी ज्यादा पाप बाँध रहे हैं। इसी प्रकार कार्टून के टुकड़ों आदि में भी बहुत सारे जीव होते हैं।

इसी प्रकार हीटर में भी स्प्रिंग जैसी तारों की लाइन रहती है। उसमें भी रात्रि के समय बारिस आदि के समय लाइट के सैकड़ों कीड़े-मच्छर आदि आकर बैठ जाते हैं। उसे जलाने के पहले एक बार उल्टा करके फटक अवश्य लें ताकि उसमें कहीं कीड़े फँसे हुए हों तो निकल जावें। हीटर को नीचे से भी देख लें, क्योंकि नीचे भी कीड़ों के बैठने का स्थान रहता है।

भोजन बनाते समय आप पहले रोटी-दाल, सब्जी आदि जो भी बनाना हो उसकी सभी सामग्री एक साथ इकट्ठी कर लें ताकि आपको बार-बार उठना भी नहीं पड़े और गैस को बार-बार बन्द भी नहीं करना पड़े। अन्यथा एक सब्जी बनाई फिर दूसरी सब्जी सुधारने लगे। कभी मिर्ची लेने गये, कभी आटा निकालने गये तो कभी दाल लेने गये आदि कार्य करते समय या तो गैस को बुझाना पड़ेगा या गैस फालतू ही जलता रहेगा। दोनों ही में अनावश्यक हिंसा होगी, आर्थिक व्यय भार बढ़ेगा।

चाय-दूध आदि भी घर के सभी सदस्यों को एक साथ पीने-पिलाने की आदत डालें ताकि बार-बार गैस भी नहीं जलाना पड़े और टाइम भी वेस्ट नहीं करना पड़े। कई घरों में एक छह बजे चाय पीता है तो दूसरा आठ बजे और तीसरा सवा आठ बजे। इस प्रकार बार-बार चाय बनाने की परम्परा होने से उठने से लेकर आठ-नौ बजे तक तो चाय-दूध देने और देने के इंतजार में ही लगे रहना पड़ता है। एक साथ चाय-दूध पी लेने से बर्तन एक साथ में साफ हो जाते हैं जिसमें उस सम्बन्धी हिंसा से तथा बार-बार गैस जलाने की हिंसा से बचा जा सकता है और सामूहिक सब मिलकर एक साथ दूध आदि पी लेने से आपसी प्रेम वात्सल्य भी बढ़ता है।

सावधानी :

(1) जब भी चूल्हा, गैस, सिगड़ी आदि जलावें पहले उसको आँखों से देख लें और किसी चीज से बजा लें ताकि जीव-जन्तु हो तो निकल जावें।

(2) ईंधन को पहले धूप में डालकर, झटका कर शोधन कर लें।

(3) हो सके तो कण्डे जलाने से बचें, क्योंकि कण्डों में जीवों की संख्या का पार नहीं होता है। यदि जलाते ही हैं तो बारिस के समय में तो कभी नहीं जलावें। उन्हें इतना सेफ्टी से रखें कि नमी की हवा न लग पावे।

(4) चातुर्मास में कोयले आदि को विशेष रूप से शोधन करें।
(5) कितना भी देख-शोधकर ईंधन रखा है तो भी जलाने के पहले एक-बार फटक कर अवश्य देख लें।
(6) सामूहिक भोजन में यदि कण्डे का उपयोग हुआ है तो उससे अवश्य बचें।

जहाँ गैस चूल्हा रखा जाता है :

रसोई घर में गैस चूल्हा जहाँ रखा जाता है उसके पीछे की दीवार सब्जी छौंकते समय तेल-घी के छींटे उछलने से चिकनी होने लगती है। रोटी बनाने वाली गृहिणी को यह ध्यान नहीं रहता है कि चूल्हे के पीछे की दीवार कितनी भद्दी लग रही है। भले ही टाइल्स भी लगे हों तो भी साफ नहीं करने से तो घी-तेल उस पर जमेगा ही। हाँ, यदि टाइल्स को पौंछा लगाने के पहले साफ कर लिया जाय तो वह साफ ही रहेगा, क्योंकि टाइल्स घी आदि को चूसते नहीं हैं। यदि टाइल्स नहीं हैं तो दीवार भले ही पक्की भी हो तो भी मन्दगति से घी-तेल को चूसती ही है। पुराने जमाने में शायद इसीलिए रोज चूल्हे को एवं चूल्हे की आस-पास की दीवारों को लीपा जाता था। जो कोई यदि रोज नहीं भी लीपे तो भी 2-4-8 दिन में तो निश्चित रूप से लीप ही लेता था। उसकी दीवालें न ज्यादा भद्दी दिखती थीं और न ही ज्यादा काली। आज के जमाने में गैस होने से काली होने का तो प्रसंग ही नहीं है लेकिन भद्दी तो हो ही जाती हैं। मुझे तो भद्दी लगने से भी कोई तकलीफ नहीं है, क्योंकि वह अपने-अपने घर की प्रतिष्ठा एवं चतुराई की बात है लेकिन जिसके यहाँ तेल-घी के छींटों से चिकनी हो जाती है, उसमें से बदबू आने लगती है या अचानक किसी का हाथ लग जावे तो वह चौंक जाता है। इसका अर्थ यह है कि उस दीवार में निश्चित रूप से सूक्ष्म जीव उत्पन्न हो चुके हैं। एक बार हम लोग विहार करते हुए एक छोटे गाँव में पहुँचे। वहाँ के लोगों ने हमें एक घर में ठहराया। हम लोग उस रूम में रुके जो हमारे आने से पहले किसी का रसोई घर था। वहाँ एक तरफ की दीवार पर मेरी दृष्टि पड़ी तो लगा जैसे शनि महाराज के ऊपर तेल चढ़ाया गया हो। मैंने पूछा-यह दीवार ऐसी क्यों हो गई है। सबने कहा-यहाँ गैस रखा रहता होगा इसलिए ऐसी हो गई हैं। मैंने कहा-गैस रखने से इसका क्या सम्बन्ध? उन्होंने कहा-सब्जी छौंकते समय तेल आदि के छींटे

लगने से ऐसा हो जाता है। उस दीवार को देखकर ऐसा लग रहा था कि शायद 2-3 सेंटीमीटर मोटी परत जमी होगी। उसमें अनन्त सूक्ष्म जीव उत्पन्न हो गये होंगे। आप इसका ध्यान रखें।

सावधानी :

(1) जहाँ तेल-घी के छींटे लगते हो वहाँ गहरे रंग का वार्निस कर दें और पौंछा लगाते समय उसको भी पौंछ ले।

(2) अथवा वार्निश वाला एक प्लाईबोर्ड खड़ा कर दें। समय-समय पर उसे साफ करते रहें।

(3) यदि टाइल्स लगे हैं तो उन्हें भी साफ करते रहें।

चूल्हे को खुला नहीं छोड़ें :

जब मैं छोटी थी तब माँ, दादी आदि सुबह-शाम रोटी बनाने के बाद बचे हुए पानी के बर्तन को चूल्हे पर रख देती थीं, उस समय मुझे लगता था कि शायद माँ को शौच जाने के बाद हाथ-पैर धोने आदि में गुनगुना पानी लेने की आदत होगी अथवा जो कुछ भी हो, लेकिन उसका रहस्य अब समझ में आता है कि पानी के बर्तन को चूल्हे पर रख देने से दो लाभ होते हैं। पहला चूल्हे में से ईंधन निकाल देने पर भी अग्नि एकदम समाप्त नहीं होती है। चाहे चूल्हे के अंगारों को बुझा भी दिया जाये तो भी कुछ अनबुझे छोटे-छोटे अंगारे, लकड़ी कोयले के टुकड़े आदि रह ही जाते हैं, चूल्हे को खुला छोड़ देने से छोटे-मोटे अनेक जीव-जन्तु आकर गिरकर मर सकते हैं। चूल्हा ढक देने से उनकी रक्षा हो जाती है अर्थात् उनकी हिंसा से हम बच जाते हैं। दूसरा प्रात:काल उठते ही सबसे पहले हमें लेटि-न-बाथरूम में जाना पड़ता है। वहाँ बिना छना पानी काम में नहीं लेना पड़ता है। चूल्हे पर रखा हुआ प्रासुक पानी सहज ही मिल जाता है। अत: भले ही आपको पानी की आवश्यकता हो या न हो आप चूल्हे सिगड़ी आदि को तवा, पानी के बर्तन आदि किसी से ढककर रखें। इसी प्रकार गैस चूल्हे के बर्नर को भी ढककर रखें ताकि उसमें कोई छोटे जीव आकर नहीं बैठें अथवा किसी कारण से चींटियाँ आदि नहीं आ पावे।

भोजन ढककर रखें :

आप भोजन तैयार करके खुला नहीं छोड़ें। खुला छोड़ देने से कभी-कभी छोटे-छोटे जीवों की बात तो बहुत दूर बड़े-बड़े जीव भी आकर गिर जाते हैं। कुछ वर्ष पहले एक सिद्धक्षेत्र में साधुसंघ का आगमन हुआ था। गर्मी का मौसम था इसलिए दही को बिलोकर छाछ बनाकर रख दी। संभवत: 5-10 मिनट में ही ढक दी होगी। इतनी सी देर में कहीं से एक बिच्छू आकर उसमें गिर गया। छोटी तपेली में छाछ होने से उसी तपेली से साधु को छाछ आहार में दे दी। जब सबसे नीचे की छाछ अंजुलि में दी गई तो छाछ के साथ बिच्छू भी गिरा तब समझ में आया कि अरे ! ये क्या हुआ? बिच्छू के कारण उस साधु को इतना जहर चढ़ा कि दो-तीन दिन तक केवल औषधि और पथ्य चलाने पर भी लगभग 7-8 दिन तक उसका प्रभाव समाप्त नहीं हुआ। यदि छाछ तैयार करते ही ढक देते तो न बिच्छू मरता और न साधु को तकलीफ होती। अथवा साधु को देने के पहले उलट-पलट कर लेते, चम्मच से हिला लेते तो साधु की तकलीफ के पाप से तो बच ही जाते अर्थात् हमारे निमित्त से साधु को वेदना नहीं होती, साधु के रत्नत्रय में बाधा उत्पन्न नहीं होती।

कोई चीज कितनी ही गरम हो और आपको बहुत जल्दी खाना है या किसी को परोसना है या व्यवस्थित रखकर कहीं जाना है तो भी आप उसे पूरी खोलकर ठण्डा नहीं करें। क्योंकि पूरी खोलकर रखने से कोई भी जीव गिर सकता है, भले ही आप सामने बैठे हैं तो भी हिंसा तो हो ही जायेगी। सामने बैठकर ठण्डा करने से मात्र इतना फायदा हो जायेगा कि हमारा स्वास्थ्य नहीं बिगड़ेगा क्योंकि उसमें कोई जीव गिरेगा तो दिख जायेगा। मेरे अनुमान से तो कोई छोटा-सा विषैला कीड़ा गिर गया और आप खाते समय भी उसे नहीं देख पाये तो आपका स्वास्थ्य भी बिगड़ेगा ही। इसलिए कोई भी चीज जल्दी से ठण्डी करनी है तो चौड़े बर्तन में फैलाकर जाली या कपड़े से ढक दें। चीज भी ठण्डी हो जायेगी और हिंसा भी नहीं होगी। यदि बहुत जल्दी नहीं है तो ढक्कन को थोड़ा पोला कर दें, चीज जल्दी ठण्डी हो जायेगी।

सावधानी :

(1) अच्छी तरह शोधन की गई चीज को भी बनाते समय एक बार फिर से

देख लें।

(2) कोई चीज कितनी ही फ्रेश दिख रही हो, फटक कर या देखकर कुकर लगावें।

(3) चीकू आदि के भी चौकोर पीस बनावें, ताकि अन्दर कोई जीव हो तो दिख जावे।

(4) सब्जी छौंकते समय घी-तेल को भी देख लें।

(5) आटा-बेसन आदि को छानकर ही काम में लें।

(6) सब्जी, दाल, दूध आदि को खुला न छोड़ें। यदि उबलने की सम्भावना हो तो जाली से ढक दें।

(7) दूध, कढ़ी, लपसी आदि को बार-बार हिलाना पड़ता है इसलिए पास में बैठकर बनायें। यदि छोड़कर बाहर जा रहे हैं तो जाली से ढक कर जावें।

(8) दाल आदि में थोड़ा घी डाल दें या बर्तन में चम्मच डालकर ढक दें, ताकि हवा पास होती रहे।

भोजन बनाते समय

देखकर बनावें :

कई लोग भोजन बनाने के लिए शाम को ही कुकर लगाकर रख लेते हैं। सुबह जल्दी से कुकर में पानी डाला और गैस पर रख देते हैं। कई लोग सीधे डिब्बे में से ही (यह सोचकर कि अभी दो-चार दिन पहले ही तो साफ करके भरा है) मुट्ठी भरकर या कटोरी आदि से दाल-चावल आदि निकालकर कुकर लगा देते हैं। एक दिन एक लड़की ने बताया-माताजी ! हमारी चाची जब नयी-नयी आई थी तो एक दिन दादी ने कहा-बहू ! डिब्बे में दाल रखी है कुकर लगा दो। चाची ने सीधे डिब्बे से ही निकालकर (बिना शोधे ही) कुकर लगा दिया। जब कुकर खोला तो उसमें दाल तो दिख ही नहीं रही थी, ऊपर-ऊपर केवल लटें ही दिख रही थीं। लगभग दो-चार सौ लटें दाल के साथ उबल गईं। आप सोचें क्या हमारे साथ यह घटना नहीं घट सकती है। हम लोग साधु हैं। साधुओं को आहार/भोजन देने के पहले श्रावक बहुत सावधानी रखता है फिर भी कभी-कभी तो हमें दिये गये एक चम्मच चावल में दो-तीन

लटें तक निकल आती हैं, तिरुवले (लाल रंग के जीव) निकल आते हैं। इसका अर्थ क्या है कि हमने भोजन बनाने के पहले दाल-चावल आटे आदि को अच्छी तरह नहीं देखा। बाल, चींटी, मक्खी आदि आने पर तो इतना संतोष किया जा सकता है कि कहीं से आकर गिर गये होंगे, क्योंकि ये जीव इन चीजों में उत्पन्न नहीं होते हैं लेकिन लट के बारे में तो ऐसा नहीं सोचा जा सकता है।

एक बार एक महिला ने बताया-माताजी ! मैंने एक दिन दलिया बनाया। उसमें इतने जीव थे कि जैसे अनाज को शोधते समय कंकड़ निकाले जाते हैं वैसे दलिये में से जीव निकाल लो। उसी समय अचानक मेहमान आ गये। मेहमान थोड़ा सोला करते थे और शायद उनका स्वास्थ्य भी ठीक नहीं था इसलिए उन्होंने कहा-''भाभी, आज तो मैं केवल दलिया ही खाऊँगा।'' मैंने उन्हें खिचड़ी, चावल आदि स्वास्थ्य के लिए ज्यादा अनुकूल बताये लेकिन उनको दलिये पर ज्यादा विश्वास होने से कोई भी चीज पसन्द नहीं आई। तब मैंने मजबूर होकर उन जीवों को निकाल-निकाल कर दलिया परोसा। कितना विचारणीय विषय है? क्या ऐसे अविवेकी लोग भी कभी धर्म कर सकते हैं?

कई महिलाएँ तो रोटी पर घी लगाते समय घी के साथ दो-चार चींटियाँ भी लगा देती हैं, क्योंकि वे भोजन बनाते समय आँखों से देखती तक नहीं हैं कि हम रोटी पर क्या लगा रहे हैं। हम यदि भोजन सामग्री को एक बार भी दृष्टि डालकर देख लें तो काफी हिंसा से बच सकते हैं। संसार की प्रत्येक चीज में परिवर्तन की प्रवृत्ति है। सबमें जीवोत्पत्ति की सम्भावना रहती है और आस-पास की वस्तुओं में से आकर निकट समीपस्थ अन्य चीजों में बैठ जाते हैं, भोजन तलाशने लगते हैं। यदि हमारे पास विवेक नहीं है तो वे सब जीव हमारे निमित्त से मरते हैं। इसलिए उसका पाप भी हमें ही लगता है और हम यदि विवेक से सावधानी पूर्वक काम करें तो उन जीवों की रक्षा करके पुण्यार्जन कर सकते हैं। अनेक प्रकार से सावधानी रखने के बाद भी यदि जीव मर जाते हैं तो ज्यादा पाप नहीं लगता है और लापरवाही से काम करने पर जीवों के नहीं मरने पर भी जीव हिंसा का पाप अनवरत रूप से लगता ही रहता है, अत: विवेक से काम करें।

ढक्कन खोलते समय :

आप भोजन बनाते समय सब्जी का ढक्कन अर्थात् खिचड़ी, दलिया, दाल, चावल, दूध-चाय, गरम पानी आदि को जिसमें उबाला हो उसमें से निकालते समय ढक्कन खोलकर जमीन पर सीधा नहीं रखें, उल्टा रखें, क्योंकि ढक्कन के नीचे (बर्तन में गरम वस्तु होने से) भाप के कण (पानी) लगे रहते हैं। ढक्कन को सीधा रखने से एक तो जमीन के छोटे-मोटे जीव उसमें चिपक जायेंगे। दूसरी बात जमीन की धूल-कचरा आदि भी उसमें चिपक जायेंगे। जो वापस ढक्कन ढकते समय हमारे भोजन में मिल जायेंगे। अधिकतर लोग ढक्कन सीधा रखते हैं वे भोजन के साथ कितना कचरा-धूल खाते होंगे। उनके हाथों से कितने जीवों की हिंसा होती होगी, यह तो भगवान ही जान सकते हैं।

इसी प्रकार घी-तेल आदि का डिब्बा भी खोलकर ढक्कन सीधा नहीं रखें, क्योंकि उसके नीचे भी तेल-घी आदि की चिकनाई लगी रहती है। वह चिकनाई जमीन में लग जाती है जो महीनों तक लगी रहती है, उस पर जीव चिपकते रहते हैं। मरते रहते हैं। उसमें भी कचरा आदि लगने से एवं जीव आदि चिपकने से हानि होती ही है। भले ही ठण्डे पानी के बर्तन का ढक्कन भी हो उसे भी सीधा नहीं रखें, क्योंकि उसमें भी पानी के छींटे उछलकर चिपक जाते हैं, ढक्कन सीधा रखने से उसमें धूल चिपक जाती है। इसमें भी पानी के गीलेपन के कारण जीव मरते हैं अत: ढक्कन को उल्टा करके रखें। यदि ढक्कन गरम हो तो किसी पाटे आदि पर रखें ताकि जमीन में रहने वाले छोटे-छोटे जीव ढक्कन की गरमाहट से नहीं मरें। इसी प्रकार बिना पानी का ढक्कन, तवा, चिमटा कुकर, तपेली आदि को भी चूल्हे आदि से उतार कर जमीन में नहीं रखें। ऐसा करने से फर्श (कोटा स्टोन, मार्बल) का पत्थर टूट सकता है और जमीन के जीव भी मर सकते हैं इसलिए उस समय भी सावधानी रखें।

दाल आदि गलाते समय :

आप सुबह तलने/सेकने के लिए अथवा जल्दी उबालने के लिए शाम को मूँग, मोठ, चना, चने की दाल, सोयाबीन, केर आदि भिगोने के पहले शोधन अवश्य कर लें और सूर्य के रहते हुए ही भिगो दें ताकि उसमें जीव हो तो दिख जावें। यह सोचकर लापरवाही नहीं करें कि सुबह जब तलेंगे /सेकेंगे

तब शोधन कर लेंगे। ऐसा करने से उनमें यदि जीव होंगे तो वे भले ही आपके पेट में नहीं पहुँचें लेकिन रात-भर पानी में ठिठुर कर मर अवश्य जायेंगे। रात्रि में भिगोने से सही शोधन करने पर भी जीव नहीं दिख पाते हैं। हमारी बड़ी माताजी ने (जब ब्रह्मचारिणी थीं) एक दिन एक महिला के यहाँ गले हुए मोठ देखे। उनमें इतने उड़ने/फुदकने वाले जीव थे कि उसमें मोठ तो दिख ही नहीं रहे थे। उसको देखकर उन्हें इतनी ग्लानि आई कि उसी दिन से उन्होंने जीवनभर के लिए खड़े अनाज अर्थात् जिसकी दाल नहीं बनी है, दो पीस नहीं हुए हैं, का त्याग ही कर दिया। यद्यपि दालों में भी इतने ही जीव हो सकते हैं लेकिन खड़े अनाजों में जीव ज्यादा उत्पन्न होते हैं। उपर्युक्त घटना अच्छा शोधन और सोला करने वाले की है। हम तो प्रमादी हैं हमें कितनी सावधानी रखनी चाहिए, आप स्वयं सोचें।

दाल आदि गलाते समय एक बात का ध्यान और रखें। दाल आदि को ठण्डे पानी में नहीं गलावें। पानी को उबालकर ठण्डा कर लें फिर गलावें ताकि बिना छने पानी का सम्बन्ध उनसे नहीं होवे अर्थात् बिना छने पानी में गले चने आदि नहीं खाने पड़ें। छने हुए पानी में गलाने पर भी एक अन्तर्मुहूर्त में वह पानी अनछना हो ही जाता है उस रात भर के अनछने पानी में गले हुए मोठ आदि नहीं खाने पड़ें। पानी को उबालकर डालने से 24 घण्टे तक वह पानी अनछना नहीं होता है। अत: पानी उबालकर ही मोठ आदि गलावें लेकिन उबलते हुए पानी में ही नहीं डालें। उबलते पानी में डालने से संभव है उसका स्वाद फीका हो जावे और बादाम मूंगफली आदि जिनको तलना-सेकना नहीं है उनके विटामिन्स-प्रोटीन्स कम नहीं होवे तथा गले हुए खाने का उद्देश्य पूरा हो सके।

इसी प्रकार चने की दाल बनाते समय भी चने गलाने होते हैं। रक्ताल्पता होने पर मूंगफली और चना आदि बहुत कम मात्रा में ही सही गलाने तो पड़ते ही हैं। गर्मी के दिनों में बादाम, पिस्ता, किसमिस आदि की गर्मी का शमन करने के लिए गला दिये जाते हैं। कई लोग पूरी-पूरी अर्थात् दो टुकड़े किये बिना बादाम आदि गला देते हैं। पूरे-पूरे गला देने से कभी-कभी बादाम आदि ऊपर से बहुत साफ और निर्जन्तुक लगती हैं लेकिन उसके अन्दर भी लटें हो

जाती हैं तोड़ते समय उनमें से मरे हुए जीव निकलते हैं अत: गलाने के पहले दो टुकड़े अवश्य करलें। अधिकांश लोग पूरी-पूरी बादाम ही गलाते हैं। मूंगफली के दानों के भी दो-दो टुकड़े करके गलावें। कई लोग गर्मी के कारण बादाम, खसखस, पिस्ता, किसमिस आदि को गलाकर इस डर से कि कहीं बदबू नहीं आने लगे खुला ही छोड़ देते हैं। खुला छोड़ देने से रात भर में कितने जीव आकर उनमें गिर सकते हैं, मर सकते हैं, उसका पाप हमें ही लगता है। जहरीले जीव जन्तु उनको जूठा कर सकते हैं, छिपकली आदि का मल-मूत्र भी उनमें गिर सकता है , उनका अंश हमारे खाने में आता है। अत: बदबू का विकल्प भी हो तो खुले स्थान में पतले कपड़े से अथवा जाली से ढक दें ताकि बदबू भी नहीं आवे और जीव भी नहीं मरें।

मुनक्का आदि (जिनमें बीज होते हैं) को पानी में गलाने के पहले बीज निकालकर शोधन कर लें, क्योंकि मुनक्का में उसी रंग के छोटे-छोटे जीव होते हैं जो गहराई से देखने के बाद ही दिख सकते हैं, सामान्य से देखने पर नहीं। दूसरी बात पहले बीज नहीं निकालने से खाते समय जल्दी-जल्दी में दाँतों में चुभ जाने से वेदना हो सकती है अत: पहले से अच्छा शोधन करके गलावें।

सावधानी :

(1) बादाम, पिस्ता, काजू आदि को चाकू या सरोती आदि से दो पीस करके गलावें।

(2) छुहारा को दूध में उबालते या गलाते समय दो पीस अवश्य करें। इससे छुहारे जल्दी गल जायेंगे, उबल जायेंगे और जीव होंगे तो भी दिख जायेंगे।

(3) छुहारा के उत्पत्ति स्थान (मुँह या नोक) पर विशेष शोधन करें। वहाँ पर जीवों के रहने की पूरी संभावना रहती है।

(4) मूँग चना आदि यदि पुराने हैं तो विशेष शोधन करें। नये हैं तो भी शोधन करें, क्योंकि उनमें भी मिलावट हो सकती है।

सब्जी का पानी कहाँ डालें :

वैसे कुकर सिस्टम होने से सब्जी चावल आदि को उबालकर पानी निकालने की आवश्यकता नहीं पड़ती है फिर भी कभी-कभी ऐसा मौका आ ही जाता है कि सब्जी आदि का गरम-गरम उबलता पानी निकालना पड़ता है।

अथवा मेथी, आँवला, मैंनल, करेला आदि को उबालकर पानी निकालना ही पड़ता है। उसको आप यह सोचकर कि साफ करने के लिए एक बर्तन बढ़ जायेगा सीधा नाली, नाला या वॉशबेसिन में नहीं निकालें, क्योंकि नाले वॉशबेसिन के पाइप में अंधेरा होने से हिंसक जीव (साँप आदि) उसमें छुपकर बैठे रहते हैं वे अचानक गरम-गरम पानी पहुँचने से सावधान होकर भाग नहीं पाते हैं। वे वहीं पर भुन जाते हैं, उनके शव वहीं पड़े-पड़े सड़ते रहते हैं। जिससे कभी-कभी तो नाला बन्द हो जाता है तो कभी नाले में से भयंकर बदबू आने लगती है। एक बार एक महिला ने चावल का गरम-गरम मांड नाले में डाल दिया। वहीं एक छोटा-सा साँप बैठा था। गरम मांड से वह वहीं भुन गया। कुछ दिनों में नाला बन्द हो गया। उसमें से बदबू आने लगी। नाला खोलकर देखा तो साँप निकला। गरम मांड के नाले में डालने से साँप जैसे बड़े-बड़े जीव-जन्तु भी मर जाते हैं तो छोटे जीवों का क्या होता होगा? इसी प्रकार चाहे ठण्डा भी हो अन्न का पतला पानी भी नाले में नहीं डालें, क्योंकि उस पानी में भी अन्न के कण होते हैं जो बहुत कुछ बह जाने के बाद भी थोड़े तो वहीं पड़े-पड़े सड़ने लगते हैं। उनमें जीव उत्पन्न होने लगते हैं इसीलिए किसी-किसी घर के नाले में से छोटे-छोटे कीड़े निकलते हुए नजर आते हैं। आदि-आदि विचार करके विवेकपूर्वक कार्य करें। लगभग 18-20 वर्ष पहले मैं एक घर में आहार करने गई थी। वहाँ रसोई घर के नाले में से कीड़े बाहर निकल रहे थे। मैंने उन कीड़ों को देखकर सोचा शायद इस घर की मालकिन नहीं है इसलिए बच्चे नाले की अच्छी सफाई नहीं कर पाते होंगे। इसलिए ऐसा हो रहा है लेकिन अब जब यह बात याद आती है तो लगता है कि उसका कारण सफाई का अभाव नहीं अपितु अन्न का पानी डाला जाता होगा। इसलिए उस नाले में कीड़े उत्पन्न हो गये थे।

रोटी बनाने में :

रोटी बनाते समय कई महिलाएँ बेलन पैरों पर डाल देती हैं। ऐसी खोटी आदत से पैर में लगा हुआ मैल, पसीना, धूल आदि बेलन से चिपककर रोटी में लगकर भोजन के साथ हमारे पेट में पहुँच कर विकृतियाँ उत्पन्न करते हैं। दूसरी बात लघुशंका आदि करके अधिकतर लोग पैर नहीं धोते हैं। बाजार आदि से घर आकर भी पैर नहीं धोने से पैरों पर मूत्र के छींटे लगे रहते हैं। वे भी

बेलन में चिपक कर भोजन में मिल जाते हैं। कोई कहे कि ऐसा करने में कोई पाप तो नहीं दिखता है फिर ऐसा करने का निषेध क्यों? ऐसा करने में पाप भले ही नहीं दिखे लेकिन होता अवश्य है, क्योंकि लघुशंका आदि मल में अन्तर्मुहूर्त में ही जीव उत्पन्न हो जाते हैं। उन पर बेलन की रगड़ से वे जीव मर जाते हैं। तीसरी बात यदि इसी विधि से भोजन बनाकर गुरु को आहार दे दिया तो हिंसा से भी बड़ा भारी पाप लग जायेगा। अत: रोटी बनाते समय बेलन को पैर पर नहीं रखें।

इसी प्रकार पूड़ी, पापड़, खीचला आदि बनाते समय भी बेलन रखने का ध्यान रखें। कई लोग रोटी बनाने के लिए आटा, नमकीन, पापड़ आदि के लिए बेसन आदि लगाते समय, बूरा (शक्कर की चासनी बनाकर छानकर बनाया जाता है) बनाते समय भी परात (बर्तन) को पैर के अंगूठों से पकड़ लेते हैं तब भी इसी प्रकार की स्थिति बनती है। अत: सावधानी रखें।

आप भोजन बनाते समय जिस बर्तन में पानी लेकर भोजन बनाना प्रारम्भ करते हैं उस बर्तन को भी ढक कर रखें। यद्यपि उसमें से बार-बार पानी का उपयोग करना पड़ता है इसलिए उसको ढकना बहुत कठिन है लेकिन फिर भी अहिंसा की दृष्टि से उसको ढकना अनिवार्य तो है ही। अत: बार-बार यदि उसको नहीं ढक सकते हैं तो ढक्कन वाला जग खरीद लें जिससे आपको बार-बार ढकना भी नहीं पड़ेगा और वह बिना ढके भी नहीं रहेगा।

इसी प्रकार और भी विचार करके कार्य करते समय विवेक रखकर पाप से बचना चाहिए।

सावधानी :

(1) कम-से-कम रोटी बनाना शुरू हो जावे तब तो बर्तन को अवश्य ढक दें।

(2) सब्जी आदि का उबलता पानी किसी बर्तन में निकालकर ठण्डा होने के बाद फेंके।

(3) अन्न का पानी अथवा कोई भी गाढ़ा पानी नाले में नहीं डालें। इससे त्रस जीव उत्पन्न हो जाते हैं।

(4) रोटी बेलते समय बेलन को परात (आटे वाले बर्तन) में रखने की आदत डालें।

(5) जिस बर्तन में आटा आदि लगाते (गूँथते) हैं उसके नीचे कपड़ा आदि कुछ डाल दें, परात नहीं हिलेगी।

सामान्य निर्देशन :

(1) आटा, बेसन आदि गीले हाथों से नहीं निकालें, क्योंकि अन्न की चीजों में पानी के सम्पर्क से बहुत जल्दी जीव उत्पन्न होते हैं।

(2) रोटी बनाते-बनाते यदि आटा ज्यादा हो/बच जावे तो यदि शाम का समय है तो पराठे, पूड़ी बनाकर रखें या रोटी ही बना लें। लेकिन आटा नहीं रखें, क्योंकि रात्रि के लम्बे काल में आटे में बहुत सारे जीव उत्पन्न हो जायेंगे। उसका चिह्न आटे में से तार खिंचने लगेंगे। बदबू आने लगेगी। कभी तो आटा उबलता सा नजर आने लगेगा।

(3) तेल-घी आदि में आटे, नमक आदि का सम्पर्क अर्थात् आटे आदि के हाथ तेल-घी आदि के बर्तन में नहीं डालें। आटे आदि के कण नहीं गिरने दें, क्योंकि इनके सम्पर्क से भी तेल आदि में जीव उत्पन्न होने लगते हैं।

(4) मिर्च, हल्दी, जीरा, धना आदि को भी नमी की हवा, नमक, आटा, बेसन आदि से बचाये रखें।

(5) दो-चार दिन में कोने-किनारे, दीवालों आदि पर झाडू फेरते रहें ताकि जाले नहीं लग पावें।

(6) कोई भी मिठाई, नमकीन, मठड़ी, फुलकी आदि सीमा से अर्थात् आवश्यकतानुसार ही बनायें। इस लोभ में अधिक न बनायें कि रोज-रोज कौन बनायेगा , क्योंकि इसमें जीवों की उत्पत्ति का पाप, सम्हालने की मेहनत और बहुत दिनों की पुरानी (बासी) चीजें खाने से होने वाला पाप नहीं करना पड़ेगा, क्योंकि ताजा भोजन और बासी भोजन के स्वाद में ही अन्तर देखा जाता है।

(7) तेल-घी आदि के डिब्बे जहाँ रखे हैं वह स्थान थोड़ा चिकना हो ही जाता है। उसे दो-चार दिन में सर्फ आदि से साफ करते रहें ताकि वह स्थान गन्दा भी नहीं दिखे और जीव भी उत्पन्न न हों।

(8) पलेथन (रोटी बेलते समय जो आटा लगाया जाता है) को बचने नहीं दें। यदि बचा है तो दूसरे टाइम का भोजन बनाते समय अवश्य काम

में ले लें। अन्यथा उसमें जीव भी उत्पन्न हो जावेंगे और वह इधर-उधर होकर व्यर्थ नष्ट हो जायेगा।

(9) गिलास, तपेली, लोटा आदि जो गहराई वाले बर्तन हैं उन्हें सीधा नहीं रखें, उल्टे रखें ताकि कोई जीव उनमें गिरकर निकलने की कोशिश करते-करते ही मरण को प्राप्त न हो।

(10) रसोई की नाली/नाला में अन्न की चीज/पानी आदि नहीं डालें। उसे सुबह-शाम कड़क झाड़ू से साफ करके सुखा दें ताकि वहाँ काई न जमे और लट आदि भी उत्पन्न न हों। अन्यथा जब कभी नाले में से लटें, कीड़े निकलते हुए नजर आएंगे।

(11) परेंडा के नीचे जहाँ पानी टपकता/गिरता है उस स्थान को तथा नाली को दिन में दो बार अवश्य सुखावें ताकि वहाँ काई नहीं आ पावे।

(12) बर्तन अर्थात् थाली, कटोरी, चम्मच आदि तथा विशेष रूप से घड़े (पीतल, ताँबा, मिट्टी आदि) को भी यदि साबुन/सर्फ से साफ करते हैं तो अच्छा रगड़कर धोएँ ताकि साफ करने का साबुन-सर्फ हमारे पेट में जाकर अनेक प्रकार की बीमारियाँ उत्पन्न न करे।

(13) जूठन या बची हुई सब्जी, दलिया, चावल आदि खाने की चीजें इस डर से कि ऐसे ही फेंक देंगे तो उनमें धूल आदि मिल जाएगी, बेचारे जानवर कैसे खायेंगे? पोलीथिन में भरकर नहीं फेंके क्योंकि जमीन में डालने पर जानवर खा पाये या नहीं खा पाये लेकिन पोलीथिन में भरकर फेंकने से सब्जी आदि के साथ पोलीथिन भी खाकर मर अवश्य जाएँगे।

भोजन करते समय :

भोजन करना जीवन का सबसे आवश्यक एवं महत्त्वपूर्ण कार्य है। कोई जीव चाहे कुछ भी नहीं करे भोजन तो उसे करना ही पड़ता है। कोई भी संसारी प्राणी (भगवान को छोड़कर) भोजन के बिना जीवित नहीं रह सकता है। लेकिन भोजन में विवेक का अभाव हो जाने के कारण आज हमारे देश में होटल और हॉस्पिटल बढ़ते जा रहे हैं। ऐसा लगता है कि व्यक्ति जीने के लिए नहीं, मात्र खाने के लिए ही जीने लगा है। इसी कारण हमें आज यह भी विवेक नहीं है कि हमें क्या खाना चाहिए, कहाँ, कितना, कब और कैसा खाना चाहिए। इसीलिए

हमारे भोजन का व्यय तो बढ़ गया है परन्तु भोजन से होने वाली शरीर की हृष्ट-पुष्टता कम होती जा रही है, क्योंकि हम खाते तो बहुत सारा हैं पर शरीर के लिए आवश्यक विटामिन्स, कैलोरी, प्रोटीन्स वाला भोजन नहीं करते हैं अथवा विटामिन्स आदि से युक्त भोजन करते भी हैं तो वह पेट में पड़े हुए यद्वा-तद्वा भोजन के कारण स्थित अनावश्यक पदार्थों से नष्ट हो जाता है।

हम भोजन करने के पहले एक बार भी थाली को नहीं देखते हैं अथवा हमें थाली में परोसे गये भोजन को देखने का समय या विवेक ही नहीं है। हमारे मन में कभी यह विचार ही उत्पन्न नहीं होता है कि भोजन करने के पहले हम कम-से-कम एक बार यह तो देख लें कि कहीं इसमें छोटे-मोटे कीड़े-मकोड़े, जीव-जन्तु तो नहीं हैं। एक दिन एक युवक भोजन करने जा रहा था। उसने मुझसे कहा-माताजी ! मैं भोजन करने जा रहा हूँ, मुझे आशीर्वाद दे दो। मैंने कहा-यदि तुम यह नियम ले लो कि आज मैं शोधन करके अर्थात् भोजन को देख-देखकर खाऊँगा तो मैं आशीर्वाद दे सकती हूँ अन्यथा नहीं। उसने कहा ठीक है- माताजी, मैं आज शोधन करके भोजन करूँगा। आप मुझे आशीर्वाद दे दीजिए। मैंने उसे आशीर्वाद दे दिया।

वह जैसे ही भोजन करने बैठा तो बहुत दिनों के बाद सामूहिक भोजन में दाल-बाटी खाने को मिली थी। इसलिए उसके मुँह में पानी आ गया। उसने दो-चार ग्रास ही खाये होंगे कि दाल में एक मरा हुआ जीव दिखा। उसने दाल को हिलाकर देखा तो एक जीव और निकला। उन जीवों को देखकर वह हाथ धोकर उठ गया अर्थात् वह भूखा ही उठ गया। सबने बड़ी व्यग्रता से पूछा-भैया क्या होगया? आप इतनी जल्दी क्यों उठ गये? हमारा तो अभी आधा भोजन भी नहीं हुआ है और आप भोजन करके उठ भी गये। वह कुछ नहीं बोला तो सबने उसकी थाली देखी। थाली में भोजन देखकर सब समझ गये कि शायद इसके भोजन में कोई मरा हुआ जीव निकल गया है इसलिए यह भोजन छोड़कर उठ गया है। सबने भी अपनी-अपनी थाली देखी तो दो-तीन लोगों की दाल में भी जीव निकल आये। विचारने की बात है कि हम कितना देखकर खाते हैं, हमने आज तक कितने जीवों को/चींटी आदि के कलेवरों को खा लिया होगा।

एक लड़की ने एक दिन केले के चिप्स तलकर अच्छे पैक डिब्बे में भरकर रख दिये। दूसरे दिन वह भोजन कर रही थी। उसे चिप्स की याद आ गई। उसने बैठे-बैठे ही अलमारी में रखे डिब्बे को खोला और हाथ में चिप्स लेकर मुँह में रखने लगी। तभी उसके मन में आया कि एक-बार थोड़ा-सा देख लेती हूँ फिर खाती हूँ। उसने देखा तो चार-पाँच चिप्स में पचासों चींटियाँ चल रही थीं। उसने जब डिब्बा देखा तो उसमें सैकड़ों चींटियाँ घूम रही थीं। इतने पैक डिब्बे में चींटियाँ कहाँ से आ गईं, यह आश्चर्य करने की कोई बात नहीं है, क्योंकि चींटियों का सम्मूर्च्छन जन्म है अर्थात् बिना माता-पिता के जहाँ-कहीं अनुकूल वातावरण मिलने पर होने वाला जन्म होता है। इसलिए उस डिब्बे में भी वे उत्पन्न हो सकती हैं। इसी प्रकार और भी अनेक प्रकार के विकलत्रय जीव उत्पन्न हो सकते हैं। अत: अच्छी तरह शोधन करके रखी हुई पैक डिब्बे की चीज भी पुन: देखकर खावें।

एक दिन एक व्यक्ति पूरे दिन से थका-हारा घर लौटा था। उसने अपनी बेटी से पानी माँगा। बेटी ने जल्दी से एक लोटा भरकर दे दिया। उस व्यक्ति ने भी प्यास की तीव्रता के कारण बिना देखे ही पानी पी लिया। पानी में सैकड़ों चींटियाँ थीं। उन चींटियों ने पानी के साथ गले में पहुँचते ही काटना प्रारम्भ कर दिया तो वह बेटी को डाँटते हुए बोला-मीना, क्या तूने पानी देखकर नहीं दिया। आज तूने कैसा पानी दिया यह तो मेरे गले में लग (चुभ) रहा है। बेटी ने पापा से पानी का लोटा लेकर देखा तो उसमें ढेर सारी चींटियाँ दिखीं। तब समझ में आया कि पानी पीते ही पापा के गले में तकलीफ क्यों हुई थी।

कई लोग बेर, मटर की फली, हरे चना आदि सीधे मुँह से ही खाते हैं। इनमें से बेर को मुँह से तोड़कर आधा चबा जाते हैं और आधे को आँखों से देखते हैं। जब बेर में लट आदि दिखते हैं तब थू-थू करते हैं तब तक तो लट आदि दाँतों से चबकर आधी पेट में पहुँच चुकी होती हैं। इसी प्रकार की घटनाएँ बिना विवेक से खाने वालों के साथ हर दिन घटती रहती हैं। हमारे साथ भी घट सकती हैं। इसका प्रभाव शरीर पर पड़ता है। बीमार होने पर आर्थिक स्थिति पर और असभ्यता होने से व्यावहारिक स्थिति पर भी पड़ता है। इन सबसे बहुत प्रयोजन नहीं मुख्य प्रयोजन अहिंसा से है। हिंसा से जो पाप लगेगा

वह इस भव तथा परभव दोनों में दु:ख देने वाला है। थोड़ा-सा विवेक रखकर यदि हम हिंसा से बच गये तो शारीरिक, मानसिक आदि हानियों से तो सहज रूप से बच सकते हैं।

धृतराष्ट- अन्धे हुए :

धृतराष्ट- पूर्व भव में एक राजा था। उसमें राजा के योग्य सभी गुण थे लेकिन एक बहुत बड़ा अवगुण भी उसमें पल रहा था जिसने यद्यपि राजा को प्रजा की दृष्टि से नहीं गिराया परन्तु उसके भविष्य को काला अवश्य कर दिया था। वह अवगुण था उसकी ''जिह्वा की लोलुपता''। वह भोजन करते समय यह नहीं सोच पाता था कि मैं क्या खा रहा हूँ और मुझे क्या खाना चाहिए। क्या जो मैं खा रहा हूँ वह मेरे स्वास्थ्य एवं धर्म की दृष्टि से उचित है? वह खाते समय मात्र स्वाद की तरफ ध्यान देता था वस्तु की तरफ नहीं। इसी कारण एक बार उसके रसोइये ने उसे खुश करने के लिए भोजन में एक मासूम नवजात हंस के बच्चे का माँस मिला दिया। राजा को वह भोजन बहुत अच्छा लगा। उसने भोजन के बाद रसोइये से यह तो नहीं पूछा कि तुमने भोजन में ऐसी क्या नयी चीज डाली थी जिससे वह इतना स्वादिष्ट बना था अपितु उसने रसोइये की भूरि-भूरि प्रशंसा की और पुरस्कृत भी किया। अपनी प्रशंसा और पुरस्कार से रसोइया फूला नहीं समाया। वह अपनी प्रशंसा और पुरस्कार के लोभ में जब तब राजा को हंस के बच्चे का माँस खिलाने लग गया। इस प्रकार उसने राजा को हंस के सौ बच्चों का माँस खिला दिया। राजा ने आँखें होते हुए भी अंधे के समान बनकर हंसों के बच्चों का माँस खाया। उसी का फल था कि उनके जीवित रहते हुए ही उनके सामने सौ पुत्र मरण को प्राप्त हो गये। हम सोचें एक छोटे से अविवेक ने कितना बड़ा पाप करवा दिया। यदि वह राजा देख शोध कर भोजन करता/विशेष स्वाद के कारण की खोज कर लेता तो शायद कभी सही बात पकड़ में आ जाती। उसके इतना माँस तो खाने में नहीं आ पाता। जानकारी हो जाने पर वह प्रायश्चित्त करके पापों को धो सकता था। अत: हम देख-शोधकर विवेकपूर्वक भोजन करें ताकि ऐसी घटना हमारे साथ नहीं घटे।

जूठा नहीं डालें :

कई लोगों की एक खराब आदत रहती है। वे भोजन करके उठते समय एक-दो ग्रास तथा कटोरी में थोड़ी सब्जी अवश्य छोड़कर उठते हैं। उनके विचार रहते हैं कि यदि हम थाली का पूरा भोजन कर लेंगे तो 'पेटू' या 'भुक्खड़' बहुत खाने वाले कहलाएँगे। लोग मुझे दरिद्र कहेंगे.....। लेकिन वे यह नहीं सोचते हैं कि आज हमें जो भोजन करने को मिला है वह पूर्वोपार्जित पुण्य के उदय से प्राप्त हुआ है। उस पुण्य का बन्ध अपने धन-भोजन आदि का दान देने से होता है। आज हमने भोजन को दान देने के स्थान पर उस भोजन को जूठा डालकर इतना अपमान कर दिया कि उसको कोई देखे तो ग्लानि आने लगे। उसको शायद कोई समझदार व्यक्ति तो नहीं खा सकता। ऐसा करने से हमें केवल पाप का ही बन्ध होगा। जूठा डालने वाले को खाने के लिए मिलने की बात बहुत दूर, भोजन देखने के लिए भी नहीं मिलेगा। वह दूसरे का भोजन देख-देख कर मात्र तरसता रहेगा। बहुत लोगों के सामने गिड़गिड़ाने पर भी उसे पेट भरकर भोजन करने को नहीं मिलेगा। उसके साथ उसको इतनी भूख लगेगी कि 8-15 रोटी खाने के बाद भी तृप्ति नहीं होगी। और यह सत्य है क्योंकि यह स्पष्ट देखा जाता है कि गरीबों का पेट बहुत सारा खा लेने पर भी नहीं भरता है। यदि कड़वे शब्दों में कहा जाय तो वे (जूठा डालने वाले) भवों-भवों तक दरिद्र बनेंगे, भिखारी बनेंगे। अत: आप कभी जूठा नहीं डालें ताकि आपके साथ कभी ऐसी नहीं बीते। तथा धनाढ्यों के मुख से सुना जाता है कि हमारे बच्चों को तो मना-मनाकर थक जाते हैं तो भी बच्चे कुछ खाते ही नहीं हैं, पूरे दिन में बड़ी मुश्किल से दो रोटी खाते हैं, क्यों? इसका कारण है उन्होंने पूर्व भव में भोजन को जूठा नहीं डाला था। भोजन का दुरुपयोग नहीं किया था उन्होंने भोजन, धन का दान दिया था। सही स्थान पर उपयोग किया था उसी का फल है।

कई लोग अपने घर में तो जूठा नहीं डालते हैं लेकिन जब पंगत (सामूहिक भोजन) में जाते हैं वहाँ पराया भोजन समझकर जूठा डाल देते हैं। मेरे अनुमान से कई लोग तो जान बूझकर (यह सोचकर कि मैं बहुत सारे लड्डू/मिठाई खा लूँगा) अपनी थाली में रखवा लेते हैं परन्तु वे खा तो उतना ही पाते हैं जितनी

उनको भूख लगी होती है, उनकी खुराक होती है, उनके पेट में जगह होती है। व्यक्ति लोभ के वश आवश्यकता से अधिक अपनी थाली में रखवा लेता है और जब खा नहीं पाता है तो अन्त में मजबूर होकर उसे जूठा डालना पड़ता है, तो भी उसे पाप का बन्ध तो होता ही है क्योंकि कषाय/प्रमाद तो था ही। लेने वाला इतना भी नहीं सोचता है कि एक साथ इतना सारा थाली/पत्तल में लेने पर कितना भद्दा लगता होगा, लोग उसकी थाली में इतना सारा भोजन देखकर क्या कहते होंगे। क्या सोचते होंगे ? कभी-कभी इतनी भरी थाली देखकर दृष्टिदोष (नजर) भी तो हो सकता है। यदि ऐसा हो गया तो ''चौबेजी छब्बेजी बनने गये तो दुबे जी ही रह गये'' वाली कहावत ही चरितार्थ हो जायेगी। **दूसरी बात** जूठा डालते समय व्यक्ति यह सोचले कि यदि मेरी तरफ से यह सामूहिक भोजन होता उसमें यदि कोई लड्डू-पूड़ी आदि जूठी डालता तो मुझे कितना गुस्सा आता, कितना बुरा लगता। यदि मैं उस जूठा डालने वाले को देख लेता तो उसके प्रति मेरा कैसा भाव होता? बस, ऐसा ही भाव मेरे जूठा डालने पर सामने वाले के मन में आता होगा। **तीसरी बात** आज हमारे देश में अन्न की कमी मानी जाती है। क्या मैं जूठा डालकर देश के गरीब लोगों के प्रति गद्दारी नहीं कर रहा हूँ ? क्या मेरे जूठा नहीं डालने से किसी गरीब का पेट नहीं भरेगा... ? **चौथी** बात आपका जूठा भोजन जहाँ फेंका जायेगा वहाँ कितने जीव उत्पन्न होंगे /मरेंगे/ उनकी हिंसा का पाप किसको लगेगा। **पाँचवीं बात** एक-एक पैसा कमाने में कितने छल-कपट करने पड़ते हैं, झूठ बोलना पड़ता है।

तो हम दो-दो लड्डू दो बार भी ले सकते हैं, एक-एक करके तीन-चार बार भी ले सकते हैं। हमारे बच्चे नासमझ हैं, वे ऐसा कर रहे हैं तो हम उसे भी थोड़ा-थोड़ा रखवा कर पाप से बचा सकते हैं। अत: आप संकल्प रखें कि मैं कभी जूठा नहीं डालूँगा/डालूँगी। यदि मजबूरी से किसी रखने वाले की अतिमनुहार या लापरवाही से जूठा छोड़ना पड़ेगा तो मैं जूठे छोड़े गये भोजन का जितना मूल्य है उससे पाँच गुना पैसा मंदिर के भण्डार में चढ़ाऊँगा। आपके जीवन में यह पाप कभी नहीं होगा और अगले भव में भी आपको दरिद्र नहीं बनना पड़ेगा।

सावधानी :

(1) दो रोटी की भूख है तो डेढ़ रोटी ही थाली में लें ताकि जूठा डालने की नौबत नहीं आवे।

(2) भोजन परोसते समय अतिमनुहार नहीं करें कि सामने वाले को जूठा छोड़ने के लिए मजबूर होना पड़े।

(3) कभी जूठा डालना पड़े तो (जितना जूठा डाला है उससे) पाँच गुना पैसे भण्डार में अवश्य डालें अर्थात् उतना दान अवश्य दें ताकि आगे स्वच्छन्द वृत्ति नहीं होने पावे।

(4) सामने वाले की उम्र देखकर भोजन परोसें, यदि स्वास्थ्य के बारे में जानकारी हो तो भी ध्यान से परोसें।

(5) जीभ की नहीं, पेट एवं स्वास्थ्य को देखकर थाली में भोजन लें।

यदि एक थाली में खावे तो :

वैसे स्वास्थ्य की दृष्टि से भी एक थाली में दो व्यक्तियों को भोजन नहीं करना चाहिए लेकिन कभी-कभी व्यवहार के कारण अर्थात् कोई विशेष रिश्तेदार, जीजाजी, सालाजी, मामा-काका आदि के आने पर या वे एक साथ भोजन करने के लिए आग्रह करें तो मना करना अच्छा नहीं लगता अथवा स्वयं भी किसी से विशेष प्रेम भाव होने पर अथवा कभी कुछ खाने का मन नहीं हो रहा है तो भी किसी के साथ एक ही थाली में भोजन किया जाता है या करना पड़ता है या प्रेम से करते हैं। एक-साथ भोजन करने से यदि किसी एक को भी कोई संक्रामक रोग है तो वह दूसरे को होने की सम्भावना रहती है। इसलिए ऐसे समय में भले ही एक थाली में खा रहे हैं तो भी सब्जी की कटोरी या जो भी पतली चीज अर्थात् जो हाथों से चिपकती है जैसे-दलिया, खिचड़ी, रसमलाई, खीर, छेने के रसगुल्ला आदि को अलग-अलग परोसें, चम्मच से खा रहे हैं तो और भी अलग रखें, क्योंकि खाते समय चम्मच में मुँह की लार अवश्य लग जाती है। चम्मच को दलिया आदि में डालने पर वह लार उसमें मिल जाती है। अत: कम से कम हाथ/चम्मच में चिपकने वाली चीजों को अलग-अलग रख कर खावें ताकि एक थाली में खाने के बाद भी संक्रामक

रोग न हो।

यदि दो-चार जने एक थाली में खा रहे हैं तो भोजन लेते समय ध्यान रखें। यह नही सोचें कि यह खा लेगा या इतने सारे लोग हैं कोई भी खा लेगा। ऐसा सोचकर ज्यादा ले-लेने पर भी एक-एक करके सभी उठ जाते हैं, भोजन थाली में ही रखा रह जाता है अथवा किसी सभ्य व्यक्ति को अन्त में जबरन खाना पड़ता है जिससे स्वास्थ्य खराब होने की सम्भावना बढ़ जाती है।

जूठे बर्तन नहीं रखें :

कई घरों में बर्तन साफ करने वाली आती है। यद्यपि अपने खाने के बर्तन साफ करना कोई श्रम एवं शरम की बात नहीं है लेकिन लोग बर्तन साफ करने में अपनी पोजिसन डाउन होना मानते हैं। उनके विचारों में गरीब घर के लोग अपने हाथों से बर्तन साफ करते हैं। धनाढ्य घरों में तो नौकर ही बर्तन साफ करते हैं। मेरे विचार से धर्म के क्षेत्र में धनाढ्य और गरीब का सम्बन्ध नहीं है। गरीब हो या अमीर धर्म करने के लिए, हिंसा से बचने के लिए विवेक तो रखना ही होगा। विवेक के लिए थोड़ा श्रम एवं थोड़ा समय देना भी आवश्यक है। मेरे अनुमान से जितना श्रम, समय और पैसा बर्तन साफ करवाने में लगता है उतना अपने हाथ से साफ कर लेने में नहीं लगता है। धनाढ्य घर के लोगों के पास समय नहीं रहता है। उनका जीवन बहुत व्यस्त रहता है, क्योंकि उन्हें नौकरों की नौकरी करने में अर्थात् नौकरों के इंतजार में और नौकरों के कार्य की देख-रेख करने में ज्यादा समय देना पड़ता है। खैर, बर्तन आप स्वयं साफ करें या किसी से करवायें इससे यहाँ कोई प्रयोजन नहीं है, यहाँ तो विवेक की बात है। कई घरों में सुबह के बर्तन शाम को अर्थात् 2-4 बजे और शाम के बर्तन सुबह साफ किये जाते हैं। बर्तन साफ करने वाली एक ही घर के बर्तन साफ नहीं करती है उसको जिसके यहाँ बर्तन साफ करने का काम मिलता है वह वहाँ पहुँच जाती है। जूठे बर्तनों में अन्तर्मुहूर्त मात्र के काल में त्रस (दो इन्द्रिय आदि) जीव उत्पन्न हो जाते हैं। मुँह की लार मिलने के बाद अन्तर्मुहूर्त में ही जीवोत्पत्ति का योनिस्थान बन जाता है। लड्डू बनाकर रख देने पर सात दिन की मर्यादा रहती है अर्थात् जिनमें पानी और नमक का अंश नहीं है। उन लड्डुओं में 7 दिन तक भी जीव उत्पन्न नहीं होते हैं, लेकिन यदि लड्डुओं को

जूठा करके रख दिया तो उनमें एक अन्तर्मुहूर्त में ही जीव उत्पन्न हो जाते हैं। इसी प्रकार जूठे बर्तनों में जीव उत्पन्न होते हैं। दूसरी बात जूठे बर्तनों में थोड़ा-थोड़ा पानी रहता है। उस पानी में बीसों-मक्खियाँ/मच्छर आकर गिर जाते हैं। पानी में घी-तेल की चिकनाई के कारण वे मरण को प्राप्त हो जाते हैं। कभी-कभी 5-10 मिनट में भी ऐसा हो जाता है तो जिसके घर में सुबह से शाम तक और शाम से सुबह तक बर्तन रखे रहते हैं उनके यहाँ क्या होता होगा! सुबह 7 बजे के चाय-नाश्ते के बर्तन शाम को 3-4 बजे साफ किये जाते हैं, होते हैं। उनके यहाँ मक्खियाँ-मच्छर गिर जायें तो कोई आश्चर्य वाली बात नहीं है। इसलिए पुराने जमाने में समझदार लोग कभी जूठा नहीं छोड़ते थे, जूठा छोड़ना बहुत बड़ा पाप समझते थे और भोजन के बाद थाली-कटोरी आदि को धोकर पी जाते थे। ऐसा करने में उनका उद्देश्य जो कुछ भी हो, लेकिन वे जूठन में उत्पन्न होने वाले तथा उसमें गिरकर मरने वाले जीवों की हिंसा से तो बच ही जाते थे। आप ऐसा कर सकते हैं तो करें, यदि नहीं कर सकते हैं तो भी विवेक पूर्वक बर्तनों को रखें ताकि हिंसा से बच सकें।

सावधानी :

(1) यदि रात को बारह बजे भी किसी ने भोजन किया है तो भी जूठे बर्तनों को तत्काल कम-से-कम पानी से धोकर तो रख दें।

(2) भोजन करते-करते जूठे हाथों से डिब्बे आदि में से चीज नहीं निकालें/उठावें अन्यथा उसमें भी जीव उत्पन्न हो जायेंगे।

(3) बच्चों में चाय-दूध सिकंजी आदि पीकर ग्लास कप आदि धोकर रखने की आदत डालें अथवा आप तत्काल धोकर रखें।

(4) यदि बर्तन वाली के आने का समय निश्चित नहीं हो तो आप बर्तन धोकर तो अवश्य रख दें ताकि चार घण्टे के बाद भी बर्तन वाली आवे तो हिंसा न हो।

(5) जूठन के पानी को भी समय पर ही व्यवस्थित कर दें क्योंकि जूठे बर्तनों के समान उसमें भी जीव उत्पन्न हो जाते हैं।

उपसंहार

संसार में भोजन को प्राणों की रक्षा का प्रमुख कारण माना गया है। भोजन में पानी, सब्जी, तेल, घी, दाल, धना, जीरा आदि अनेक पदार्थों की आवश्यकता पड़ती है। इन सब पदार्थों को खरीदने से लेकर रखने, साफ करने तथा उपयोग करने तक में हिंसा होती है और यदि विवेक नहीं रखा जाता है तो विशेष हिंसा हो जाती है तथा यदि प्रमाद की बहुलता हो जावे तो हिंसा का पार नहीं रहता है। इन सबका फल हमें यहाँ (आर्थिक हानि के रूप में) और अगले भव में भी भोगना पड़ता है। वास्तव में, घर में रहते हुए इन सब कार्यों के बिना काम नहीं चल सकता है। वर्तमान में धन के लिए भाग-दौड़, भोगों के प्रति आकर्षण एवं पाश्चात्य संस्कृति की चकाचौंध में व्यक्ति चाहते हुए भी विवेकपूर्वक कार्य नहीं कर पाता है। अथवा समय की कमी/अभाव होने के कारण गुरुओं का उपदेश सुनकर, शास्त्रों का पठन-पाठन करके विवेकपूर्वक कार्य करना नहीं सीख पाता है अथवा पूर्वोपार्जित कर्मोदय की प्रबलता के कारण यह विवेक पूर्वक कार्य करना सीखना ही नहीं चाहता है। अथवा दुर्भाग्य से इसे कभी विवेक का स्वरूप बताने वाले देव-शास्त्र-गुरु का समागम ही नहीं मिल पाता है इसी कारण यह छोटे से लेकर बड़ा कोई भी काम करे हिंसा से नहीं बच पाता है। हिंसा से बचे बिना धर्म कैसे हो सकता है? विवेक पूर्वक कार्य करने में और लापरवाही से यद्वा-तद्वा कार्य करने में न समय का अन्तर पड़ता है और न आर्थिक व्यय का, न पदार्थों के उपभोग में आनन्द का अन्तर पड़ता है और न कार्य करने के श्रम का। अन्तर पड़ता है तो मात्र कार्य करने की शैली का, कार्य करने की विधि का, कार्य करते समय अपनी बुद्धि के उपयोग का। हमें अहिंसा का पालन करने के लिए मात्र विधि को बदलना है, बुद्धि का सदुपयोग करना है। उपर्युक्त प्रकरण में भोजन बनाते समय, पानी छानते समय, सब्जी सुधारते बनाते/रखते समय तथा भोजन करते समय आदि कुछ बातों पर प्रकाश डाला गया है। रसोई घर में और भी अनेक कार्य होते हैं, अनेक वस्तुएँ होती हैं, क्योंकि संसार में अलग-अलग देशों की अलग-अलग परम्पराएँ होती हैं। अलग-अलग खाद्य सामग्रियाँ होती हैं और अलग-अलग ही उन्हें संस्कारित करने, खाने, बनाने, रखने की विधियाँ

होती हैं। जैसे-मध्यप्रदेश में तली हुई वस्तुएँ ज्यादा बनाई जाती हैं, रखी जाती हैं। तमिलनाडु में चावल-दाल आदि गलाकर इडली-डोसा आदि बनायें जाते हैं। यदि वे पानी छानकर दाल-चावल आदि गलाने के स्थान पर पानी को गरम करके गलावें तो उन्हें बिना छने पानी में गले हुए दाल-चावल के इडली-डोसा नहीं बनाने, खाने पड़ेंगे। सभी स्थानों की विधियों में विवेक बताने की प्रज्ञा भगवान को छोड़कर किसमें हो सकती है। अत: यहाँ रसोई घर में विवेक पूर्वक भोजन बनाने सम्बन्धी थोड़ी-सी विधियाँ लिखी गई हैं, संकेत दिया गया है। आप अपने रसोई घर में अथवा जहाँ-कहीं भोजन बनावें/खावें इन संकेतों से अन्य भी सब समझकर विवेकपूर्वक कार्य करें, हिंसा से बचें ताकि मनुष्य पर्याय का समीचीन फल प्राप्त कर सकें।

धार्मिक अनुष्ठानों में

संसार में लगभग सारी मानव जाति यह चाहती है कि हम भी कुछ ऐसे काम करें जिससे हमारे दिन भर किये गये पापों का क्षय हो जावे। हमें इस भव में शान्ति मिले और परभव भी सुधर जावे। इसलिए कोई भगवान के दर्शन करने मंदिर जाते हैं, कोई माला फेरते हैं, कोई स्वाध्याय करते हैं, कोई अभिषेक करते हैं, कोई भक्ति आदि करते हैं। इन सबमें से देवदर्शन प्रमुख है। कोई भी आस्तिक व्यक्ति चाहे दो मिनट के लिए ही सही लेकिन अपने इष्ट जिनेन्द्र देव के दर्शन अवश्य करता है और वास्तव में उपर्युक्त सभी कार्यों में से सबसे ज्यादा पापों का क्षय देवदर्शन से होता है। हम देवदर्शन करने, मंदिर जाते हुए अथवा देवदर्शनादि धार्मिक कार्य के साथ-साथ कितने ही ऐसे कार्य करते रहते हैं जिससे भगवान के दर्शन आदि का जितना फल मिलना चाहिए उतना नहीं मिल पाता है। कभी-कभी तो विशेष प्रमाद हो जावे तो पुण्य से भी ज्यादा पाप का बन्ध हो जाता है और कभी पुण्य के साथ पाप का मिश्रण हो जाता है। इसलिए हम किस विधि से धार्मिक क्रियायें करें कि हमें अनुष्ठानों का अधिक से अधिक/पूर्ण फल मिल सके अथवा कम-से-कम पाप का बन्ध तो न हो। इसी सम्बन्ध में यहाँ कुछ विचार किया जाता है -

(1) मन्दिर जाते समय (2) दर्शन करते समय (3) अभिषेक करते समय (4) पूजा करते समय।

मन्दिर जाते समय :

कई लोग घर से भगवान के दर्शन/पूजन करने के लिए रवाना होते हैं लेकिन रास्ते में यदि सब्जी-फल अथवा कोई आवश्यक चीज दिख जाती है तो उसे खरीदने में लग जाते हैं। कई लोग तो यदि कोई देनदार मिल जावे तो उससे उधार की राशि ही माँगने में लग जाते हैं, क्या मंदिर जाने की यह विधि सही है?

कई लोग मुँह में गुटखा, पाउच, सुपारी, आँवला आदि चबाते-चबाते या खाने के बाद कुल्ला किये बिना ही मंदिर में चले जाते हैं। कुल्ला करने के बाद भी कभी-कभी एक-आध दाना दाँतों में से मुँह में आ जाता है, उसको वे वहीं चबाने लगते हैं अथवा उसको मंदिर में ही थूक देते हैं, वे स्वयं सोचें क्या मंदिर में भगवान के सामने खाना या थूकना उचित है? उन्हें भगवान के दर्शन करते हुए भी शायद सब्जी, दूध आदि ही दिखते होंगे या यह आकुलता तो अवश्य होती होगी कि मैं जल्दी चला/चली जाऊँ, कहीं लेट हो गया तो सब्जी-फल बिक जायेंगे या छँटे-छँटाये पीछे के रह जावेंगे। अथवा टोकरी, केटली आदि मंदिर के बाहर रखकर आये हैं कोई उठाकर नहीं ले जावे...। ऐसा करने में दर्शन करने का नियम तो अवश्य पूरा हो जाता है लेकिन दर्शन का फल तो नहीं मिलता है। इससे तो अच्छा है वह जिसके भले ही मंदिर जाने का नियम नहीं है फिर भी सब्जी दूध आदि लेने जाता है और रास्ते में अथवा समय निकालकर भगवान के दर्शन भी करके आता है। उसके सब्जी आदि लाने का पाप मन्द/कम हो जाता है। इसी विषय में कहा है- ''जो योग में भी भोग खोजता है वह पापी है, संसार की वृद्धि करने वाला है और जो भोग में भी योग खोजता है वह धर्मात्मा है, निकट भव्य है।'' आप भगवान के दर्शन करने जाने रूप योग (पुण्य कार्य) में सब्जी लाना आदि रूप भोग के कार्य नहीं करें अपितु सब्जी लाना आदि भोग रूप कार्य में भगवान के दर्शन रूप योग कार्य करना कभी नही भूलें। वास्तव में, हमारे उद्देश्य से ही पाप-पुण्य का बन्ध होता है, कार्य की सिद्धि होती है। अत: भगवान के दर्शन का लक्ष्य बनाकर मंदिर जावें। रास्ते में अन्य कार्य नहीं करें। यही विवेक एवं समझदारी है।

कई लोग घर से तैयार होकर मंदिर के लिए रवाना होते हैं, कभी तो रवाना होते ही और कभी कुछ दूर जाते ही उन्हें रास्ते में यह मालूम पड़ता है कि नल आ गये हैं अर्थात् नल में पानी आने लगा है तो वे लौट आते हैं। उन्हें ऐसा लगता है कि यदि मैं लौटकर नहीं गई तो पूरे दिन पानी के बिना क्या करेंगे। ऐसा करने वालों को देखकर लगता है कि भगवान से भी ज्यादा मूल्यवान पानी है। वे यह सोचें कि यदि मंदिर के दर्शन करके लौटने तक नल बन्द हो जायेंगे, पानी नहीं भी मिल पाया तो हेण्डपम्प, कुँए आदि से पानी लाकर पूर्ति की जा सकती है लेकिन भगवान के दर्शन किये बिना लौटते समय यदि आयु समाप्त हो गई तो क्या आगे कभी उसकी पूर्ति की जा सकती है, कभी नहीं, क्योंकि मंदिर जाने रूप उत्तम कार्य को छोड़कर पानी भरने रूप भोग के कार्य को करते समय कौन-सी आयु का बंध होगा, कहा नहीं जा सकता है। अत: यदि नल आने की सम्भावना है तो आप उस समय मंदिर नहीं जावें या ऐसी व्यवस्था करके जावें कि अचानक नल आ भी जावें तो भी हमारी टंकी आदि में तो पानी भर ही जावें ताकि न मंदिर जाते-जाते लौटना पड़े और न ही मंदिर से लौटने की आकुलता करनी पड़े। इसी प्रकार कुकर आदि लगाकर भी मंदिर नहीं जावें। यदि कभी मंदिर के लिए निकल ही गये हैं तो बीच में नहीं लौटें, भले ही 2-4 मिनट में दर्शन करके भगवान से क्षमा माँगकर लौट आवें परन्तु दर्शन करके ही लौटें क्योंकि ऐसी घटना कोई हमेशा नहीं घटती। ऐसी घटना तो कभी-कभी हमारे मंदिर जाते समय होने वाले भावों की परीक्षा के लिए ही होती है। हमें परीक्षा में उत्तीर्ण होना चाहिए। इसी प्रकार रिश्तेदार आदि के मिलने पर भी ऐसा ही होता है, उस समय भी हम अपने मोह को संवृत रखें। चौबीस घण्टे हम अपने रिश्तेदारों से मिलना, बातें करना आदि कार्य करते ही हैं। 5-10 मिनट के लिए हम धर्म कर रहे हैं तो धर्म ही करें। आप यह भी नहीं सोचें कि रिश्तेदार नाराज हो जायेंगे। यदि सच में वे आपके रिश्तेदार हैं तो नाराज नहीं होंगे और नहीं हैं तो वे अन्य कोई छोटा-सा कारण मिलने पर भी नाराज हो सकते हैं। उस समय भी हम उनसे क्षमा माँग कर काम चलाते ही हैं। अत: आप भगवान के दर्शन करने का लक्ष्य बनाकर घर से निकले हैं तो दर्शन करके ही लौटें। आपको अपूर्व शान्ति का अनुभव होगा।

कैसे वस्त्र पहन कर जावें :

आप शुद्ध वस्त्र पहनकर जावें, क्योंकि वस्त्रों की शुद्धि-अशुद्धि का भी हमारे भावों पर बहुत प्रभाव पड़ता है। अशुद्धि (M.C.) वाली महिला से छूकर अथवा उससे स्पर्शित वस्त्र पहनकर मंदिर नहीं जावें। सफर के समय गाड़ी में भी सभी तरह के लोग रहते हैं इसलिए सफर के कपड़ों से मंदिर के अन्दर प्रवेश नहीं करें, दूर से दर्शन कर सकते हैं। शौच जाकर अर्थात् लेटि-न के लिए जाकर आये कपड़ों से भी मंदिर में नहीं जावें। हो सके तो आप बाथरूम में जब पेशाब करने जाते हैं पानी से शुद्धि (साफ) करके आएँ। इससे आपको डबल लाभ होगा। एक तो आपके कपड़ों में लघुशंका (पेशाब) का अंश नहीं रहने से बैक्टिरिया उत्पन्न नहीं होंगे, जिससे असंख्यात जीवों की हिंसा से आप बच जायेंगे अर्थात् पेशाब के छींटे वस्त्र में लगे रहने से असंख्यात जीव उत्पन्न होते हैं। दो-चार दिन यदि वस्त्र नहीं बदलें/धोएँ तो उनमें बदबू आने लगती है। दूसरी बात लघुशंका भी एक मल है। उससे लिप्त वस्त्रों से पवित्र स्थानों में प्रवेश करने, जिनवाणी आदि धार्मिक ग्रन्थों (पुस्तकों) को छूने से पाप का आस्रव होता है। इसी प्रकार लेटि-न जाते समय भी टावेल (महिलाएँ एक गाऊन आदि कोई भी वस्त्र) अलग रख लें। उन कपड़ों को बाथरूम में रख लें ताकि कपड़े बदलने में तकलीफ नहीं पड़े। पहने हुए वस्त्र खोलकर अलग रख दें और उन टावेल/गाऊन आदि को पहनकर लेटि-न जाकर वापस आकर स्नान करके वे ही वस्त्र या शुद्ध वस्त्र पहन लें। टावेल को वहीं सुखा दें ताकि लेटि-न में रहने वाले करोड़ों कीटाणु जो वहाँ जाने वाले के कपड़े, शरीर आदि पर चिपक जाते हैं जिससे वे वस्त्र अपवित्र हो जाते हैं, उनको पहनकर मंदिर में जाने से मंदिर में भी अपवित्रता आती है और हमारे भावों में भी अपवित्रता आती है अत: ऐसे वस्त्र पहनकर मंदिर में जाने से पाप का बन्ध होता है। इसी प्रकार पेशाब आदि के स्पर्शित वस्त्रों से मंदिर में प्रवेश नहीं करें।

कई लोग बिस्तर के कपड़ों से (बृह्मचर्य का पालन नहीं करके भी) ही मंदिर चले जाते हैं अथवा नगर में साधु हों तो उनके दर्शन कर लेते हैं, उनके चरण स्पर्श कर लेते हैं उनका कमण्डलु उठाकर उनके साथ शौच आदि के लिए चले जाते हैं। सामान्य से ही बिस्तर अपवित्र होते हैं, उन पर सोकर

अथवा छूकर ही मंदिर नहीं जाना चाहिए। फिर यदि विवाहित है तो विवेक रखना तो अति आवश्यक है ही। धार्मिक दृष्टि की बात तो दूर डॉक्टर और वैज्ञानिक लोग भी शयन कक्ष में बैठकर भोजन-नाश्ता करना आदि कार्य करने का निषेध करते हैं क्योंकि इससे स्वास्थ्य पर बहुत दुष्प्रभाव पड़ता है। इसीलिए भारतीय संस्कृति में उठते ही शौचादि से निवृत्त होकर स्नानादि करके भगवान के दर्शन/पूजा आदि करने के बाद ही दूसरे कार्य अर्थात् लौकिक कार्य प्रारम्भ करने की परम्परा है। इसीलिए हमारे पूर्वज रात्रि में पहनने के वस्त्र अलग ही रखते थे, उनको वे मात्र शयनकक्ष में ही पहनते थे। प्रात: उठते ही पहले स्नान करके ही खाने-पीने आदि की वस्तु छूते थे, रसोई घर में जाते थे। आज भी कई लोग इस बात का विवेक रखते हैं लेकिन कोई-कोई ऊपर-ऊपर के वस्त्र तो बदल लेते हैं परन्तु अन्तरंग वस्त्र वे ही पहने रहते हैं, उन्हें नहीं बदलते हैं। आप ऐसा नहीं करें। रात्रि के अशुद्ध वस्त्र पहनकर मंदिर नहीं जावें। मेरे विचार से तो आप मंदिर जाने के लिए सारे स्वच्छ वस्त्र अलग ही रखें ताकि पवित्रता भी बनी रहे और भगवान के दर्शन करने में भी मन लगे।

कई लोग दिन में भी भोग कर लेते हैं और उन्हीं वस्त्रों से मंदिर चले जाते हैं। उन्हीं वस्त्रों में यदि रात्रि में सांस्कृतिक कार्यक्रम हो रहे हों तो उन्हें देखने-करने, करवाने चले जाते हैं। वहाँ वे मंदिर के दरी, वस्त्र, बर्तन आदि उपकरणों को छूते हैं, उठाते हैं, रखते हैं। वे यह नहीं सोचते हैं कि मैंने इन अपवित्र वस्त्रों से एवं अपवित्र शरीर से मंदिर के उपकरणों को छू लिया है। वर्षों तक लोग उन्हीं दरी आदि पर बैठकर बर्तन आदि में द्रव्य लेकर पूजा करेंगे, उसका पाप किसको लगेगा, क्योंकि मंदिर की दरी, चटाई, आसन आदि तो कभी धुलते ही नहीं हैं। बेचारे पूजा करने वालों को तो कभी ऐसी शंका भी नहीं हो सकती है कि मंदिर के उपकरणों को कोई अपवित्र शरीर और वस्त्रों से छू भी सकता है अत: थोड़ा विवेक रखें। यही नियम रखें कि नहाने के बाद शुद्ध वस्त्र पहनकर किसी को बिना छुए ही मंदिर जाऊँगा/जाऊँगी। अथवा यदि किसी से छू गया तो मंदिर के बाहर से ही दर्शन करूँगा। मंदिर जाने वालों से या मंदिर में किसी को छू जावे तो कुछ नहीं और यदि ब्रह्मचर्य नहीं पाला है तो भगवान के दर्शन नहीं करने में ही ज्यादा लाभ है। शौच, लघुशंका या

किसी अशुद्धि से छुए वस्त्र हैं तो मंदिर के बाहर से ही दर्शन करें।

सावधानी :

(1) हो सके तो कपड़े गीले करके सुखा दें। नहाते ही सीधे वे ही कपड़े पहनकर मंदिर जावें।

(2) लेटि-न जाने के लिए कपड़े अलग रखें। बच्चों में भी शुरू से ही ऐसे संस्कार ड़ालें।

(3) लघुशंका करके पानी से शुद्धि करके ही आवें।

(4) यदि बाजार या ऑफिस में किसी को छुए हैं तो चावल आदि द्रव्य नहीं चढ़ावें। भण्डार में पैसे डाल दें।

(5) बिस्तर के वस्त्रों से मंदिर नहीं जावें।

(6) यह नहीं सोचें कि इतनी शुद्धि नहीं रख पाते हैं इसलिए हम मंदिर ही नहीं जावें। यथाशक्य शुद्धि रखें और मंदिर अवश्य जावें।

(7) रात्रि में पहने वस्त्रों एवं शौच के वस्त्रों की शुद्धि अवश्य रखें, हो सके तो लघुशंका की भी शुद्धि कर लें।

यदि प्रेस के कपड़े पहनकर जावें तो :

कई लोग अच्छे प्रेस के साफ वस्त्र पहनकर मंदिर जाते हैं। प्रेस किये हुए कपड़े अधिकांशत: अशुद्ध ही होते हैं। यदि धोबी से कपड़े धुलवाते हैं या प्रेस करवाते हैं तो विचारणीय विषय है क्योंकि धोबी किसके और कौन से कपड़े नहीं धोता? नहीं छूता? वह तो डिलेवरी आदि के अशुद्ध वस्त्र भी धोता ही है। उन कपड़ों को धोकर वह नहाकर भी प्रेस करता हो तो भी अशुद्ध ही रहता है, क्योंकि वह जो धुले हुए वस्त्र पहनता है वे भी अशुद्ध वस्त्रों से स्पर्श किये हुए ही होते हैं इसलिए धोबी के धुले प्रेस किये वस्त्र तो शुद्ध हो ही नहीं सकते हैं। यदि हम घर में भी प्रेस करते हैं तो अधिकतर महिलाएँ M.C.के दिनों में भी प्रेस करती हैं। यदि वे M.C. के दिनों में प्रेस नहीं करती हैं तो भी वे कपड़े अशुद्ध ही रहते हैं, क्योंकि प्रेस करने के पहले टेबिल पर मोटा कपड़ा /चादर आदि बिछाना आवश्यक होता है इसलिए वह बिस्तरों में से चादर निकालकर टेबिल पर बिछा देती है उस अशुद्ध चादर से छूकर धुले-धुलाए कपड़े भी अपवित्र हो जाते हैं। अत: आप स्वच्छ दिखने वाले प्रेस किये हुए

कपड़े पहनकर मंदिर नहीं जावें।

शुद्ध वस्त्र पहन कर जावें सोला नहीं :

कई लोग शुद्ध वस्त्र के स्थान पर सोला के (जिनको पहनकर किसी को छूआ नहीं जाता है) वस्त्र पहनकर मंदिर जाते हैं। उन लोगों को मंदिर में केवल इसी बात का ध्यान रखना पड़ता है कि कोई उनसे छू नहीं जावे। किसी के वस्त्र का छोर भी मेरे वस्त्र से या मेरे से टच नहीं हो जावे। यदि कोई टच हो गया तो मुझे वापस कपड़े बदलने पड़ेंगे....। यदि कोई भूलकर छू ले तो वहाँ कोपाग्नि भी उत्पन्न हो जाती है। कोई-कोई तो छूने वालों को वहीं पर चार बातें सुना देते हैं और यदि नासमझ बच्चा छू जावे तो बेचारे को अच्छी डाँट के साथ-साथ मार भी खानी पड़ती है। ऐसे सोला के वस्त्र पहनकर मंदिर जाने वाले को क्या भगवान के दर्शन होते हैं? हाँ, आँखों से भगवान दिख अवश्य जाते होंगे। लेकिन दर्शन तो नहीं हो सकते हैं, क्या वह मंदिर में बैठकर भी धर्मध्यान कर सकता है?....। इसका अनुभव तो हम लोगों को भी होता है यदि कभी कारणवश हम शुद्धि करके (शुद्ध वस्त्र पहनकर) मंदिर जाते हैं तो आँखों से भगवान दिखते तो हैं किन्तु मन दर्शन में नहीं लगता है। अत: आप शुद्ध वस्त्र पहनकर ही मंदिर जावें, सोला पहनकर नहीं जावें। अन्यथा आपको भगवान के दर्शन कभी नहीं होंगे।

एक बार वस्त्र बदलने और सोला बनाने के लिए कपड़े गीले करके डालने में इतनी हानि नहीं होगी जितनी हानि भगवान के दर्शन नहीं होने से हो जायेगी।

इसी प्रकार कई लोग सोला के वस्त्र पहनकर गुरुवर की क्लास पढ़ने चले जाते हैं, सुनने चले जाते हैं। यद्यपि उनको कानों से पूरा अध्यापन, प्रवचन आदि सुनाई देता है लेकिन याद कुछ नहीं रह पाता, क्योंकि कानों ने सुनने का कार्य तो किया परन्तु याद रखने का काम तो उपयोग (मन) का था वह तो सोला की रक्षा करने में ही लगा रहा। इससे तो मुझे पुराने लोगों का सोला अच्छा लगता है कि वे घर से बाहर निकलने को ही सोला बिगड़ना मानते हैं। उनको कम-से-कम मंदिर आदि धार्मिक कार्यों में सोले की रखवाली तो नहीं करनी पड़ती है। छू-छू तो नहीं करना पड़ता है।

कई लोग तो सुबह छह-साढ़े छह बजे से सोला पहनते हैं। उनका वह सोला शाम को सूर्यास्त तक चलता रहता है। वे उन्हीं कपड़ों को अर्थात् सोला के वस्त्र पहनकर ही (दोपहर में) सो जाते हैं, जूठे बर्तन साफ कर लेते हैं, पूरे घर की सफाई कर लेते हैं, चर्बी से युक्त साबुन से कपड़े धो लेते हैं, कभी-कभी तो घर की नाली/बाथरूम भी साफ कर लेते हैं फिर भी उनका सोला खतम नहीं होता है जबकि लोक में व्यक्ति घर की सफाई, कपड़े धोना, बर्तन साफ करना आदि कार्य करने के बाद नहाता है और इन सब कार्यों को करने के बाद भी इसका सोला समाप्त नहीं होता है यह बड़े आश्चर्य की बात है। मुझे लगता है कि वे किसी अशुद्ध वस्तु के स्पर्श से सोला बिगड़ना नहीं मानते हैं अपितु किसी वस्त्र मात्र के स्पर्श से सोला बिगड़ना मानते हैं। अधिकतर लोग पूरे दिन सोला इसलिए पहने रहते हैं कि दोपहर में पानी पीना है, शाम को भोजन करना है। ऐसा उद्देश्य रखने वाले को तो पूरे दिन भोजन करने की भावना ही बनी रहती है तो भगवान जाने उन्हें कौन से कर्म का बन्ध होता होगा? अत: पूरे दिन सोला पहनने वाले सोच-विचार कर काम करें। यह भी एक भाव हिंसा है इससे अवश्य बचें।

सावधानी :

(1) मंदिर जाने, प्रवचन सुनने, क्लास पढ़ने आदि के लिए एक ड्रेस अलग रखें।

(2) भोजन बनाते एवं करते समय ही सोला के वस्त्र पहनें ताकि भावहिंसा से बच सकें।

(3) अचानक कोई छू जावे तो संक्लेश नहीं करें, अन्यथा सोला करने का इतना फल नहीं मिलेगा जितना पाप गुस्सा करने से लग जायेगा।

M.C. सम्बन्धी शुद्धि रखें :

कई लड़कियाँ/महिलाएँ M.C. में भी भगवान के मंदिर, साधु की वसतिका आदि धार्मिक स्थानों पर चली जाती हैं। किसी को तो यह मालूम ही नहीं रहता है कि हमें इन दिनों में धार्मिक अनुष्ठान नहीं करने चाहिए। धार्मिक स्थानों पर नहीं जाना चाहिए। ऐसा छोटी उम्र वाली लड़कियों के लिए तो फिर भी कहा जा सकता है लेकिन 18-20 वर्ष की लड़कियाँ भी जब ऐसा कर

लेती हैं तो लगता है कि शायद वह धर्म के लोभ में (मंदिर जाने से मुझे पुण्य मिलेगा, सुख मिलेगा) अथवा मान कषाय के कारण अर्थात् मैं अपनी M.C. के बारे में बता दूँगी तो लोग क्या सोचेंगे कि यह बहुत पापी है, इसकी इतने अच्छे कार्यक्रम में अशुद्धि हुई है अथवा कोई-कोई यात्रा जाते हैं तो सोचते हैं कि यहाँ पर फिर से कब आने को मिलेगा, पता नहीं वापस कभी आना नहीं हुआ तो एक बार तो भगवान के दर्शन कर ही लेते हैं लेकिन वे यह नहीं सोचती हैं कि ऐसी स्थिति में भगवान के दर्शन से इतने परिणाम निर्मल नहीं होंगे, इतना पुण्य नहीं मिलेगा जितना पाप का बन्ध हो जायेगा अर्थात् पुण्य तो होगा या नहीं होगा, उससे अनन्तगुणा पापबन्ध अवश्य होगा जिसका फल भवों-भवों तक मात्र दु:ख रूप ही मिलेगा।

एक दिन एक महिला 20 वर्ष पहले किये गये पाप का प्रायश्चित्त लेने के लिए आई। उसने कहा- ''माताजी ! मैंने 20 वर्ष पहले M.C. में ही भगवान की पूजा की, साधुओं को आहार दिया, शुद्ध भोजन बनाया, जिनवाणी का स्पर्श-अध्ययन आदि सभी धार्मिक कार्य किये।'' मैंने पूछा-''तुमने ऐसा क्यों किया, क्या तुम्हें पता नहीं था कि इन दिनों में ये कार्य नहीं करने चाहिए....।'' उसने कहा-''पता था और उसके पहले भी मैंने कभी इन दिनों ऐसे कार्य नहीं किये थे तथा न ही उसके बाद ही कभी किये लेकिन उस समय पता नहीं क्यों/ कैसे मेरी बुद्धि भ्रष्ट हो गई। मुझे कुछ समझ में ही नहीं आया कि मैं इतना बड़ा पाप कर रही हूँ। और यह सब मैंने एक दिन नहीं पूरे M.C. के समय में किया था। मैंने यह बात आज तक किसी को नहीं बताई लेकिन हर समय यह बात मेरे अन्दर-अन्दर चुभती रहती है, मुझे उसका पश्चाताप भी होता है.....अत: आप मुझे प्रायश्चित्त दे दीजिए।'' वो तो भाग्यशाली होगी, पूर्वोपार्जित पुण्य का उसके प्रबल उदय होगा इसलिए उसे तत्काल उस पाप का फल नहीं मिला। यदि इस भव में उसको उसका फल मिल जाता तो उसके शरीर में कुष्ठ हो जाता और भी न जाने क्या-क्या बीमारियाँ हो जातीं। घर की सम्पत्ति नष्ट हो जाती, सुख-शान्ति का तो नाम निशान ही मिट जाता...। अत: आप स्वयं धर्म के लोभ में या मान कषाय के कारण अथवा संकोच में पड़कर या किसी की बातों में आकर अर्थात् कोई सहेली, चाची बुआ आदि यह कहे कि ''अरे

कुछ नहीं होता। मैं या वो लड़की /महिला तो कितनी बार इस टाइम में धार्मिक कार्यों में गये, कुछ नहीं हुआ तुम तो चलो कुछ नहीं होगा।'' अपना विवेक नहीं खोवें। छोटी उम्र में ही बहन, ननद, बेटी, सहेली आदि को बता दें या किसी पुस्तक में इसके बारे में लिखा हो तो पढ़ा दें ताकि वे समझ जावें कि M.C. के समय में धार्मिक अनुष्ठान करने से इतना भारी पाप का आस्रव होता है।

कई महिलाओं को मंदिर आदि धार्मिक स्थलों में या धार्मिक कार्य करते समय ऐसा डाउट भी हो जाता है कि कहीं....। फिर भी वे उपर्युक्त कारणों के होने पर भी वहीं बैठी रहती हैं, धार्मिक कार्य करती रहती हैं। कई महिलाओं/ लड़कियों को यह मालूम रहता है कि इस समय मैं वहाँ जा रही हूँ तो ऐसा होने की अर्थात् M.C. होने की पूरी-पूरी सम्भावना है फिर भी वे वहाँ पहुँच जाती हैं और वहाँ ऐसा होता भी है तब वहाँ सबको छू करके महान् पाप का बन्ध कर लेती हैं। वहाँ वे शरीर से धर्म करती हुई दिख सकती हैं लेकिन वास्तव में तो वे धर्म कर ही नहीं पाती हैं, क्योंकि उनके मन में धक्-धक् लगी रहने से वहाँ मन लगता ही नहीं है। ऐसा करने से उनका नुकसान ही नुकसान होता है लाभ तो एक प्रतिशत भी नहीं होता है। एक तो उनको धर्म/पुण्य नहीं मिला दूसरा ऊपर से पाप का भण्डार बँध गया। तीसरा वहाँ ऐसा होने पर जिन्दगी भर उसकी टीस अन्दर लगी रहती है, घुटन होती रहती है। इस अपेक्षा से तो वह धार्मिक स्थल पर नहीं जाती। घर पर ही अपने कर्मों पर दु:खी होती। अपने भाग्य को कोसती तो शायद उसका पूर्वोपार्जित पापकर्म कुछ हल्का होता और आगे के लिए पाप का बन्ध भी नहीं होता। अत: आप विवेक रखकर पाप से स्वयं बचें और दूसरों को भी बचावें।

सावधानी :

(1) M.C. के समय धर्म का लोभ नहीं करें।

(2) यह नहीं सोचें कि लोग क्या कहेंगे।

(3) यदि धार्मिक कार्य करते समय बहम भी हो जावे तो तत्काल वह कार्य छोड़ दें, पाप नहीं लगेगा।

(4) M.C. टाइम आने के यदि हर बार 5-6 दिन कम होते हों तो 8 दिन पहले ही सावधानी रखें।

(5) M.C. के आगे-पीछे शारीरिक चेष्टाओं को समझने की कोशिश करके अनुमान रखें।

(6) लज्जा या छल से M.C. को छुपाकर धार्मिक आयोजनों में हिस्सा नहीं लें।

(7) यदि धार्मिक स्थलों में M.C. हो जावे तो भगवान से क्षमा अवश्य माँगें और गुरु से प्रायश्चित्त लें।

(8) M.C. का टाइम है तो भगवान के दर्शन करके घर आकर शेष पाठ-जाप आदि कर लें। पूजा का नियम हो तो पूजा भी पढ़ लें। द्रव्य मंदिर में रख दें।

(9) ऐसे समय में जिनवाणी को हाथ में लेकर पाठ आदि नहीं करें। स्टेण्ड, चौकी आदि पर पुस्तक आदि रख कर दूर से पढ़ें ताकि अचानक ....जिनवाणी छू न पावें।

(10) M.C. के वस्त्र/पेंटी या पेटीकोट तो अवश्य अलग रखें। दाग लग जावे तो किसी विशेष पाउडर आदि से साफ कर लें ताकि हमेशा घर में पहनने में ग्लानि नहीं आवे।

कैसे वस्त्र पहनकर नहीं जावें :

कई लोग नये अर्थात् जिनको आज तक नहीं पहना है, ऐसे वस्त्र पहनकर भगवान के दर्शन करने के लिए जाते हैं। कई लोग तो नये वस्त्र पहनने के लिए पर्युषण पर्व आदि विशेष धार्मिक दिनों का इंतजार करते रहते हैं। कभी-कभी तो सजी-धजी महिला को मंदिर में देखकर ऐसा लगता है कि कहीं यह किसी की शादी या किसी पार्टी में जा रही थी सो भूलकर यहाँ आ गई दिखती है। इस प्रकार के वस्त्राभूषण पहनकर जाने से कितना अन्तराय एवं चारित्र मोहनीय कर्म का बन्ध होता है कभी आपने सोचा है? आपके वस्त्राभूषण की चमक-दमक को देखकर पूजा, स्वाध्याय, माला आदि धर्मध्यान करते-करते कितने लोगों का उपयोग धर्मध्यान को छोड़कर आपकी तरफ चला जाता होगा। कितने लोगों के मन में आप जैसे ही श्रृंगार करने के भाव उत्पन्न होते होंगे, कितने लोगों के मन में मंदिर जैसे पवित्र स्थान में भी, वीतराग प्रभु के चरणों में भी भोगों के प्रति राग उत्पन्न होता होगा। इन सबसे आपको कितना पाप लगता

होगा, कौन कह सकता है? कई लोग कहते हैं कि हम सीधे-सादे कपड़े पहनकर मंदिर जायेंगे तो लोग सोचेंगे कि ये बहुत गरीब घर के दिखते हैं इसलिए ऐसे कपड़े पहनकर आये हैं और अपनी गरीबी को मिटाने के लिए ही तो मंदिर में धर्म करने आये हैं सुखी-धनाढ्य होते तो मंदिर क्यों आते? अच्छे वस्त्राभूषण पहने हुए देखकर गरीब लोगों को भी प्रेरणा मिले कि अरे, ये इतने धनाढ्य होकर भी भगवान के दर्शन-पूजन करने आते हैं तो हम तो वैसे ही गरीब हैं हमें तो भगवान के दर्शन-पूजन आदि करने ही चाहिए इसलिए हम अच्छे वस्त्राभूषण पहनकर मंदिर आते हैं। आपका कहना कथंचित् सत्य है लेकिन संसार में आदर्श तो सादगी से रहने वालों का ही माना जाता है। किसी अच्छे वस्त्राभूषणों से सुसज्जित व्यक्ति को देखकर व्यक्ति में एक क्षण के लिए आकर्षण उत्पन्न हो सकता है लेकिन उसको अच्छा मानकर तैयार होने की प्रेरणा नहीं दे सकता है जबकि सादा जीवन उच्च विचार रखने वाले गाँधी जी आदि को सभी लोग आदर्श मानते हैं। **दूसरी बात** आपके शृंगार आदि को देखकर कोई यह भी सोच सकता है कि अरे अपने पास तो न इतने अच्छे वस्त्र हैं और न ही मूल्यवान आभूषण। मंदिर में तो सभी लोग अच्छे तैयार होकर आते हैं। हम मंदिर कैसे जावें। उनके सामने हम तो बिल्कुल भद्दे से लगेंगे। ऐसा सोचकर यदि चार जनों ने भी मंदिर आना बन्द कर दिया अथवा आपके शृंगार को देखकर किसी ने शृंगार करके मंदिर आना प्रारम्भ कर दिया तो कितना नुकसान हो जायेगा। उसके ऐसा करने में क्या आपको कुछ भी पाप नहीं लगेगा, आप स्वयं सोचें। **तीसरी बात** अच्छे नये मूल्यवान वस्त्राभूषण पहनकर मंदिर जाने पर क्या आपका मन भगवान के दर्शन में लगता है आप स्वयं अनुभव करें। **चौथी बात** क्या नये (बिना धुले) कपड़े शुद्ध हो सकते हैं, क्योंकि मूल्यवान वस्त्र तो बड़े-बड़े फंक्सन में पहने जाते हैं जहाँ सभी प्रकार के लोग आते हैं वहाँ शुद्धि-अशुद्धि का विवेक रहता ही नहीं है जिससे वे वस्त्र भी अशुद्ध हो जाते हैं, उन्हीं को पहनकर मंदिर में जाना कितना उचित है, आप स्वयं सोचें?

प्रश्न - यदि हम नये वस्त्राभूषण पहनकर मंदिर में ही नहीं जायेंगे तो कहाँ जायेंगे, क्या हम भगवान की भक्ति में कभी अच्छे वस्त्राभूषण नहीं पहनेंगे?

उत्तर – ऐसा कुछ नहीं है, भगवान के दर्शन-पूजन, पाठ-जाप आदि के समय शुद्धि रखना आवश्यक होता है क्योंकि उस समय अष्ट द्रव्य चढ़ाना, माला-जिनवाणी को छूना आदि कार्य करने पड़ते हैं। इन कार्यों में वस्त्रों की शुद्धि आवश्यक है तथा इन कार्यों को करते समय वैराग्य-आत्म कल्याण की भावना मुख्य रहती है। इसलिए सज-धज कर तैयार होने का निषेध है। जब भगवान की रथयात्रा निकलती है, पञ्च कल्याणक महोत्सव, वेदी प्रतिष्ठा आदि धार्मिक कार्य होते हैं। दूल्हे-दुल्हन को मंदिर ले जाना आदि के समय भी बड़े-बड़े फंक्सन होते हैं उनमें आप अच्छे-से-अच्छे वस्त्राभूषण पहनकर जावें तो कोई दिक्कत नहीं है क्योंकि यह हमारा भगवान के प्रति बहुमान है। ऐसे कार्यक्रमों में अच्छे वस्त्राभूषण पहनने से अन्य समाज वालों को भी यह समझ में आता है कि ये इतने धनाढ्य सेठ/सेठानी होने पर भी भगवान के प्रति इतनी भक्ति है कि ये भगवान के पीछे-पीछे पैदल चल रहे हैं। बाकी अन्य स्थानों पर तो अच्छे वस्त्राभूषण पहनते ही हैं, अत: भगवान के दर्शन-पूजन आदि के समय नये वस्त्राभूषण नहीं पहनें।

किसी भव्यात्मा का यह भी कहना रहता है कि भगवान की पूजा तो इन्द्र-इन्द्राणी बनकर करना चाहिए। इन्द्र-इन्द्राणी बनकर ही पूजा करना चाहिए लेकिन किसी विशेष दिन में ही इन्द्र-इन्द्राणी बनकर पूजा क्यों की जाय, हमेशा क्यों नहीं। यदि आप हमेशा इन्द्राणी जैसी वेश-भूषा पहनकर पूजा करती हैं तो कोई विकल्प की बात नहीं है। अन्यथा सादे-स्वच्छ शुद्ध वस्त्र पहनकर ही पूजा करें।

कई महिलाओं के तो अविवेक की सीमा ही नहीं रहती है। कोई दस उपवास करती हैं, कोई बेला-तेला करती हैं। कोई तो एक माह तक सोलह कारण व्रत के एक उपवास-पारणा करती हैं उनमें भी यदि उनकी शोभा यात्रा निकलती है तब विशेष वस्त्राभूषण पहनें तो फिर भी एक प्रभावना अंग है लेकिन वे मंदिर में पूजा-पाठ आदि करते समय भी तैयार होकर जाती हैं उस समय कैसा लगता है, आप स्वयं सोचें।

सावधानी :

(1) नित्य के आवश्यक देवदर्शन, पूजा, स्वाध्याय आदि में तो सादे-शुद्ध वस्त्र

ही पहनें।

(2) पंचकल्याणक, बड़े-बड़े विधान आदि में भी पूजा करते समय तो शुद्ध वस्त्र ही पहनें। कोरे (जिनको एक बार भी नहीं धोया/गीला नहीं किया है ऐसे) वस्त्र को शुद्ध मानकर, उन्हें पहनकर पूजा नहीं करें।

(3) यह नहीं सोचें कि पंडित जी मंत्रों से वस्त्रादि की शुद्धि करवा ही देते हैं इसलिए हम कोरे/अशुद्ध बिना धुले वस्त्र भी पहनकर जावें तो कोई बात नहीं।

(4) सौन्दर्य प्रसाधन की अशुद्ध सामग्रियों का उपयोग करके भगवान को द्रव्य चढ़ाना, पूजा करना आदि कार्य नहीं करें।

(5) यदि पंच कल्याणक आदि बड़े महोत्सवों में नये/अच्छे वस्त्र पहनने हैं तो एक बार उन्हें अवश्य धो लें।

चमड़ा पहनकर नहीं जावें :

कई लोग अच्छे तैयार होकर मंदिर जाते हैं। वे चमड़े का बेल्ट बाँधकर, चमड़े के जूते पहनकर मोटरसाइकिल या कार आदि में बैठकर भगवान के दर्शन करने जाते हैं। ठीक है, आपका घर दूर है अथवा आप शान-शौकत वाले व्यक्ति हैं इसलिए वाहन में बैठकर मंदिर आए हैं। आप धनाढ्य व्यक्ति हैं इसलिए आप बिना बेल्ट बाँधे और अच्छी क्वालिटी के जूते पहने बिना मंदिर नहीं आ सकते हैं लेकिन चमड़े का बेल्ट/जूते पहनना तो कोई धनाढ्यता/सज्जनता का सूचक नहीं है। आप सोचें एक जोड़ी जूते बनने में भले ही एक जीव का चमड़ा भी नहीं लगता हो लेकिन पाप तो सभी कत्लखानों का लगता ही है। बिना किसी जीव को मारे-चमड़ा प्राप्त नहीं हो सकता है। चमड़े के स्थान पर हम कैनवास, प्लास्टिक, रेगजीन, कपड़े आदि के जूते भी खरीद कर पहन सकते हैं। उनसे भी हमारे पाँवों की सुरक्षा हो सकती है और सुन्दरता बढ़ सकती है।

चमड़ा तो अशुद्ध ही है, क्योंकि एक तो वह जीवों की हिंसा से उत्पन्न होता है, दूसरे उसमें हर पल अनन्त निगोदिया जीव उत्पन्न होते रहते हैं जो हमारे हाथ-पाँव, शरीर के स्पर्श मात्र से मरण को प्राप्त होते रहते हैं। हम उनका स्पर्श नहीं भी करें तो भी चमड़े में जीव उत्पन्न होते रहते हैं और मरते रहते हैं। हमारे आचार्य महाराज कहते हैं कि चमड़ा-माँस आदि जीव के शरीर

के अंश यदि पानी में उबल भी रहे हों, तेलादि में तले जा रहे हों, भूने जा रहे हों या सेके जा रहे हों अथवा वे कच्चे ही हों तो भी उनमें जीव उत्पन्न होते ही रहते हैं। ऐसी अपवित्र (हिंसज) वस्तु को मंदिर जैसे पवित्र स्थान में ले जाना कहाँ तक उचित है? आप स्वयं सोचें।

दूसरी बात चमड़ा पोजिटिव ऊर्जा को भक्षण करने वाला है अर्थात् चमड़ा पहनकर मंदिर में जाने पर मंदिर, भगवान, जिनवाणी और वहाँ होने वाले अनुष्ठानों से जो हमारे परिणामों को निर्मल करने वाली ऊर्जा उत्पन्न होती है वह हमारे कमर या घड़ी में लगे हुए चमड़े के बेल्ट, जेब आदि में रखे हुए मोबाइल के बैग, पर्स आदि के कारण नष्ट हो जाती है। हमारी आत्मा पर उसका कुछ भी प्रभाव नहीं हो पाता है। हम जहाँ जाकर खड़े हुए हैं या बैठे हैं वहाँ के पर्यावरण में से चारों तरफ की ऊर्जा नहीं मिलती है इसीलिए सभी धार्मिक स्थलों में चमड़े की वस्तु लेकर प्रवेश करने का निषेध किया जाता है। चाहे माँसाहारी लोगों का भी मंदिर /धार्मिक स्थल हो वहाँ भी कोई चमड़े का बेल्ट आदि बाँधकर आता है तो उसे बाहर ही खुलवा दिया जाता है।

इसी प्रकार फर की टोपी-कोट, घड़ी, कमर का बेल्ट-पर्स, हाथ-पैर में पहनने वाले विशेष मौजे आदि जिनमें अंश मात्र भी जीव का कलेवर/ शरीर का अंश है, उसे लेकर मंदिर में नहीं जावें।

इसी प्रकार ऊन के स्वेटर, टोपा आदि पहनकर, ऊन की कोई भी वस्तु लेकर मंदिर में नहीं जावें। इससे सबसे बड़ा नुकसान तो यही होगा कि मंदिर में जाकर भी आप पर जिनेन्द्र भगवान के आभामण्डल का कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। आप धर्म करने की भावना करके भी, धर्मायतन में पहुँचकर भी धर्म नहीं कर पायेंगे। आपको शारीरिक एवं मानसिक शान्ति नहीं मिल पायेगी। तथा अशुद्ध वस्तु पहनकर/अशुद्ध वस्तु लेकर मंदिर में जाने से आपको पापबन्ध भी होगा। अत: आप ऐसी अशुद्ध वस्तुएँ लेकर मंदिर में नहीं जावें। आप यह भी नहीं सोचें कि हम तो रोज ही चमड़े के जूते आदि पहनकर जाते हैं; हमारे ऊपर तो ऐसा कोई प्रभाव नहीं पड़ा, ऐसा भी नहीं कहना चाहिए क्योंकि पूर्वोपार्जित पुण्योदय से उसका फल वर्तमान में आपको कुछ भी नहीं दिखाई दे रहा हो परन्तु भविष्य में तो उसका फल आपको भोगना ही पड़ेगा। वर्तमान

में भी ऊर्जा के अभाव में शारीरिक एवं मानसिक हानि तो होगी ही। अत: विवेकपूर्वक काम करें।

सावधानी :

(1) यदि किसी कारणवश आप चमड़े के जूते नहीं छोड़ सकते हैं तो कम-से-कम मंदिर एवं धार्मिक अनुष्ठानों में तो पहनकर नहीं जावें।

(2) यदि आपके ऑफिस, स्कूल आदि में चमड़े के जूते आदि पहनने की मजबूरी है तो ऑफिस स्कूल आदि के अलावा कहीं पर नहीं पहनें।

(3) यदि आपको ऑफिस से फ्री में जूते आदि मिलते हों लेकिन पहनना अति आवश्यक नहीं है तो लोभ में आकर चमड़े के जूते आदि नहीं लें। अपनी जेब से 1000-2000 रुपये खर्च हो जावें तो भी कोई नुकसान नहीं है।

खाली हाथ नहीं जावें :

एक सामान्य व्यक्ति भी यदि अपने रिश्तेदार के यहाँ जाता है तो कुछ-न-कुछ लेकर जाता है। फिर तीन लोक के नाथ भगवान के पास लोग खाली हाथ कैसे चले जाते हैं, समझ में नहीं आता। जो भगवान के पास खाली हाथ जाता है वह आगे दरिद्र बनता है, उसकी सम्पत्ति नष्ट हो जाती है, क्योंकि वे अपने खाने-पीने आदि में लाखों की सम्पत्ति खर्च कर देते हैं और भगवान के यहाँ खाली हाथ चले जाते हैं तो एक प्रकार से भारी कृपणता का चिह्न ही है। **दूसरी बात** खाली हाथ जाने से कभी-कभी मंदिर जाना भूल ही जाते हैं। एक दिन एक लड़के ने कहा-माताजी, मैं एक दिन मंदिर जाना भूल गया था। उसका प्रायश्चित्त दे दीजिए। मैंने कहा-ऐसा क्या हो गया कि तुम मंदिर नहीं जा पाये, क्या मंदिर जाने का समय नहीं मिला था....। उसने कहा-नहीं, माताजी उस दिन घर में चावल खतम हो गये थे। इसलिए मैं खाली हाथ ही मंदिर जा रहा था। रास्ते में एक मित्र ने मुझे बुला लिया। मैं उसकी दुकान पर जाकर बैठ गया। थोड़ी देर इधर-उधर की बातें करके मैं घर आ गया और रोटी खा ली। मुझे याद ही नहीं रहा कि मैंने बिना भगवान के दर्शन किये ही भोजन कर लिया। उसकी बात सुनकर मुझे समझ में आया कि खाली हाथ मंदिर जाने वालों के साथ ऐसा ही होता है। यदि उसके हाथ में चावल की डिब्बी या चावल आदि कोई भी द्रव्य होता तो भले ही वह घण्टे भर भी किसी की दुकान पर बैठ

जाता तो भी मंदिर जाना नहीं भूलता। **तीसरी बात** जो मंदिर जाते-जाते रास्ते में दूसरे काम करने में लग जाते हैं उनके नियम इसी प्रकार टूट जाते हैं। **चौथी बात** राजा आदि बड़े व्यक्तियों के पास कण भर ले जाने पर मन-भर मिलता है अर्थात् थोड़ी सी भेंट चढ़ाने में हजारों गुणा होकर फलता है। उसी प्रकार भगवान के चरणों में थोड़ा-सा द्रव्य चढ़ाने पर भी अनन्त गुणा होकर फलता है। जैसे - सुदामा ने श्रीकृष्ण को दो-तीन मुट्ठी चावल भेंट किये तो श्रीकृष्ण ने उसको इतना वैभव दे दिया कि जिसका पार ही नहीं रहा। इसी प्रकार दो भाइयों ने जिनालय में मक्का के दाने भेंट किये फलत: उन्हें इतनी सम्पत्ति प्राप्त हुई कि पीढ़ी-दर पीढ़ी चलती रही। सैकड़ों जिनालय एवं हजारों जिनबिम्ब बनवाने तथा हजारों स्थानों पर विशेष-विशेष दान देने पर भी सम्पत्ति कम नहीं हुई। आप धन के लोभ में अथवा प्रमाद से खाली हाथ नहीं जावें। जिनेन्द्र भगवान के प्रति विनय-बहुमान करने के लिए कुछ-न-कुछ अवश्य लेकर जावें। कभी किसी कारणवश कुछ भी नहीं ले जा पावें तो यदि मंदिर में द्रव्य रखा है तो लेकर चढ़ा दें और अनुमान से उसका पैसा भण्डार में डाल दें। यदि मंदिर में द्रव्य नहीं रखा है तो अपनी शक्ति के अनुसार भण्डार में पैसा डालकर आवें। इससे भी भगवान के प्रति थोड़ा बहुमान तो प्रकट हो ही जावेगा।

द्रव्य धोकर ले जावें :

चावल, बादाम, लौंग, आदि जो भी द्रव्य आप मंदिर ले जाते हैं, उन्हें धोकर ले जावें, क्योंकि जहाँ इन चीजों की मण्डी होती है वहाँ ढेर सारी चीजें खुले मैदान में रखी रहती हैं। कुत्ते-बिल्ली आदि जीव-जन्तु वहाँ घूमते रहते हैं। वे कभी अपना गन्दा मुँह भी उन चीजों में लगा देते हैं तो कभी कीचड़ आदि में लथपथ शरीर से उनमें लोट-पोट होकर खेलते रहते हैं, तो कभी उन्हीं में अपनी टाँग ऊँची करके पेशाब कर देते हैं। कभी-कभी तो वे उनमें लेटि-न भी कर जाते हैं। मालिक या नौकर उनके सूखे-गीले मल को फेंक देता है। इसी प्रकार पेशाब से इनकी अर्थात् चावल आदि की डलियाँ बन गई हों तो फोड़कर चावल में मिला देता है वही चावल आदि बाजार में बिकने आते हैं। कभी-कभी बोरों में भरकर रखे हुए पदार्थों पर भी कुत्ते आदि गन्दगी कर जाते हैं। अत: आप जो कुछ भी ले जावें धोकर ले जावें। आप यह भी नहीं सोचें

कि रोज-रोज कौन धोएगा। सामान्य रूप में चावल, बादाम आदि को धोकर अच्छा धूप में सुखाकर रखे जा सकते हैं। इसमें ऐसा कोई दोष नहीं है। हाँ, पूजा करने का द्रव्य जिसमें जल-चन्दनादि होते हैं उनको एक साथ धोकर रखना या पहले दिन के धुले हुए द्रव्य को दूसरे दिन चढ़ाना उचित नहीं है। अत: आप धुला हुआ द्रव्य चढ़ावें ताकि उसके साथ गन्दगी चढ़ाने का पाप नहीं लगे।

आप एक दिन डिब्बी में द्रव्य भरकर आठ-पन्द्रह दिन तक नहीं चढ़ाते रहें, क्योंकि डिब्बी में रखे-रखे चावल में भी लटें आदि जीव उत्पन्न हो सकते हैं। ऐसा करने से चावल के साथ कई बार लटें आदि भी चढ़ जाती हैं। वे जीव कोई द्रव्य नहीं हैं, जीवों को चढ़ाने में महान् पाप लगता है इसलिए आप डिब्बी में इतना ही द्रव्य भरें जो उसी दिन चढ़ा सकें।

सावधानी :

(1) चावल को ज्यादा मसलकर नहीं धोवें, ऐसा करने से चावल टूटकर कनकी बन जाएगी।

(2) खाने की अपेक्षा मंदिर के लिए अच्छी किस्म के चावल रखें।

(3) यदि कागज आदि में चावल आदि ले गये हैं तो उन्हें मंदिर में डालकर गन्दगी नहीं बढ़ावें।

(4) डिब्बी में नये चावल भरने के पहले डिब्बी को अच्छी तरह साफ कर लें।

(5) अपनी शक्ति के अनुसार अच्छा द्रव्य ले जावें। किसी की देखादेखी नहीं करें और शर्म का अनुभव भी नहीं करें, क्योंकि दान शक्ति अनुसार ही दिया जाता है।

(6) रात्रि में द्रव्य नहीं चढ़ावें लेकिन दिन में जब भी जावें (चाहे एक लौंग/बादाम ही ले जावें) खाली हाथ नहीं जावें।

पैर धोकर प्रवेश करें :

मंदिर में जाने के पहले बाहर रखे हुए पानी से आप एक बार हाथ-पैर अवश्य धोवें, क्योंकि मंदिर एक पवित्र स्थान है, वहाँ हमारे पूज्य इष्ट श्री जिनेन्द्र भगवान विराजमान हैं उनके सामने बैठकर सभी लोग पूजा-पाठ, स्वाध्याय, जप आदि धार्मिक अनुष्ठान करते हैं, वहाँ सब लोग नहा-धोकर शुद्ध वस्त्र पहनकर आते हैं। उस पवित्र स्थान में हम जब बिना पैर धोए प्रवेश

करते हैं तो हमारे पैर में चिपका हुआ कूड़ा-कचरा, गोबर आदि गन्दगी भी वहाँ पहुँच जाने से वहाँ का स्थान अपवित्र हो जाता है। उस अपवित्रता का कारण हम बनते हैं। कभी-कभी तो बिना देखे चलने के कारण सुअर आदि का सूखा मल भी हमारे पैरों में लग जाता है। कभी नाली का कीचड़ भी हमारे पैर में चिपक जाता है। इन गन्दी चीजों के सम्पर्क से हमारा शरीर भी अपवित्र हो जाता है। अपवित्र शरीर से मंदिर में प्रवेश का निषेध होने के कारण ही मंदिर के बाहर पैर धोने के लिए पानी रखा रहता है। बिना पैर धोए मंदिर में चले जाने से हमें महान् पाप का बन्ध होता है। हमें देखकर हमारे बच्चे तथा अनजान (जिन्हें यह मालूम नहीं है कि बिना पैर धोए मंदिर में प्रवेश नहीं करना चाहिए) वे भी बिना पैर धोए मंदिर में जाने लग जाते हैं। बच्चों की ऐसी आदत पड़ जाने पर वे बड़े होने के बाद भी ऐसा ही करते रहते हैं। उन सबके पाप बन्ध में भी आप एक कारण बनते हैं इसलिए उस सम्बन्धी थोड़ा पाप हमें भी लगता ही है।

कई लोग कहते हैं कि हम तो चप्पल-जूते पहनकर मंदिर आये हैं इसलिए हमें पैर धोने की आवश्यकता नहीं है, उनका ऐसा कहना भी उचित नहीं है, क्योंकि चप्पल-जूते पहनकर आने से लापरवाही ज्यादा होती है। चप्पल-जूते पहने हुए होने से व्यक्ति को यह भय नहीं रहता है कि मेरे पैर में कोई गन्दगी लग जायेगी। मेरे पैर गन्दे हो जायेंगे जिससे वह कभी नीचे देखकर नहीं चलता है। चप्पल पहनकर चलने वालों की चप्पलों में कभी-कभी गोबर और कीचड़ की बात तो बहुत दूर बच्चों का मल तक चिपका मिल सकता है। उन चप्पल-जूतों के स्पर्श से पाँव भी अपवित्र हो जाते हैं। इसलिए (चप्पल-जूते पहनकर आने वालों को भी) पैर धोना आवश्यक है। **दूसरी बात** कितने भी अच्छे/नये जूते हों उसको लोक में अपवित्र ही माना गया है इसलिए जूतों को घर के पवित्र स्थान, रसोई घर, भण्डार, परेण्डा (जहाँ पीने का पानी रखा जाता है) आदि पर नहीं ले जाया जाता है। घर के मुख्य दरवाजे में ही जूते उतारने की परम्परा अनादि से चली आ रही है। **तीसरी बात** चप्पल पहनकर मंदिर जाने से रास्ते में जीव-जन्तुओं की रक्षा भी नहीं होती है। चप्पलों की रगड़ से जीव मर जाते हैं। चप्पल पहन लेने से नीचे देखकर चलने का भाव उत्पन्न

नहीं होता है जिससे कि जीवों की रक्षा की जा सके। इसलिए हो सके तब तक चप्पल-जूते पहनकर मंदिर नहीं जाना चाहिए और मजबूरी से गये हैं तो चप्पल-जूते, मौजा आदि मंदिर के बाहर ही उतार देना चाहिए और पैरों को अच्छी तरह धोकर ही मंदिर में प्रवेश करना चाहिए।

पैर धोते समय धड़ा-धड़ दो-तीन लोटे पानी न डालकर कम-से-कम पानी डालते हुए चारों तरफ से पैरों को जमीन पर रगड़ कर इस ढंग से पैर धोना चाहिए कि किंचित् मात्र भी गन्दगी चिपकी न रह पावे, अन्यथा बहुत सारे पानी से पैर धोकर भी गन्दगी चिपकी रह जाने से बिना पैर धोए मंदिर में जाने के समान पैर धोकर मंदिर में जाने पर भी पाप का बन्ध होगा। जूते यदि हाथ लगाकर उतारे/खोले हैं तो हाथ भी अच्छी तरह धो लेने चाहिए। यदि रास्ते में हाथ में पसीना, आँखें, नाक आदि शरीर के किसी अंग का मैल लग गया हो तो धोने से वह भी छूट जाएगा।

पैर नहीं धोने से :

'करकण्डु चरित्र' में इस विषय में स्पष्ट कथन आता है कि करकण्डु का जीव पूर्व भव में धनदत्त नाम का एक ग्वाला था। उसने एक सरोवर में से एक सुन्दर कमल तोड़ा। तभी उस सरोवर के रक्षकदेव ने उससे कहा-तू इसे संसार के सबसे बड़े व्यक्ति को भेंट करना अन्यथा मैं तुझे मार डालूँगा। यह सुनकर धनदत्त ने सोचा, मेरा सेठ ही सबसे बड़ा है क्योंकि उसको सैकड़ों लोग नमस्कार करते हैं। वह कमल लेकर सेठ के पास गया और पूजा करने की मुद्रा में खड़ा हो गया। सेठ ने उसकी विनत मुद्रा को देखकर पूछा-तुम इस प्रकार क्यों खड़े हो? ग्वाले ने अपना प्रयोजन बताया तो सेठ ने कहा-मेरे से बड़ा तो **राजा** है, उसको हजारों लोग नमस्कार करते हैं, तुम उसकी पूजा करो तो ज्यादा फल मिलेगा। ग्वाला कमल लेकर राजा की पूजा करने पहुँचा तो राजा ने कहा-ग्वालराज, संसार में मैं नहीं, मेरे से भी बड़े मुनिराज हैं, तुम उनकी पूजा करो। ग्वाला जब कमल लेकर मुनिराज के चरणों में पहुँचा तो मुनिराज ने ग्वाले से कहा-बेटा ! संसार में देवाधिदेव जिनेन्द्र भगवान ही सबसे बड़े होते हैं तुम जिनालय में जाकर उनकी ही आराधना करो। उस ग्वाले ने अज्ञानता के कारण कीचड़ के पैरों से ही अर्थात् पैरों को बिना धोए ही मंदिर

में जाकर जिनेन्द्र भगवान की पूजा की। भगवान की पूजा के फल में वह ग्वाला चम्पापुर का राजा करकण्डु बना लेकिन कीचड़ से लिप्त पैरों से मन्दिर में प्रवेश करने के कारण उसके हाथ-पैरों में कण्ड रोग (खुजली का रोग) हुआ था। अत: आप कभी बिना पैर धोए मंदिर में प्रवेश नहीं करें।

सावधानी :

(1) पैरों को अच्छी तरह रगड़कर ऊपर की अपेक्षा नीचे से (तलवों को) अच्छी तरह धोवें।

(2) पैर धोने का पानी सामने अर्थात् ऐसे स्थान पर रखें जहाँ मंदिर आने वालों को सहज रूप से दिख जावे। अन्यथा अनजान लोगों को बिना पैर धोए ही मंदिर में प्रवेश करना पड़ेगा।

(3) बच्चों में शुरू से पैर धोकर ही मंदिर में प्रवेश करने की आदत डालें।

(4) यदि जूते-मौजे आदि खोले हैं तो हाथ भी अवश्य धोवें।

(5) यदि कुछ खाया है तो कुल्ला किये बिना मंदिर में नहीं जावें।

(6) पैर धोने का पानी जहाँ जाता है वहाँ नाली का बहाव सही रखें ताकि पानी बह जावे। अन्यथा पानी एक जगह इकट्ठा होते-होते काई आ जाएगी अथवा गः जैसा बन जाएगा।

घण्टा बजाते समय :

भारत के प्रत्येक मंदिर में घण्टा होता है। दर्शन करने वाला मंदिर में प्रवेश करते ही सबसे पहले घण्टा बजाता है। जिस प्रकार घण्टे की ध्वनि होने पर संसार की सभी ध्वनियाँ दब जाती हैं अर्थात् सुनाई नहीं देती हैं उसी प्रकार हमारे अन्दर भी संसार के विषय-भोग के सब विकल्प दबकर/शान्त होकर मात्र भगवान के दर्शन हों, भगवान के गुणानुवाद के ही विकल्प उत्पन्न हों, इसी उद्देश्य से घण्टा बजाया जाता है लेकिन कभी-कभी घण्टा बजाने से पापों का बन्ध हो जाता है। कई लोग जब मंदिर में सामूहिक स्वाध्याय/प्रवचन सभाएँ आदि धार्मिक कार्यक्रम हो रहे होते हैं वहाँ भी अर्थात् उस समय भी घण्टा बजा देते हैं। उस समय वे सोचते होंगे या नहीं सोचते होंगे लेकिन अविवेक के कारण उन्हें ज्ञानावरण, अन्तराय आदि पाप कर्मों का विशेष बन्ध अवश्य होता है, क्योंकि घण्टा बजते ही स्वाध्याय/प्रवचन सुनने वालों का उपयोग एक

दम घण्टे की ध्वनि की तरफ चला जाता है जिससे उनके ज्ञानार्जन में विघ्न उत्पन्न होता है। यह ज्ञानावरण कर्मबन्ध का कारण है। इसी प्रकार कभी-कभी मंदिर में कई लोग शान्ति से अर्थात् अपनी-अपनी लय में धीरे-धीरे पूजा, अर्चना, स्तुति आदि कर रहे हों वहाँ घण्टा बजा देना, बजते हुए घुंघरु वाली पायल पहन कर चले जाना, खनकती हुई चूड़ियाँ पहनकर जाने से अथवा वहीं आस-पास बैठकर जोर-जोर से पाठ-पूजन करने लग जाना भी चारित्र मोहनीय, अन्तराय आदि कर्म को बाँधने वाला है, क्योंकि ऐसा करने से सामने वाले के कार्य में विघ्न आता है। ऐसा करने पर हमें भी भविष्य में आत्मकल्याण करने वाले कार्यों को करते समय विघ्न/परिस्थितियाँ/बाधाएँ अवश्य आयेंगी। इसलिए ऐसे समय धीरे-धीरे भी धार्मिक कार्य पूजा-अर्चना आदि करके बिना घण्टा बजाये भी भगवान के दर्शन करके पाप से बचा जा सकता है।

दर्शन करते समय :

कई लोग भगवान के दर्शन करते समय इधर-उधर देखते रहते हैं। उन्हें देखकर तो ऐसा लगता है कि वे मात्र औपचारिकता पूरी करने अथवा अपना नियम पूरा करने के लिए मंदिर आए हैं। उनको ऐसे देवदर्शन करने का क्या फल मिलता होगा? भगवान जाने। इसका अर्थ यह नहीं कि हम मंदिर जाना बन्द कर दें, अपितु हम भले ही एक मिनट भगवान के दर्शन करें, एकागृता से करें ताकि हमारा कार्य सिद्ध हो।

कई लोग मंदिर-दर्शन करने जाते हैं। मंदिर के बाहर कहीं पत्र-पत्रिकाएँ लगी रहती हैं तो कहीं बोर्ड पर मौत-मरण की सूचना लिखी रहती है तो कहीं मृत्युभोज (तेरही, उठावना), भजन आदि की सूचना का पर्चा चिपका रहता है तो दर्शनार्थी उन्हीं को पढ़ने में लग जाते हैं। वे यह नहीं सोचते हैं कि पत्रिका या सूचना आदि पढ़ते-पढ़ते यदि हमारे प्राण निकल गये तो हमें भगवान के दर्शन कब होंगे अथवा उस समय हमारे आयु बन्ध का काल आ गया तो कौन-सी आयु का बन्ध होगा? रामचन्द्र के भाई भरत पूर्व भव में अभिराम नामक राजकुमार थे। एक दिन अचानक उनको वैराग्य आ गया। वे मुनि दीक्षा लेने का संकल्प लेकर अपने महल से उतर रहे थे। उतरते-उतरते रास्ते में सीढ़ियों पर ही उनको साँप ने काट लिया। वे वहीं पर मरण को प्राप्त हो गये। उनकी

दीक्षा की भावना मन की मन में रह गई। क्या पत्र-पत्रिकाएँ पढ़ते-पढ़ते हमारी आयु खतम नहीं हो सकती? अत: मंदिर में जाकर सबसे पहले भगवान के दर्शन करें उसके बाद पत्रिका आदि पढ़ें। ताकि हमारा उद्देश्य पूरा हो सके।

पंखा नहीं चलावें :

वैसे मंदिर में पंखा चलाना, पंखा चलाकर पूजा-पाठ-स्वाध्याय आदि करना पाप का ही कारण है, फिर जो स्वस्थ हैं, लाइट चली जाने पर घर में बिना पंखे के रह सकते हैं; रहते हैं; जिनको पंखा नहीं मिलने पर भी शरीर में किसी प्रकार की विकृति नहीं होती है वे भी यदि मंदिर में पंखा चलाते हैं तो विशेष पाप लगता है। जो 5-7 मिनट के लिए मात्र मंदिर जाते हैं उनको तो कभी भी मंदिर में पंखा चलाना ही नहीं चाहिए। अथवा वे मंदिर में पंखा चलाने का त्याग भी कर दें तो कोई तकलीफ नहीं होगी। यदि मंदिर खुले स्थान पर है अर्थात् मंदिर में हवा आने के लिए चारों तरफ खिड़कियाँ आदि हैं तो भी पंखा चलाते हैं तो समझना चाहिए कि उन्हें पंखा चलाने की एक आदत मात्र है, आवश्यकता नहीं। हाँ, यदि किसी को शुगर, हार्ट अटेक, हाई ब्लड प्रेसर आदि ऐसी बीमारी है जिसमें पंखे की हवा नहीं मिलने पर घबराहट होती है, पसीना आने लगता है, मन डाँवाडोल हो जाता है ऐसा व्यक्ति यदि मंदिर में पंखा चला भी ले तो उसे ज्यादा पाप नहीं लगेगा, क्योंकि वह शरीर से मजबूर होकर पंखा चला रहा है, उसे पंखा चलाना पड़ रहा है लेकिन ऐसी कोई परिस्थिति नहीं होने पर भी यदि कोई पंखा चलाता है तो वह एक प्रकार से मंदिर में भी विषय भोग ही कर रहा है। उसे विशेष पाप का बन्ध होगा। उसको भविष्य में भगवान के दर्शन अत्यन्त दुर्लभ हो जायेंगे, नहीं मिलेंगे। **दूसरी बात** अनावश्यक पंखा चलाने से असाता वेदनीय का बन्ध भी होता है जिससे अगले भव में पंखा मिलेगा नहीं और यदि किसी पुण्य से मिल गया तो आपको सहन नहीं होगा अर्थात् पंखे की हवा से आपका स्वास्थ्य ज्यादा बिगड़ेगा। हाँ, यदि मंदिर में बहुत मच्छर हैं, एक कायोत्सर्ग करने में ही पच्चीसों मच्छर काट लेते हैं तो फिर भी पंखा चलाना उचित है लेकिन जहाँ ऐसी कोई परिस्थिति नहीं है तो पंखा कभी नहीं चलाना चाहिए। अनावश्यक पंखा चलाने का ही फल है कि मंदिर में कोई होता ही नहीं है और पंखा चलता रहता है, क्योंकि

वह किसी शौकीन व्यक्ति ने मंदिर में घुसते ही चला दिया लेकिन बन्द नहीं किया। कई मंदिरों में कभी-कभी तो ऐसा लगता है कि मंदिर में लोग कम होंगे और पंखे ज्यादा चल रहे हैं। कई मंदिरों में तो इतने पंखे चलते हैं कि कोई अनभ्यस्त अर्थात् जिसको पंखा चलाने की, पंखे की हवा खाने का अभ्यास नहीं है, स्वस्थ व्यक्ति का भी सिर दर्द करने लग जाता है....। कई लोग कहते हैं कि हमारे मंदिर में तो हमें पंखा चलाने की आवश्यकता ही नहीं है, क्योंकि हमारे यहाँ तो मंदिर का माली अथवा व्यवस्थापक सुबह मंदिर खुलने के साथ ही पंखे चला देते हैं, वे पंखे लगभग मंदिर बन्द होने तक चलते रहते हैं। ऐसी स्थिति में भले ही आपने पंखा नहीं चलाया लेकिन पंखा चलाने से भी ज्यादा पाप लगा। क्योंकि शायद आप चलाते तो 15-20 मिनट अथवा ज्यादा से ज्यादा आधा-पौन घण्टा चलाते। नौकर-माली ने चलाया तो वे पंखे घण्टों चलते रहे। अत: आप मंदिर में पंखा नहीं चलावें।

सावधानी :

(1) यदि आपने पंखा चलाया है तो स्वयं बन्द करके आवें। यदि कोई बन्द करने के लिए मना करे तो उसे कहकर आवें कि वह जाते समय जिम्मेदारी से पंखा बन्द करके जावे।

(2) आपको ऐसी कोई खतरनाक बीमारी नहीं है तो मंदिर में कभी पंखा नहीं चलावें। ज्यादा गर्मी लगे तो जहाँ हवा आती हो वहाँ बैठकर पूजा-पाठ कर लें लेकिन भगवान के सामने बैठें।

(3) यदि मंदिर में किसी के नहीं होने पर भी पंखा चल रहा है तो बन्द करना कभी नहीं भूलें।

(4) यदि आप सक्षम हैं और आपके मंदिर में माली या व्यवस्थापक पंखे चलाता है तो इस परम्परा को अवश्य बन्द कर दें। यदि सक्षम नहीं हैं तो समय पर अध्यक्ष आदि कार्यकर्त्ताओं को सलाह अवश्य देवें।

(5) यदि मंदिर के पंखे निकलवा दें तो आपको अपूर्व-अपूर्व पुण्य का बन्ध होगा और पापों का क्षय होगा।

(6) यदि मंदिर में पंखा चलाना पड़ रहा है तो पंखे पर जाली अवश्य लगवा दें।

मोबाइल बन्द रखें :

कई लोग मोबाइल लेकर मंदिर जाते हैं उन्हें मंदिर में भगवान के दर्शन कितने होते हैं, यह तो भगवान ही जानें या वे स्वयं जानें। लेकिन मोबाइल कब बज जायेगा कुछ नहीं कहा जा सकता है। कभी-कभी तो हाथ में पुञ्ज (चावल आदि) लेकर भगवान के सामने अर्पित करने के लिए हाथ भी झुका दिया और उसी समय मोबाइल की घण्टी बज गई तो पुञ्ज हाथ-का-हाथ में ही रह जाता है, व्यक्ति को मोबाइल लेकर भागना पड़ता है। कभी दर्शन करते-करते थोड़ी एकागृता आने लगी थी कि मोबाइल बज गया, कभी आधी स्तुति हुई कि मोबाइल बज गया। कैसा लगता है? ऐसी स्थिति में भगवान के दर्शन कैसे हो सकते हैं। एक दिन एक व्यक्ति मंदिर में भगवान की पूजा कर रहा था। अचानक मोबाइल बजा। उसने वहीं बैठे-बैठे मोबाइल सुना तो उसे मरण के समाचार मिल गये, जिससे पूजा करते-करते बीच में ही पूजा छोड़नी पड़ी। आप सोचें मंदिर जी में मोबाइल सुनने से कितना नुकसान होता है। ऐसी स्थिति में भगवान के दर्शन कैसे हो सकते हैं। **दूसरी बात,** हमारे मोबाइल की घण्टी बजने से मंदिर में दर्शन-पूजन, स्वाध्याय, जाप आदि करने वाले कितने लोगों का उपयोग मोबाइल की घण्टी की तरफ जायेगा। उससे हमें कितना बड़ा अन्तराय कर्म का बन्ध होगा। उसको कैसे बताया जा सकता है। क्या 5-7 मिनट के लिए मोबाइल बन्द रख कर हम इतने बड़े पाप से नहीं बच सकते हैं। वास्तव में, हम चौबीस घण्टे में कितने मिनट मन्दिर जाते हैं। अधिकतर लोगों को तो 2-4 मिनट मात्र मन्दिर में लगते हैं। क्या 24 घण्टे में हम 2-4 मिनट के लिए भी मोबाइल को बन्द करना अनुचित मानते हैं? कोई सोचते हैं कि क्या पता कोई इमरजेन्सी समाचार आ जावे और हम मंदिर में हों तो क्या होगा? आप सोचें, यदि दो-तीन घण्टे भी लाइन नहीं मिलती है या आपका मोबाइल खराब हो जाता है, खो जाता है। लाइन व्यस्त होती है तब भी काम चलता ही है अत: आप 2-4 मिनट ही दर्शन करें। लेकिन निर्विकल्प होकर करें अर्थात् मंदिर में प्रवेश करने के पहले मोबाइल बन्द अथवा साइलेन्ट कर दें ताकि शान्ति से भगवान के दर्शन तो हो सकें।

सज्जा नहीं करें :

कई महिलाएँ मंदिर में भगवान के दर्शन करते-करते भी कभी साड़ी की प्लेटें सम्भालती हैं तो कोई साड़ी में लगी पिन को ठीक करती रहती हैं तो कोई अपनी चुन्नी को ठीक करने में लग जाती है। कोई अपनी सलवार जो जमीन की झाडू लगा रही हो अर्थात् जमीन पर रगड़ रही हो उसे हाथों में उठाती रहती है। कई लोग कपड़ों की प्रेस के सल ठीक करते रहते हैं। क्या भगवान के सामने ऐसा करना उचित है? उस समय वास्तव में उसे भगवान के दर्शन हो रहे हैं या अपने वस्त्रों के? कई महिलाएँ भगवान को नमस्कार करके उठते समय साड़ी को पैर में फँसा कर उठती हैं। उनको लगता है कि कहीं साड़ी ऊँची नहीं चढ़ जावे, ऊँची चढ़ जावेगी तो अच्छी नहीं लगेगी....। कई लोग मंदिर में दर्पण (काँच) में मुँह देखने लग जाते हैं। कई लोग तो दर्पण में देखकर इस प्रकार से तिलक लगाते हैं जैसे किसी की शादी में जाने के लिए श्रृंगार कर रहे हों। कई लोग तो अपने किये गये श्रृंगार को देखने के लिए भी दर्पण में देखते हैं। क्या हम मंदिर दर्पण में देखकर अपना रूप निखारने गये थे। चन्दन का टीका जो जिनेन्द्र भगवान को शिर पर धारण करने रूप सम्मान का प्रतीक है उसी टीके को हम श्रृंगार का रूप बनाकर पंचेन्द्रिय के विषयभोग का कारण बना लेते हैं अथवा टीका लगाने के बहाने काँच में देखकर देह की सज्जा में लग जाते हैं। क्या ऐसा करने से मंदिर में जाने पर भी हमें भगवान के दर्शन होंगे? क्या हमें मंदिर जाने का फल मिलेगा? एक बार एक आर्यिका मंदिर गई थी। उसको मंदिर में ही अचानक याद आया कि सब लोग मुझे कहते हैं कि मेरे चेहरे पर सूजन आ जाने से वह बहुत भद्दा डरावना लगता है तो थोड़ा-सा दर्पण देख लेती हूँ (वैसे साधु होने के कारण कभी दर्पण में नहीं देखती थी) क्या सही में मेरा चेहरा बहुत भद्दा लगता है, उसने दर्पण में देखा तो वह इतनी डरी कि भगवान के दर्शन करना आदि भूलकर उल्टे पैर दौड़ती हुई लौट आई। वसतिका (धर्मशाला) में आने के बाद भी घण्टे-दो घण्टे तक वह काँपती ही रही...। यह मंदिर में दर्पण देखने, अपने आपको व्यवस्थित करने का दुष्फल अर्थात् दर्पण देख लेने से वह मंदिर में जाकर भगवान के सामने खड़ी होकर भी भगवान के दर्शन नहीं कर पाई....। अत: आप मंदिर में जाकर साड़ी वस्त्र-

आभूषण शरीर आदि की तरफ ध्यान न देकर भगवान की तरफ ध्यान दें ताकि सही दर्शन कर सकें, मंदिर जाने का उद्देश्य पूरा हो सके। पुरुष वर्ग भी मंदिर में इस प्रकार के कार्य नहीं करें।

सावधानी :

(1) यदि मोबाइल सुने बिना मन नहीं रुक पावे तो कम-से-कम जहाँ भगवान दिखते हों वहाँ तो बात नहीं करें अर्थात् मंदिर के बाहर आकर बात करें।

(2) यदि भूल से मोबाइल से बात कर लें तो कम-से-कम 25 रुपये भण्डार में चढ़ावें एवं 5 माला फेरें ताकि पुनः आगे स्वच्छन्द प्रवृत्ति नहीं हो।

(3) अचानक दर्पण में दृष्टि पड़ जावे तो तत्काल खेद व्यक्त करें। यदि भूल से देखलें तो प्रायश्चित्त अवश्य करें।

(4) यदि साड़ी की प्लेटें, प्रेस बिगड़ने आदि में मन जावे तो दूसरे दिन से सादे वस्त्र पहनकर मंदिर जावें।

कायोत्सर्ग करते समय :

भगवान के दर्शन के बाद कायोत्सर्ग किया जाता है। अधिकतर लोग कायोत्सर्ग का अर्थ 9 बार णमोकार मंत्र पढ़ना मात्र समझते हैं लेकिन कायोत्सर्ग का अर्थ होता है- काया-शरीर, उत्सर्ग-छोड़ना। शरीर को छोड़ा नहीं जाता है। शरीर को छोड़ना आत्महत्या कहलाती है इसलिए इसका भावार्थ होता है शरीर से ममता को छोड़ना। एक बार णमोकार मंत्र पढ़ने में तीन श्वासोच्छ्वास का समय लगता है। 27 श्वासोच्छ्वास में एक कायोत्सर्ग होता है। इसका गणित करने पर 27 श्वासोच्छ्वास में नौ बार णमोकार मंत्र होता है इसलिए एक कायोत्सर्ग में 9 बार णमोकार मंत्र माना जाता है। कहा भी है -

• परिमितकालविषया शरीरे ममत्वनिवृत्तिः कायोत्सर्गः **(चा.सा. 56/3)** • देहे ममत्वनिरासः कायोत्सर्गः। **(भ.आ.वि. 6/32)** • कायोत्सर्गः काये मितकालं निर्ममत्वं तु। **(ह.पु. 34/146)**

कई लोग आँखें खोलकर इधर-उधर देखते हुए, तो कोई इशारे करते हुए कायोत्सर्ग करते हैं। जो निर्विकल्प अप्रमत्त योगी होते हैं, वशेन्द्रिय होते हैं, जो देखते हुए भी नहीं देखते हैं वे चाहे आँखें खोलकर कायोत्सर्ग करें या आँखें बन्द करके कोई अन्तर नहीं पड़ता है लेकिन आप और हमारे जैसे प्रमादी

लोगों को तो आँखें बन्द करने के बाद भी सैकड़ों वस्तुएँ दिखती हैं फिर आँखें खोलकर हम कायोत्सर्ग करेंगे तो हमें कौन-सी वस्तुएँ नहीं दिखेंगी। संसार की लौकिक वस्तुएँ देखते हुए कायोत्सर्ग करने पर कायोत्सर्ग करने का वास्तविक फल कैसे मिल सकता है? कई लोग कहते हैं कि हम तो भगवान को देखते हुए कायोत्सर्ग करते हैं इसलिए आँखें खुली रखते हैं। वे स्वयं अपने मन से पूछें क्या कायोत्सर्ग करते समय उन्हें केवल भगवान ही दिखते हैं? क्या उन्हें दर्शनार्थी, पूजा-अभिषेक करने वाले, बच्चे-महिलाएँ अथवा मंदिर की साज-सज्जा आदि कुछ नहीं दिखते हैं? यदि नहीं तो वे कैसे कह सकते हैं कि हम भगवान को देखते हुए कायोत्सर्ग करते हैं। कई लोग कहते हैं कि जिस प्रकार किसी को देखकर आँख बन्द करना अच्छा /व्यवहार कुशलता नहीं मानी जाती है। अथवा उसके प्रति द्वेष प्रकट करना माना जाता है उसी प्रकार मंदिर में भगवान को देखकर हम आँखें कैसे बन्द कर लें? ऐसा कहने वाले आँखें बन्द करने का अर्थ नहीं जानते हैं। यदि हमें भगवान को देखकर आँखें बंद करनी होती तो हम भगवान के दर्शन करने ही क्यों आते? **दूसरी बात** सामान्य से किसी नास्तिक व्यक्ति को भी यदि कायोत्सर्ग (ध्यान) की मुद्रा के बारे में पूछा जाए तो वह आँखें बन्द की हुई मुद्रा ही बतायेगा। अथवा यदि कोई हाथ पर हाथ रखकर आँखें बन्द करके बैठा है तो यही सोचते हैं कि यह कुछ विशेष बात सोच रहा है। यदि कोई साधु-संत, त्यागी-वृती है तो उसको ध्यान में बैठा ही मानते हैं। **तीसरी बात** भगवान की प्रतिमाएँ अधिकांशत: नासाग्र दृष्टि रूप ही मानी जाती हैं। हमें सही ढंग से नासाग्र दृष्टि लगाना नहीं आता है इसलिए हम आँखें बन्द करके कायोत्सर्ग करें तो हमारा उपयोग विशेष एकाग्र हो सकता है। यह भी नहीं कहना चाहिए कि आँखें बन्द करने से नींद आ जायेगी। एक-आध मिनट में कायोत्सर्ग पूरा हो जाता है इसलिए नींद आने की सम्भावना कम रहती है। हाँ, यदि माला फेरते हैं तो फिर भी नींद आ सकती है। अत: आप आँखें बन्द करके कायोत्सर्ग करके देखें आप स्वयं अनुभव करेंगे कि आँख खोलकर कायोत्सर्ग करने की अपेक्षा आँखें बन्द करने में ज्यादा एकागृता हुई है।

सावधानी :

(1) कम-से-कम, कायोत्सर्ग के समय तो आँखें बन्द ही रखें।

(2) कायोत्सर्ग के समय शरीर पर यदि मच्छर-मक्खी आदि बैठ जावे, काटने लगे तो उसे नहीं उड़ावे, सहन करें।

(3) कायोत्सर्ग के समय यदि कोई चाबी आदि मांगे तो आँख बन्द किये हुए भी चाबी आदि निकालकर नहीं दें।

(4) कायोत्सर्ग के समय कोई कुछ पूछे तो धैर्य रखें, मात्र एक आधा मिनट की बात है।

(5) कायोत्सर्ग को एक ध्यान समझें, इससे अनन्त पापों का क्षय होता है।

थोड़ा और ध्यान दें :

सामान्यत: व्यक्ति के एक बार या दो बार और अधिक-से-अधिक तीन बार भगवान के दर्शन करने का अर्थात् मंदिर जाने का नियम रहता है। 99 प्रतिशत लोग तो एक बार ही मंदिर जाते हैं। वे कभी यदि किसी काम से दूसरी बार मंदिर में जाते हैं तो मात्र वो काम करके लौट आते हैं, भगवान के हाथ नहीं जोड़ते हैं। जैसे कभी प्रवचन सभा होनी हो तो साधु के सामने चौकी पर पलासना (चौकी पर बिछाने का सुन्दर वस्त्र) लेने जाते हैं या जिनवाणी लेने जाते हैं तो मात्र चौकी, पलासना, जिनवाणी, बिछाने की दरी आदि जिसकी आवश्यकता होती है उठाकर ले आते हैं। उनके दिमाग में यह नहीं आता है कि यहाँ तक आया हूँ तो कम-से-कम एक बार भगवान के हाथ तो जोड़ दूँ। जबकि लौकिक क्षेत्र में किसी सामान्य मिनिस्टर, टीचर या अपने से बड़ों के सामने से सभ्य लोग तो नमृता पूर्वक ही निकलते हैं तब भगवान तो लोकोत्तम हैं उनके सामने से तो पचास बार भी निकलें तो भी हाथ जोड़कर, यदि हाथ में कुछ है तो सिर आदि झुकाकर उनके प्रति आस्था, विनय प्रकट करना ही चाहिए। इतना सा करने से भी निश्चित रूप से हमारे पापों का क्षय होकर पुण्य का बन्ध होता है। **समन्तभद्रस्वामी** ने भी **रत्नकरण्डकश्रावकाचार** में कहा है-

उच्चैर्गोत्रं प्रणतेर्भोगो दानादुपासनात् पूजा।
भक्तेः सुन्दररूपं, स्तवनात्कीर्तिस्तपोनिधिषु ॥115॥

अर्थ : गुरु को प्रणाम करने से उच्चगोत्र (ऊँचा कुल), दान देने से

भोग, सेवा करने से आदर, भक्ति करने से सुन्दर रूप तथा स्तवन करने से कीर्ति प्राप्त होती है।

जब गुरु को प्रणाम आदि करने से ही इतना फल मिलता है तो जिनेन्द्र देव तो सर्वोत्तम हैं उनको प्रणाम आदि करने से क्या नहीं मिलता है। बहुत कुछ मिलता है। अत: आप जब भी मंदिर में जावें हाथ जोड़कर अवश्य आवें।

कई लोग मंदिर के सामने से भी ऐसे ही निकल जाते हैं जबकि अपने मित्र/सहेली आदि की दुकान, मकान आदि के आगे से निकलते समय उसको आवाज लगाते हुए बोलते हुए अर्थात् जय-जिनेन्द्र और 'अच्छा चल रहा,' और 'रोटी बन गयी क्या' आदि कुछ-न-कुछ व्यवहार करके निकलते हैं और यदि ऐसा व्यवहार नहीं करते हैं तो सामने वालों को लगता है कि यह हमारे से नाराज है या यह हमारे से नहीं बोलना चाहता है। कई बार हम लोग विहार कर रहे होते हैं तो रास्ते में मान लिया किसी के पास समय नहीं भी हो तो वह अपने स्कूटर/बस, गाड़ी आदि की स्पीड धीरे करके या गाड़ी चलाते हुए ही शिर को झुकाकर अथवा गाड़ी को एक साइड में खड़ी करके अर्थात् वे साधु के प्रति अपना विनय प्रकट करके निकलते हैं, फिर हम तो जैन हैं, जिनेन्द्र भगवान के श्रद्धालु हैं, हम मंदिर के आगे से कैसे बिना हाथ जोड़े/विनय किये निकल सकते हैं। यदि निकलते हैं तो हमें पाप अवश्य लगता ही होगा। अत: हम जब भी मंदिर/साधु आदि पूज्य स्थान के आगे से निकलें विनय अवश्य करें। जैसी भी उस समय अनुकूलता हो, मानसिक, कायिक विनय करके हम पुण्य कमा सकते हैं।

अभिषेक करते समय

अभिषेक का पानी कब लावें :

कई लोगों को काम करने की बहुत जल्दी रहती है। भले ही वे प्रात: आठ बजे से घर के बाहर के चबूतरे पर बैठकर गप-शप करने लग जावें। लेकिन अभिषेक-पूजा करने का पानी सूर्य उदय की बात तो दूर, दिन तक नहीं उग पाता है अर्थात् सामान्य प्रकाश भी नहीं हो पाता है उसके पहले अंधेरे में ही नहा-धोकर कुँए से पानी खींच लेते हैं, छान लेते हैं और गरम भी कर लेते हैं। कई लोगों का तो मानों एक प्रकार से नियम ही रहता है कि कहीं सूर्य

उनको अभिषेक करते हुए नहीं देख ले इसलिए वे कभी भी दिन में अभिषेक नहीं करते हैं लेकिन उनको यह पता नहीं है कि रात्रि में प्रतिपल कितने जीवों की उत्पत्ति होती रहती है। सूर्य की किरणों के अभाव में सहज रूप से जीवोत्पत्ति होती है इसीलिए तो हमारे यहाँ रात्रिभोजन का निषेध किया गया है। अहिंसा का पालन करने के लिए हम रात्रि में भोजन नहीं करते हैं तो अभिषेक कैसे कर सकते हैं, कैसे कुँए से पानी खींच सकते हैं? **दूसरी बात** पूरी रात से कुँए में एवं कुँए के आस-पास जीव-जन्तु शान्ति से बैठे रहते हैं वे सब रात्रि में कुँए से पानी खींचने से विक्षिप्त होते हैं, अचानक आपत्ति आई समझकर इधर-उधर भागकर अपनी रक्षा करने की कोशिश करते हैं लेकिन हमारी बाल्टी-पानी आदि से मर जाते हैं। ऐसा भी नहीं सोचना चाहिए कि सूर्योदय के बाद भी सबसे पहले कुँए से पानी खींचने वाले से तो मरेंगे ही। हाँ, यह सत्य है कि जीव मरेंगे लेकिन इसमें दो बातें हैं **पहली** सूर्य की लालिमा के स्पर्श मात्र से अर्थात् थोड़ा-थोड़ा प्रकाश होते-होते ही जीवों में प्रमाद समाप्त होने लगता है इसलिए प्रकाश होने पर वे जीव अपने भोजन आदि की खोज में जहाँ-तहाँ चले जाते हैं। **दूसरी बात** सबसे पहले पानी खींचने वाले की अपेक्षा उसके बाद (दूसरी-तीसरी आदि बार) खींचने वाले को पाप कम ही लगता है। अत: उस समय अर्थात् यदि आप जल्दी मंदिर पहुँच गये हैं तो स्वाध्याय, जाप-पाठ आदि कर लें। सूर्योदय के बाद ही पानी लावें, गरम करें, अभिषेक करें ताकि धर्म का सही-सही फल मिल सके। यदि आपके पास अभिषेक के अनुकूल समय नहीं है तो उतने समय तक जाप आदि करके भी धर्म-ध्यान कर सकते हैं या श्रीजी के चरण स्पर्श करके भी अभिषेक से अधिक पुण्य कमा सकते हैं।

अभिषेक का पानी कैसा हो :

कई लोग कच्चे अर्थात् अप्रासुक पानी से भगवान का अभिषेक करते हैं। कच्चे पानी की मर्यादा मात्र अन्तर्मुहूर्त की होती है। अन्तर्मुहूर्त के बाद उसमें त्रस जीव उत्पन्न हो जाते हैं। अभिषेक के बाद वह गन्धोदक 11-12 बजे तक रखा रहता है। उस गन्धोदक को शिर पर चढ़ाते समय क्या वास्तव में हम गन्धोदक लगाते हैं या जीवों का समूह लगाते हैं अर्थात् गंधोदक लेते समय भी हमारे हाथों से हिंसा होती है। कई लोग उबलते हुए पानी से अभिषेक करते

हैं। उबलते हुए पानी से अभिषेक करने से प्रतिमाएँ खराब हो जाती हैं। कई लोग लौंग से पानी को प्रासुक करके अभिषेक करते हैं। वे कभी-कभी तो एक घड़े पानी में एक-दो लौंग डाल करके पानी को प्रासुक मान लेते हैं लेकिन जब तक पानी का स्पर्श-रस-गन्ध-वर्ण परिवर्तित नहीं हो जाता तब तक पानी प्रासुक नहीं होता है। ऐसे पानी में और कच्चे पानी में कोई अन्तर नहीं रहता है। कई लोग तो इतने पानी से अभिषेक करते हैं कि गन्धोदक को समेटना (व्यवस्थित ढंग से उठाना) कठिन हो जाता है। उनका वह गन्धोदक अभिषेक करते-करते ही कभी-कभी तो पैरों में आ जाता है कभी वेदी से नीचे जहाँ खड़े होकर सब लोग दर्शन करते हैं वहाँ तक पहुँच जाता है। इस प्रकार से अभिषेक करना क्या विवेक का कार्य है? क्या ऐसा करते हुए हमें अभिषेक करने का सही फल मिल सकता है?

कई लोग तो पानी गरम करने के लिए गैस/सिगड़ी/स्टोव/हीटर आदि भगवान के सामने ही रखे रहते हैं। वहीं गैस जलाते हैं, बन्द करते हैं। कई लोग विवेक की कमी या प्रमाद के कारण जिसमें चमड़े का वाशर डला रहता है ऐसे स्टोव पर अभिषेक के लिए पानी गरम कर लेते हैं। वर्षों तक करते रहते हैं। उन्हें यह विचार ही नहीं आता है कि एक समझदार व्यक्ति भी चमड़े से स्पर्श किये पानी का उपयोग नहीं करता तो हम चमड़े के स्टोव से स्पर्श किये हुए पानी से भगवान का अभिषेक कैसे करें? अथवा वे कभी सोचते ही नहीं है कि हमारे स्टोव में चमड़े का वाशर भी हो सकता है या हम इस स्टोव पर पानी गरम करके अभिषेक कर रहे हैं तो इससे हमें पुण्य के स्थान पर पाप का ही बन्ध होगा, धर्म के स्थान पर अधर्म ही होगा, क्योंकि पम्प के घर्षण से चमड़े के वाशर में निरन्तर उत्पन्न होने वाले निगोदिया जीवों की हिंसा होती रहती है। दूसरी बात चमड़ा अपवित्र है.......।

कई लोग कहते हैं कि गर्म पानी से अभिषेक करने से पित्त बढ़ता है इसलिए ठण्डे पानी से ही अभिषेक करना चाहिए। उनका कहना यदि उचित भी मान लिया जाय तो भी गरम पानी को ठण्डा करने पर पानी की मर्यादा तो बढ़ ही सकती है अर्थात् गरम कर लेने पर एक अन्तर्मुहूर्त के बाद उसमें छह घण्टे पर्यन्त जीवोत्पत्ति की क्षमता तो समाप्त हो ही जाती है। इसलिए

यदि गरम पानी से अभिषेक नहीं भी करना हो तो गरम पानी को ठण्डा करके अभिषेक करने से तत्सम्बन्धी हिंसा से बचा जा सकता है।

सावधानी :

(1) यदि कभी कच्चे पानी से ही अभिषेक करना पड़े तो छानते ही अन्तर्मुहूर्त के भीतर ही अभिषेक करके गन्धोदक को व्यवस्थित कर दें और भगवान को भी अच्छी तरह पौंछ लें, कलश आदि को भी सुखा दें।

(2) पानी छानने के बाद यदि गरम करने के पहले अन्तर्मुहूर्त हो गया है तो पुनः छानकर गरम करें।

(3) पानी ढककर ही लावें, क्योंकि बिना ढके लाने से आकाश में उड़ने वाले पक्षियों की बींट, मूत्र आदि के अंश/छींटे पानी में गिर सकते हैं जो आँखों से दिखाई नहीं देते हैं।

अभिषेक के वस्त्र कैसे हों :

अभिषेक करते समय दो प्रकार के वस्त्रों की आवश्यकता होती है-

(1) धोती-दुपट्टा (1) अंगोछी

धोती-दुपट्टा - जिनको पहनकर भगवान का अभिषेक किया जाता है। कई मन्दिरों में धोती दुपट्टे इतने गन्दे तथा कड़क हो जाते हैं कि अच्छे साफ प्रेस किये हुए कपड़े पहनकर आने वाला व्यक्ति जब उनको पहनता है तो ऐसा लगता है कि कोई भिखारी के कपड़े पहनकर आ गया है या किसी गाँठ (पोटली) में से कपड़े निकालकर पहन लिये हैं जबकि भगवान का अभिषेक करते समय व्यक्ति को इन्द्र अर्थात् स्वर्ग में रहने वाले इन्द्र जैसी अनुभूति होनी चाहिए। उसके स्थान पर उन कपड़ों को पहनने के बाद उसे कैसी अनुभूति होती होगी वह स्वयं जाने। अतः अभिषेक पूजा करने के लिए वस्त्र अच्छे साफ-सुथरे और आकर्षक हों ताकि अभिषेक करने का मन नहीं भी हो तो उन कपड़ों को देखकर अभिषेक करने का मन हो जावे। मंदिर में वस्त्रों के गन्दे और खराब होने का एक कारण पूजकों की लापरवाही भी है। कई पूजक अभिषेक-पूजन के बाद धोती-दुपट्टा आदि उतार कर जहाँ-कहीं डाल देते हैं। वे वस्त्र वहीं पड़े-पड़े इधर-उधर उड़ते रहते हैं। कभी किसी की लात से तो कभी किसी बच्चे

आदि के माध्यम से इधर-उधर होकर फट जाते हैं, गल जाते हैं, नष्ट हो जाते हैं। एक ही स्थान पर पड़े रहने से तथा ऊपर से सूख जाने पर अन्दर से नहीं सूख पाने के कारण उनमें जीव उत्पन्न होते रहते हैं। यदि पूजक स्वयं धोती-दुपट्टे निचोड़कर डाल दें अथवा कोई जिम्मेदारी से धोती-दुपट्टों का ध्यान रखे तो हिंसा से भी बचा जा सकता है और मंदिर की सम्पत्ति का सदुपयोग भी हो सकता है।

कई लोग अभिषेक करने के लिए घर से ही नहा-धोकर शुद्ध वस्त्र पहनकर आते हैं। लेकिन जिनके घर में M.C. की शुद्धि नहीं पाली जाती है अथवा नहाने-धोने के पानी की टंकी को छुआ जाता है, बच्चों को छूने में भी परहेज नहीं किया जाता है उन्हें घर से नहाकर आने में पाप का ही बन्ध होता है क्योंकि जिस टंकी के पानी से वह नहाता है। वह पानी (टंकी) M.C. वाली के छूने से अशुद्ध रहता है। नहाने के बाद पानी का कुछ अंश तो धोती दुपट्टे में सिर के बाल, हाथ-पैर आदि में लगा रह ही जाता है। ऐसे कपड़ों से भगवान का अभिषेक करने की अपेक्षा नहीं करना ही ज्यादा उचित है। अत: आप मंदिर के वस्त्र पहनकर अभिषेक करें अथवा अपने वस्त्र मंदिर में ले जाकर सुखा दें ताकि वस्त्रों की शुद्धि रह सके। मंदिर के अध्यक्ष आदि जो व्यवस्थापक हैं वे 8-10 दिन में वस्त्रों को धुलवाने की व्यवस्था रखें ताकि वस्त्र ज्यादा गन्दे न हो पायें।

कई लोग फटे-कपड़े पहनकर अर्थात् कभी कहीं उलझ जाने के कारण धोती-दुपट्टा फट गया हो, बनियान में छेद हो गये हैं तो भी वे उन्हीं कपड़ों को पहनकर अभिषेक करते रहते हैं। कुछ कहने पर वे कहते हैं कि बनियान में बहुत जल्दी छेद हो जाते हैं हम कब तक बनियान अलग करते रहेंगे। यह सच है कि बनियान में जल्दी छेद होते हैं। तो उसके स्थान पर क्या नया बनियान नहीं खरीद सकते हैं? छेद वाला बनियान अभिषेक के लिए भले ही नहीं पहन सकते हैं लेकिन उसको पूरे दिन तो पहन ही सकते हैं, धोती-दुपट्टे उलझने से फट गये हों तो टाँका तो लगा ही सकते हैं।

कई लोग पूजा के वस्त्र पहनकर ही लघुशंका कर लेते हैं। लघुशंका करने से वे वस्त्र अशुद्ध हो जाते हैं अत: धोती-दुपट्टा पहनने के बाद जाना

पड़े तो उन्हें खोल कर टावेल लपेट कर लघुशंका करके शुद्धि कर लें, पुन: वे ही धोती दुपट्टा पहन कर अभिषेक करें ताकि वस्त्रों की अशुद्धि न हो।

कई लोग धोती-दुपट्टा के स्थान पर कुर्त्ता-पजामा पहनकर अभिषेक करते हैं। उनका विचार रहता है कि शुद्धि की अपेक्षा भले ही धोती-दुपट्टा हो या कुर्त्ता-पजामा दोनों में कोई अन्तर नहीं है, ऐसा नहीं सोचना चाहिए क्योंकि अलग-अलग कार्यों के लिए अलग-अलग यूनिफार्म होती है। जिस प्रकार स्कूल की यूनिफार्म पहनने पर बच्चों को स्कूल जाने की याद आती है अथवा उसको यह अनुभूति होती है कि मैं विद्यार्थी हूँ, वर्दी पहन लेने पर सैनिक को देशरक्षा रूप कर्त्तव्य याद आता है उसी प्रकार धोती-दुपट्टा पहनने पर मैं भगवान का अभिषेक-पूजा करने के लिए जा रहा हूँ अथवा मैं कुछ धार्मिक कार्य करने जा रहा हूँ, मुझे कुछ धार्मिक कार्य करना है, ऐसा मन में विचार आता है।

दूसरी बात, धोती-दुपट्टा पहनकर (अपवाद स्वरूप किसी विशेष व्यक्ति को छोड़कर) कोई होटल में खाना, शराब पीना आदि संसार-परिभ्रमण को बढ़ाने वाले कार्य नहीं करता है। कहने का तात्पर्य यह है कि यूनिफार्म का हमारे जीवन पर एवं भावों पर बहुत प्रभाव पड़ता है। इसलिए धोती-दुपट्टा पहनकर ही अभिषेक करना चाहिए।

कई लोग बाजार से कपड़े खरीद कर और बिना धोए ही पहनकर अभिषेक कर लेते हैं। वे कहते हैं कि बिना धुले कपड़े तो शुद्ध ही रहते हैं उन्हें धोकर शुद्ध करने की आवश्यकता नहीं है लेकिन यह अच्छा नहीं है क्योंकि कोरा कपड़ा भी शुद्धि-अशुद्धि वाले सभी लोगों का छुआ रहता है अत: कोरे कपड़े पहनकर भी अभिषेक न करें, न आहार दें।

अंगोछी :

कई मन्दिरों में भगवान के प्रक्षालन अर्थात् पोंछने के अथवा वेदी आदि साफ करने के कपड़े होते हैं वे इतने गंदे हो जाते हैं कि उनका रंग सफेद से काला हो जाता है। उन कपड़ों की गन्दगी में भी असंख्यात जीव उत्पन्न हो जाते हैं, उनको मसलते ही वे सब मरण को प्राप्त हो जाते हैं। पुन: नये-नये जीव उत्पन्न होते रहते हैं। कभी-कभी तो उस कपड़े से यदि कोई गंधोदक दे दे तो वह गन्धोदक गन्दे पानी जैसा लगने लगता है। इसका अर्थ क्या है कि

कपड़ा बहुत गन्दा था अत: भगवान के प्रक्षालन (पोंछने) के कपड़े स्वच्छ रखें।

सावधानी :

(1) हो सके तो धोती-दुपट्टा, बनियान एवं अण्डरवियर, चारों वस्त्र पहनकर अभिषेक करें। ऐसा नहीं कर सकें तो धोती-दुपट्टा तो अवश्य पहनें, मात्र धोती पहनकर अभिषेक नहीं करें।

(2) मंदिर के अथवा अपने धोती-दुपट्टा मंदिर में सुखाकर उन्हें ही पहनकर अभिषेक करें।

(3) मंदिर के धोती-दुपट्टा धोबी से कभी नहीं धुलवावें। चाहे वॉशिंग मशीन में धो लें, धुलवा लें।

(4) पैंट-शर्ट, कुर्त्ता-पजामा आदि पहनकर अभिषेक नहीं करें।

(5) अंगोछी के कपड़े कोमल तथा पतले रखें ताकि वे जल्दी सूख जावें।

अभिषेक कैसे करें :

कई लोग अरहंत/वीतरागी का अभिषेक करते हैं तब कहीं भगवान के आसन आदि में पानी नहीं चला जावे इस डर से पहले भगवान की गर्दन/सीने पर कपड़ा लगाकर अथवा भगवान की गोदी में कपड़ा रखकर अभिषेक करते हैं। वे यह नहीं सोच पाते हैं कि जो भगवान परम वीतरागी हैं उन पर कपड़ा रखने से क्या वे सरागी अर्थात् वस्त्र धारण करने वाले भगवान नहीं हो जाएंगे। क्या वस्त्र वाले भी वीतरागी हो सकते हैं? आचार्य अकलंक देव जब बच्चे थे, बौद्धों के आश्रम में पढ़ते थे तब उनके सामने एक बार वीतरागी भगवान की प्रतिमा को लाँघकर निकलने का प्रसंग आया तो उन्होंने पहले भगवान की प्रतिमा पर एक धागा डालकर उसे सरागी बनाया फिर उसको लाँघने में दोष नहीं माना तो जो भगवान पर इतना बड़ा कपड़ा लगा देते हैं, रख देते हैं क्या वे सरागी नहीं हो जायेंगे, क्या सरागी भगवान का अभिषेक करने से धर्म हो सकता है? क्या हमारे अभिषेक की यह विधि सही है? इस विधि से अभिषेक करने की अपेक्षा तो गीला कपड़ा करके भगवान को पौंछ लेना ही ज्यादा उचित है। अथवा बिना कपड़ा लगाये अभिषेक करके दो-तीन बार अच्छे ढंग से भगवान का प्रक्षालन कर पौंछ लेना चाहिए।

कई लोग बहुत छोटी प्रतिमा का अथवा खड्गासन प्रतिमा का अथवा

सिद्ध भगवान की प्रतिमा का अभिषेक करते हैं। यह प्रतिमा पतली-पोली होने के कारण बहुत हल्की होती है इसलिए अभिषेक के समय थोड़ी सी असावधानी होते ही प्रतिमा हाथ से छूट सकती है। प्रतिमा के गिरने से भारी पाप का आस्रव होता है अत: न खूब बड़ी प्रतिमा का अभिषेक करें और न बहुत छोटी प्रतिमा का और न हल्की सिद्ध प्रतिमा का अभिषेक करें। ताकि भगवान का विनय भी रहे और प्रक्षालन भी अच्छी तरह हो जावे।

कई गाँवों में लोग श्री जी (भगवान) को थाली में विराजमान करके एक-बार अभिषेक कर लेते हैं। अभिषेक करके प्रतिमा जी को यह सोचकर ऐसे ही छोड़ देते हैं कि कुछ देर के बाद महिलाएँ अभिषेक देखने के लिए आयेंगी तो उन्हें अभिषेक दिखा देंगे। वे 5-7 मिनट के बाद एक महिला आई तो उसे अभिषेक दिखाते हैं, फिर 5-7 मिनट के बाद कोई अन्य आया तो वे अथवा कोई दूसरा उसे अभिषेक दिखाता है। ऐसे करते-करते कई बार तो 2-3 घण्टे तक अर्थात् लगभग 7 बजे भगवान को विराजमान करते हैं उन्हें 9-10-11 बजे तक भी उसी थाली में विराजमान किये रहते हैं जो आता है वही अभिषेक करके चला जाता है। कई लोग तो पूजा करते-करते भी किसी विशेष परिचित के आने पर उन्हें अभिषेक दिखाने में लग जाते हैं। क्या ऐसा करने से हमें अभिषेक का फल मिल सकता है? आप सोचें हमने किसी व्यक्ति को आदर पूर्वक अपने घर पर बुलाया /बैठाया और उन्हें वहीं छोड़कर कहीं दूसरे स्थान पर चले गये या दूसरे काम में लग गये तो क्या हमने एक प्रकार से मेहमान का अपमान नहीं किया। क्या वह पुन: मेहमान बनकर हमारे घर आ सकता है? नहीं, यही सब सोचकर हम भगवान का अभिषेक करके तत्काल श्रीजी का प्रक्षालन करके यथास्थान विराजमान करें ताकि श्रीजी का विनय बना रहे। यदि सामूहिक अभिषेक करते हैं तो अभिषेक का समय नियत रखें अर्थात् सात से साढ़े सात तक या और कोई भी समय निश्चित कर लें ताकि अभिषेक देखने वाले समय पर आकर अभिषेक देख लें तथा धर्म साधन की दुर्लभता को समझकर समय पर धर्म करके पापों का प्रक्षालन करने में सफल हो सकें। दूसरे, इस प्रकार सामूहिक अभिषेक करने से सुमेरु पर्वत पर होने वाले भगवान के जन्माभिषेक की याद आकर सम्यग्दर्शन का कारण बन सकती है।

आप अभिषेक करने के बाद भगवान को अच्छी तरह पौंछे। अच्छी तरह नहीं पौंछने से भगवान के आजू-बाजू में अथवा भगवान की गोदी, हाथ के नीचे थोड़ा-थोड़ा पानी भरा रह जाता है अथवा लगा रह जाता है, उस पानी में जीव आकर गिरने की सम्भावना तो नहीं रहती है लेकिन रोज-रोज एक ही स्थान पर पानी लगा रहने से वहाँ हरी-हरी काई लगने लगती है जिसमें अनन्त निगोदिया जीव उत्पन्न होते रहते हैं। दूसरी बात वहाँ पानी के दाग भी पड़ जाते हैं जिससे प्रतिमा भद्दी लगने लगती है, दर्शन करने वाले को बार-बार उसके विकल्प उत्पन्न होते रहने से परिणामों में निर्मलता नहीं आ पाती है...।

सावधानी :

(1) अभिषेक करते समय प्रतिमा पर पानी इस अनुपात से डालें कि प्रतिमा अच्छी तरह गीली भी हो जावे और पानी बहकर बहुत दूर तक भी नहीं जावे।

(2) प्रतिमा की वस्त्र से सफाई अवश्य करें लेकिन वस्त्र लगाकर अभिषेक करने की गलती नहीं करें।

(3) प्रतिमा को पौंछते-पौंछते यदि काम आ जावे तो भगवान पर ही कपड़ा छोड़कर नहीं जावें।

(4) गंधोदक को एक बर्तन से दूसरे बर्तन में लेते समय ध्यान रखें, गंधोदक की एक बूँद भी इधर-उधर नीचे नहीं गिरे।

(5) प्रक्षालन (भगवान को पौंछने) के कपड़े पतले मलमल के रखें ताकि वे जल्दी सूख जायें जिससे पीले-काले नहीं पड़ें।

(6) जैसे ही कपड़े पीले पड़ने लगें, उनमें छेद होने लगें, उन्हें बदल दें अर्थात् दूसरे ले लें।

(7) यदि कपड़ों को धोना हो तो अरीठा आदि शुद्ध वस्तुओं से धोवें। साबुन, सर्फ आदि अशुद्ध चीजों से न धोवें।

(8) जिस कपड़े से सिंहासन, वेदी आदि को पौंछा है उसी से भगवान को नहीं पौंछे। ऐसा करने से सिंहासन आदि में लगी धूल भगवान पर लग सकती है।

अभिषेक किससे करें :

कई लोग भगवान का अभिषेक करते समय झारी का भी उपयोग करते हैं। झारी में एक नली (टोंटी) लगी रहती है। टोंटी लम्बी एवं टेढ़ी होती है जिससे उसमें कपड़ा जाने की बात तो बहुत दूर आँखों से भी अच्छी तरह नहीं देखा जा सकता है। उसमें अनेक मकड़ियाँ भी आकर बैठ सकती हैं तो छोटे-छोटे जीवों के बारे में तो कहा ही नहीं जा सकता है। जब उस झारी से भगवान का अभिषेक करते हैं, धारा डालते हैं तो वे सब जीव पानी में मिलकर मरण को प्राप्त हो जाते हैं। इसी प्रकार कई स्थानों पर पाण्डुक शिला में ही पाइप डालकर गंधोदक निकालने की व्यवस्था की जाती है। उस पाइप में भी जीव नहीं दिखाई देने के कारण भगवान के पवित्र गंधोदक में मिल जाते हैं। अभिषेक करने वालों को पुण्य के साथ-साथ पाप का भी बन्ध होता रहता है। कई लोग जिस थाली में अभिषेक करते हैं उसमें से गन्धोदक निकालने के लिए एक नली (स्टील-पीतल आदि की) टोंटी लगा देते हैं। उस टोंटी में भी इसी प्रकार जीव रह सकते है, हिंसा का कारण बन सकता है। अत: झारी/कलश के मुँह में ही थोड़ी सी नाली सी रखकर इस हिंसा से बचा जा सकता है। इसमें शांतिधारा या अभिषेक करते समय ज्यादा पानी भी नहीं गिरेगा और बाद में कपड़े से पौंछकर सहज रूप से उसे सुखाया भी जा सकता है। अथवा सामान्य कलश के नाप का पीतल ताँबा या चाँदी का श्रीफल लगाकर कलश एवं श्रीफल को पकड़ कर पतली धारा से शान्तिधारा करके पाप से बचा जा सकता है।

सावधानी :

(1) झारी के किनारे में एक जगह पानी निकलने का स्थान रख लें तो शान्ति धारा भी अच्छी तरह हो सकती है और जीवों की हिंसा से भी बचा जा सकता है।

(2) थाली में लम्बी नाली ऊपर से मोटापन रखकर खुली बनाकर काम चलाया जा सकता है।

(3) पाण्डुक शिला में यदि पाइप लगा है तो ऊपर-नीचे से सिक्का आदि लगाकर पैक कर दें।

(4) यदि अभिषेक का बहुत पानी होता है तो परात आदि बड़े चौड़े पात्र में

पाण्डुक शिला को रखकर अभिषेक करें।

नोट - वैसे अभिषेक बहुत सारे पानी से करना उचित नहीं है, क्योंकि इससे गंधोदक को भी सही व्यवस्थित करने में तकलीफ होती है।

भगवान के चरण छूते समय :

भगवान को अभिषेक करने के लिए लाते समय पहले चरण छूना ही चाहिए और अभिषेक के पश्चात् भी चरण छूना चाहिए। यदि अभिषेक के समय नहीं पहुँच पाये हैं तो भगवान के चरण-स्पर्श करके पूजा कर लेनी चाहिए। बार-बार श्रीजी को विराजमान करके अभिषेक नहीं करना चाहिए। आप जब भी भगवान के चरण छूएँ विवेक अवश्य रखें। कई लोग तो अपना पसीने से लथपथ सिर ही भगवान के चरणों पर रख देते हैं, उस समय अविवेक होने से चरणस्पर्श का फल मिलता हो या नहीं मिलता हो। हमारे शरीर के मल स्वरूप पसीना भगवान के चरणों पर लग जाने से पाप का बन्ध अवश्य हो जाता है। कई लोग भगवान के चरण छूकर सिर पर लगाते हैं फिर पुन: भगवान को छूते हैं ऐसा अनेक बार करते हैं ऐसा करने से भी हमारे शरीर का मल भगवान को लगता है। कई लोग तो भगवान के चरणों को हाथ से रगड़-रगड़ कर पौंछते हैं फिर सिर पर लगाते हैं ऐसा करने से भगवान के चरण ही घिस जाते हैं उनमें गः होने लगते हैं। कई लोग भगवान की वेदी पर (चरण छूने के लिए) भगवान को ही पकड़कर चढ़ते हैं। कई लोग तो यदि छोटी प्रतिमा हो तो अपने मस्तक पर लगा लेते हैं इसमें भी इनके सिर का पसीना, तेल आदि भगवान को लग जाता है। आदि-आदि कार्यों से पुण्य के साथ पाप का भी बन्ध होता रहता है अत: आप भगवान के चरण अवश्य स्पर्श करें लेकिन विवेक अवश्य रखें। प्रमाद नहीं करें।

गंधोदक लेते समय :

भगवान के अभिषेक का जल ही गंधोदक कहलाता है। उस गंधोदक को विनयपूर्वक सिर पर चढ़ाना ही चाहिए, यह परम्परा अनादिकाल से चली आ रही है। गंधोदक को सिर पर चढ़ाने से पापों का क्षय होता है। लेकिन उसी गन्धोदक का यदि दुरुपयोग किया जावे, उसको गृहण करते समय विवेक

नहीं रखा जावे तो पुण्य के स्थान पर पाप का बन्ध भी हो जाता है अत: गन्धोदक लेते समय विवेक रखना अति आवश्यक है। कई लोग बिना हाथ धोए ही पवित्र गंधोदक ले लेते हैं। कोई एक-बार गंधोदक लेकर सिर आदि पर लगाते हैं फिर उन्हीं हाथों को पुन: गंधोदक के पात्र में डाल देते हैं। ऐसा करना उचित नहीं है, क्योंकि एक-बार गन्धोदक शरीर पर लगा लेने पर हाथ अपवित्र माना जाता है। कई लोग गंधोदक लेते समय विवेक नहीं रखते हैं जिसमें गंधोदक की 2-4 बूँदें नीचे गिरा देते हैं। जमीन में पैरों की धूल सड़क की गन्दगी रह सकती है। वहाँ गन्धोदक गिर जाने से गंधोदक का अविनय होता है जिससे पाप का बन्ध होता है। कई लोग गन्धोदक लगाकर हाथ नहीं धोते हैं। उन्हीं हाथों से नाक-आँख आदि का मल पौंछना पड़ता है अथवा कोई गंधोदक लेने के बाद हाथ धोकर पानी को जमीन में डाल देते हैं। गंधोदक का कुछ अंश उस पानी में भी मिल जाता है इसलिए हमारे यहाँ दो पात्र रखने की परम्परा है ताकि गंधोदक लेने के पहले और बाद में दोनों बार हाथ धो लें जिससे गंधोदक का अविनय न हो।

सावधानी :

(1) मंदिर में गन्धोदक व जल के पात्र रखें, दोनों को ढ़ककर रखें।

(2) हाथ धोए बिना गंधोदक न लें, गंधोदक लेने के बाद भी हाथ अवश्य धोवें।

(3) एक बार गंधोदक लेकर पुन: उन्हीं हाथों से गंधोदक न लें। यदि ज्यादा गंधोदक लेना है तो एक बार में किसी पात्र या हथेली में ले लें। उसी में से बार-बार लेकर लगा सकते हैं।

(4) यदि गंधोदक में चम्मच रखे हों तो चम्मच से ही गंधोदक लें।

(5) गंधोदक लेते समय सावधानी रखें, एक बूँद भी नीचे नहीं गिरे।

(6) गंधोदक लेकर पात्रों (गंधोदक एवं जल) को खुला नहीं छोड़ें।

(7) गंधोदक को नाभि के नीचे के अंगों में कभी नहीं लगावें।

(8) यदि गंधोदक घर पर लाये हैं तो मर्यादा का ध्यान अवश्य रखें।

गंधोदक कहाँ डालें :

कई लोग अभिषेक करके गन्धोदक को रोज एक ही स्थान पर डालते

रहते हैं। कई लोग गमले/पौधे की क्यारियों में गंधोदक का विसर्जन करते हैं। कई लोग वेदी के बाहर बाजू में ही अथवा हॉल/कमरे में ही एक छोटी सी चौखट अर्थात् थोड़ी सी जगह को घेर कर बाउंड-ी बना लेते हैं उसमें थोड़ी सी रेत/मिट्टी डाल देते हैं उसमें हमेशा गंधोदक डालते रहते हैं। कोई वृक्ष की जड़ में गंधोदक डालते हैं। इन सब स्थानों पर गंधोदक का विसर्जन करने से गंधोदक पर किसी के पैर नहीं पड़ने से गंधोदक का सम्मान बना रहता है; वहाँ किसी के मल-मूत्रादि के विसर्जन की सम्भावना भी नहीं रहती है इसलिए गंधोदक के प्रति विवेक रूप कार्य तो सिद्ध हो जाता है लेकिन गंधोदक की मर्यादा तो अधिक से अधिक भी (यदि उबले पानी से अभिषेक किया है तो) चौबीस घण्टे में समाप्त हो ही जाती है। गमला, वृक्ष, पौधे आदि में पर्याप्त मात्रा में धूप, हवा आदि के पहुँचने पर भी बारिस एवं सर्दी की ऋतु में तो किसी भी हालत में नहीं सूख पाता है। छाया में अर्थात् वेदी की बाजू में या कमरे/हॉल आदि जहाँ धूप नहीं पहुँचती है वहाँ तो गंधोदक के सूखने की कल्पना ही नहीं की जा सकती है। क्या ऐसे स्थानों पर गंधोदक का विसर्जन करके हम धर्म के साथ-साथ पाप नहीं कमाते हैं। छत आदि खुले स्थान पर विवेकपूर्वक गंधोदक का विसर्जन करके धर्म के साथ होने वाले पापास्रव के मिश्रण से बच सकते हैं।

कई लोग अविनय के डर से गंधोदक को कुँए में डाल देते हैं। वे यह भी नहीं सोचते हैं कि हम उसी कुँए में से पानी निकालकर अगले दिनों में अभिषेक करेंगे। ऐसा करके अर्थात् कुँए में गंधोदक डालकर क्या हम गंधोदक से ही भगवान का अभिषेक करेंगे? अथवा उस कुँए में से कोई पानी खींचकर ले जायेगा तो उस पानी के साथ आपके गंधोदक का भी क्या-क्या, कहाँ-कहाँ उपयोग करेगा, कर सकता है, क्या आपने कभी सोचा है? इसलिए आप कुँए में गंधोदक डालने जैसी गलती कभी नहीं करें।

कभी-कभी भगवान का मार्जन (सफाई) करते हैं अथवा दसलक्षण पर्वों के पहले लगभग सभी मंदिरों में सफाई होती ही है तब प्रमाद से सफाई करते-करते पानी के छींटे इधर-उधर जमीन में गिर ही जाते हैं। जमीन गीली हो जाती है वहाँ पाँव रखने के पहले थोड़ा ध्यान रखें। मार्जन चालू करने के पहले कोई सूखा कपड़ा या नयी फट्टी (बोरी का टुकड़ा) आदि पानी सोखने

वाली चीज डाल दें ताकि पानी बहकर बहुत दूर तक नहीं जावे। उन फट्टी आदि पर भी पैर नहीं रखें। मार्जन का कार्य होने के बाद फट्टी आदि को किसी बर्तन में लेकर शुद्ध साफ स्थान पर ले जाकर निचोड़कर सुखा दें ताकि गंधोदक का अविनय नहीं हो।

गंधोदक की एक घटना :

एक स्थान पर श्रावकों ने अपनी बुद्धि का ज्यादा ही परिचय दे दिया। उन्होंने गंधोदक को विसर्जित करने के लिए एक पीपा रख लिया। उनके मंदिर में लगभग एक-डेढ़ कटोरी गन्धोदक रोज होता था। वे उसको उसी पीपे में डाल देते थे। पीपे को ढक्कन से ढक देते थे। एक दिन एक बाहर गाँव की महिला अपने बच्चे को लेकर मंदिर गई। सावधानी रखते हुए भी उसके बच्चे ने मंदिर में पेशाब कर दिया। उसने पेशाब को बच्चे की पेंटी से साफ किया और स्थान को धोने के लिए पानी ढूँढ़ा। योग से उसे उस पीपे में पानी दिखा। उसके मन में यह कल्पना भी उत्पन्न नहीं हुई कि यह गंधोदक भी हो सकता है इसलिए उसने बिना किसी से पूछे उसमें से पानी लेकर आंगन को साफ कर लिया। जब उसने घर पर पहुँचकर अपने रिश्तेदारों को यह घटना बताई तब मालूम पड़ा कि उस पीपे में तो गंधोदक था। मैंने गंधोदक से बच्चे का पेशाब साफ कर लिया...। आप सोचें क्या इस विधि से गंधोदक का सम्मान रखने वालों को कुछ धर्म रूप फल मिलता होगा? क्या वे अभिषेक करके भी पाप से बच पाते होंगे? एक मंदिर में तो एक कोने में आधा-पौन फुट स्क्वायर की चौकड़ी बनी हुई थी। चौकड़ी अच्छी गहरी थी इसलिए यद्यपि गंधोदक कभी बाहर नहीं आ पाता था लेकिन मेरे अनुमान से तो गंधोदक डालने वालों को यह नहीं दिखता होगा कि मैं गंधोदक कहाँ डाल रहा हूँ। गंधोदक के साथ चावल के कुछ कण आदि गिरने से कहीं वहाँ चींटियों की लाइन तो नहीं लगी है, कहीं लटों के झुण्ड तो वहाँ उत्पन्न नहीं हो गये हैं, कहीं उस अंधेरे स्थान में कोई छोटा-मोटा जीव छुपकर तो नहीं बैठा है, क्या ऐसे स्थान में डाला गया गंधोदक अहिंसा की पुष्टि कर सकता है, क्या थोड़ा-सा विवेक रखकर इस पाप से नहीं बचा जा सकता है। यह पाप किसी व्यक्ति विशेष को नहीं लगता अपितु यह एक सामूहिक कार्य है इसमें प्रत्यक्ष-परोक्ष रूप से पूरी समाज

की साझेदारी होती ही है अथवा अभिषेक करने वाले और गंधोदक का विसर्जन करने वालों को इसका विशेष पाप लगेगा। इसमें व्यवस्थापकों को तो पूरा ही पाप लगता है।

सावधानी :

(1) मंदिर की छत पर आपके मंदिर में जितना गंधोदक होता है, उस अनुपात की लम्बी-चौड़ी एक ईंट की बाऊँड-ी वाली चौकड़ी बनवाकर पतली-पतली लगभग एक-डेढ़ अंगुल मोटी बालू रेत बिछा दें ताकि रेत गंधोदक को सोख ले और धूप में सूख जावे। ईंटों के बीच एक-छोटा सा नाला अवश्य रखें, जिससे बारिस का पानी चौकड़ी में भरा न रहे।

(2) ईंटों की बाऊँड-ी पर प्लास्टर अवश्य कर दें अन्यथा ईंटें भी गंधोदक चूसेगी जिससे उन पर काई आ जावेगी।

(3) गंधोदक डालने का स्थान जहाँ धूप आती हो वहीं बनावें।

(4) गंधोदक डालने का स्थान इतना विस्तृत अवश्य बनावें कि रोज का गंधोदक रोज सूख जावे।

(5) पर्व के दिनों में गन्धोदक ज्यादा हो तो ऐसे स्थान पर फैलावें कि नाली में नहीं जावे, पैरों में भी नहीं आवे और भरा भी नहीं रहे अर्थात् सूख जावे।

(6) गंधोदक को समय रहते ही विसर्जित कर दें अर्थात् शाम तक या दूसरे दिन तक नहीं रखें।

पूजा करते समय

पूजा कैसे करें :

कई महिलाएँ पूजा करती जाती हैं बच्चों को खिलाती जाती हैं। कई महिलाएँ जब बच्चे परेशान करते हैं तो थाली में से चिटकी आदि उठाकर उन्हें दे देती हैं। बच्चे मंदिर में ही भगवान के सामने खाते रहते हैं। खाने के कारण उनके मुँह में से लार मंदिर में गिरकर मंदिर को अपवित्र कर देती है। कई लोग तो इसी उद्देश्य से डिब्बी में अलग से चिटकी, काजू-किसमिस आदि रख कर लाते हैं कि यदि मंदिर में बच्चों ने परेशान किया तो उन्हें देकर हम शान्ति से पूजा-पाठ आदि धार्मिक कार्य कर लेंगे। कई लोग तो अपने बच्चों का ध्यान

ही नहीं रखते हैं, वे अपने धर्मध्यान में लगे रहते हैं, उनके बच्चे चढ़ाये हुए द्रव्य को खाते रहते हैं। बचपन में निर्माल्य (चढ़ा हुआ) द्रव्य खाने की आदत पड़ जाने पर भविष्य में भी वे दान का/चढ़ाया हुआ द्रव्य खाने लगते हैं जिसका फल नरकगति के दु:ख और कई भवों तक दरिद्रता से जूझना होता है। कई लोग कहते हैं कि क्या करें हम तो बच्चों को समझा-समझा कर थक गये, वे मानते ही नहीं हैं। वे मंदिर में जाते ही चिटकी आदि उठाकर खाने लगते हैं। ऐसा कहने मात्र से पाप नहीं टलता। आप दो-चार दिन का गेप देकर हमेशा बच्चे को समझाते रहें, आपका बच्चा 4-6 महीने में अपने-आप सुधर जायेगा। वह मंदिर की चीज खाना छोड़ देगा।

कई लोग पूजा करते-करते उठकर पुस्तक लेने के लिए चले जाते हैं कोई बच्चे को पकड़ने के लिए दौड़ पड़ते हैं। कोई पूजा करते-करते ही बातें करने लगते हैं, कोई तो प्रकरण आने पर लड़ ही पड़ते हैं और कोई कमर में टंगी चाबी निकालकर दे देते हैं। कोई बच्चे आदि कुछ पूछने आ जावें तो उससे बातें करने लगते हैं और कोई तो ऐसे भव्य भी होते हैं जो पूजा की थाली ढककर घर पर चले जाते हैं, घर का काम निपटा कर अर्थात् ताला लगाकर रखी हुई चीज ताला खोलकर देकर वापस आकर पूजा पूरी करते हैं। एक दिन एक महिला ने बताया, ''माताजी! जब टी.वी. पर रामायण का कार्यक्रम आया था तब भी मैं हमेशा भगवान की पूजा करती थी। कई बार पूजा करते-करते ही रामायण का समय हो जाने पर मैं पूजा की थाली ढककर घर पर आती थी, टी.वी. पर रामायण देखती और फिर जाकर शेष पूजा शान्ति पाठ आदि को पूरा करती थी।'' हम स्वयं सोचें ऐसा करने वाले के मन में भगवान की पूजा के प्रति ज्यादा बहुमान है या टी.वी. की रामायण के प्रति? इस प्रकार से पूजा करने वालों को कितना फल मिलता होगा। यह तो भगवान ही जान सकते हैं। इस प्रकार की पूजा से तो पूर्वोपार्जित पापों में वृद्धि एवं आगे के लिए भी पाप का ही बन्ध होता होगा।

कई लोग तो द्रव्य की थाली में से बादाम आदि मूल्यवान द्रव्य उठाकर एक हाथ में छुपा लेते हैं। वे सोचते हैं कि मैं अच्छा द्रव्य चढ़ाऊँगा /चढ़ाऊँगी तो मुझे ज्यादा पुण्य लगेगा। लेकिन द्रव्य चढ़ाने का पुण्य-पाप से कोई विशेष

सम्बन्ध नहीं है। ऐसा करने से द्रव्य चढ़ाने का उतना धर्म/पुण्य नहीं मिलता जितना पाप द्रव्य को छुपाकर/उठाने की मायाचारी करने का बँध जाता है। कई लोग जब मंदिर या किसी दूसरे के द्रव्य से पूजा करते हैं तो ज्यादा-ज्यादा द्रव्य चढ़ाते हैं और जब अपना द्रव्य-चढ़ाते हैं तो थोड़ा-थोड़ा चढ़ाते हैं इस विधि से अधिक द्रव्य चढ़ाकर भी क्या वे पूजा एवं द्रव्य चढ़ाने का फल प्राप्त कर सकते हैं। अथवा अल्प मूल्य वाला थोड़ा द्रव्य भी इतना फल दे सकता है, जितना मूल्यवान बहुत अधिक द्रव्य नहीं दे सकता है। सम्मेदशिखरजी के पहाड़ पर एक दरिद्र बुढ़िया ने सबसे हल्की पुरानी ज्वार के भी छोटे-छोटे दाने चढ़ाये। वे भी उसकी भक्ति के प्रभाव से इतने उत्तम मोती बन गये कि उनके समान मोती पूरे संसार में नहीं मिल सकते हैं। अत: पुण्य के लोभ में छल-कपट करके पाप का अर्जन नहीं करें। एक स्थान पर एक सेठानी का निजी मंदिर था। वहाँ सेठानी एवं बहू के लिए दो प्लेटें द्रव्य की लगाकर रख दी जातीं। सेठानी बहू से थोड़ा जल्दी चलकर एक प्लेट में से दो-तीन बादाम, लौंग आदि उठाकर दूसरी प्लेट में रखकर स्वयं ले लेती थी और पहली प्लेट बहू को पकड़ा देती थी। क्या इस प्रकार से द्रव्य लेकर भगवान को चढ़ा देने से पुण्य मिलता है? अत: आप भले ही कम चढ़ावें, अपना द्रव्य चढ़ावें। सामूहिक पूजा आदि के समय कम-से-कम जितना द्रव्य हमने चढ़ाया है या चढ़ायेंगे, अनुपात से उतना पैसा अवश्य देवें। यदि आर्थिक स्थिति बहुत नाजुक है तो सामान्य रूप से द्रव्य चढ़ावें न ज्यादा न कम; पैसे देने का विकल्प नहीं करें। आपको पाप नहीं लगेगा।

कई लोग पूजा करते-करते भगवान के दर्शन के लिए आये हुए बच्चों-युवकों को अपनी थाली में से द्रव्य उठाकर देते रहते हैं। बच्चों को द्रव्य देकर संस्कार डालना कोई खराब काम नहीं है लेकिन व्यक्ति को पहले अपना कल्याण करना चाहिए, बाद में दूसरे का। फिर हम पूरे दिन में अपने कल्याण का कार्य कितने समय तक करते हैं, उतने से समय में भी यदि हम दूसरे के हित में लग जाएंगे तो अपना कल्याण कब करेंगे? अत: कम-से-कम 15-20 मिनट हम अपने कल्याण का कार्य कर रहे हैं तो स्थिरता पूर्वक करें ताकि हमें अतिशय फल मिल सके।

कई लोग पूजा करते-करते यदि भगवान का अभिषेक / शान्तिधारा आदि होने लगे तो उठकर देखने चले जाते हैं। कई लोग पूजा करते-करते यदि कोई अभिषेक दिखाने के लिए कह दे या कोई साधु संत दर्शन करने आ जावे तो पूजा छोड़कर अभिषेक दिखाने में लग जाते हैं। इसी प्रकार कई लोगों की व्यवस्था करने में ज्यादा रुचि होती है वे पूजा करना छोड़कर दूसरों की व्यवस्था करने में लग जाते हैं। मेरे अनुमान से ऐसे लोग तो कभी भी पूरी पूजा करते ही नहीं होंगे अथवा 4-8 बार इधर-उधर गये बिना उनकी पूजा पूरी ही नहीं होती होगी। कई लोग पूजा के बीच में ही यदि साधु-संत आ जावे तो उन्हें गन्धोदक देने लगते हैं आदि-आदि ऐसे अनेक कार्य हैं जो पूजा करते समय नहीं करने चाहिए। उन सब पर विचार कर एकागृता से पूजा करनी चाहिए ताकि हमारा पूजा करना सार्थक हो। हमारी पूजा पापों का क्षय करने में समर्थ हो।

सावधानी :

(1) हो सके तो पूजा करते-करते नहीं उठें।

(2) पूजन प्रारम्भ करने के पहले पुस्तक, द्रव्य, ठोना, पूजा के बर्तन आदि सभी आवश्यक सामग्री व उपकरण लेकर बैठें।

(3) पूजा करते-करते आपस में कभी बात नहीं करें। यदि बोले बिना काम चल ही नहीं रहा हो तो आवश्यकता अनुसार कम-से-कम बोलकर कायोत्सर्ग अवश्य करें।

(4) पूजा करते समय जल-चन्दन आदि चढ़ाने के पहले कम-से-कम एक बार भगवान की मुद्रा अवश्य निहार लें।

(5) द्रव्य चढ़ाने की थाली भगवान के सामने रखें।

(6) अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार पूजा/दर्शन के लिए द्रव्य अवश्य ले जावें।

(7) यदि द्रव्य ले जाने की अनुकूलता नहीं है, मंदिर के द्रव्य से दर्शन-पूजन की है तो भण्डार में पैसा अवश्य डालें।

द्रव्य कैसा चढ़ावें :

कई लोग अर्थसम्पन्न होने पर भी थोड़ा-थोड़ा सा द्रव्य चढ़ाते हैं। उनके मन में यह विचार भी नहीं आता है कि हम एक दिन में कितना खाते हैं और कितना भगवान को चढ़ाते हैं। ऐसे लोगों को क्या उपाधि दी जावे? उन्हें तो मक्खीचूस कह दें तो अतिशयोक्ति नहीं है। कई लोग भगवान को चढ़ाने के चावल अलग से लाते हैं अर्थात् हल्की क्वालिटी के चावल खरीद लाते हैं। कई लोग सोचते हैं कि भगवान को कितना या कैसा भी चढ़ाओ भगवान तो खाते नहीं हैं, ग्रहण करते नहीं हैं। उसको तो माली ही ग्रहण करते हैं। अत: भगवान को चढ़ाने की अपेक्षा तो अन्य स्थान पर दान देने से कुछ काम आयेगा। लेकिन उन्होंने तो यह सोचा ही नहीं कि जो हम खाते हैं उसका आखिर क्या होता है? उस भोजन से पुष्ट हुआ शरीर माटी में ही तो मिलता है। **दूसरी बात** पूज्य पुरुष के पास अच्छे से अच्छा द्रव्य लेकर जाना चाहिए ऐसी लोक की रीति है। कोई राजा, मिनिस्टर आदि बड़े व्यक्ति के पास जाता है तो अच्छी-से-अच्छी चीज लेकर जाता है तो हमारे भगवान तो तीन लोक में पूज्य हैं उनके पास तो अच्छे से अच्छा द्रव्य ही ले जाना चाहिए। **तीसरी बात** बड़ों को जितनी बड़ी भेंट दी जाती है उसके प्रतिफल में उससे कई गुना फल बिना मांगे सहज रूप से मिलता है। अत: हमें सर्वोत्तम द्रव्य चढ़ाकर ही भगवान के दर्शन-पूजन करना चाहिए।

कई लोग रोज मंदिर के द्रव्य से पूजा करते हैं, इसमें कोई दोष नहीं है लेकिन यदि पूजक के पास भोजन करने, वस्त्र पहनने आदि के लिए आर्थिक व्यवस्था है तो उसे अपनी शक्ति के अनुसार पूजा के लिए भी द्रव्य अवश्य ले जाना चाहिए अन्यथा वे वर्तमान में भले ही धनाढ्य भी हों भविष्य में तो दरिद्र ही बनेंगे। जिनके पास अपने खाने-पीने की व्यवस्था भी नहीं है उनको मंदिर के द्रव्य से पूजा करने में कोई दोष नहीं है, उन्हें मंदिर का द्रव्य समझकर पूजा करना नहीं छोड़ना चाहिए, क्योंकि मन्दिर में पूजा करने के लिए फण्ड इसीलिए बनता है कि लोग उस द्रव्य से भगवान की पूजा करें। अत: अपनी शक्ति के अनुसार द्रव्य अवश्य चढ़ावें और शक्ति नहीं हो तो विकल्प नहीं करें, भगवान की पूजा करने से नहीं चूकें।

द्रव्य की थालियाँ कैसे जमावें :

वैसे जहाँ पर द्रव्य धुलता है वहीं पर द्रव्य की थालियाँ लगा दी जाती हैं लेकिन कई मंदिरों में पूजा करने की टेबिलों पर थालियाँ रखकर द्रव्य रखा जाता है। द्रव्य जमाने के पहले थाली कटोरी प्लेट ठोना आदि को धोना आवश्यक होता है। जो लोग मंदिर में इन बर्तनों को धोते हैं उनके **पहली बात** भगवान के सामने बर्तनों को धोने से थोड़ा पाप तो लगता ही है। **दूसरी बात** बर्तन धोते समय तथा टेबिल पर रखते समय भगवान को कई बार पीठ लग जाती है टेबिल तक आने-जाने में सहज रूप से ऐसा हो जाता है। कई लोगों को इसकी जानकारी नहीं होने से भी ऐसा हो सकता है। अत: आप जो भी द्रव्य की थालियाँ लगावें अथवा चौकी-शास्त्र आदि उठाते समय ध्यान रखें, भगवान को पीठ नहीं लगे।

इसी प्रकार कई लोग मंदिर में पूजा-विधान आदि के समय भक्ति से नाचते हैं। नाचने में कोई ऐसा विशेष दोष नहीं है लेकिन नाचते समय जब वे गोल-घूमकर नाचते हैं तो भगवान को पीठ लगती है। जब हम भगवान को पीठ लगाकर मंदिर से बाहर नहीं निकलते हैं, भगवान को कभी पीठ लगाकर नहीं बैठते हैं तो नाचते समय भगवान को पीठ कैसे लगा सकते हैं? इसी प्रकार कई बार हम बच्चों को मंदिर ले जाते हैं। ले जाना पड़ता है अथवा बच्चों को मंदिर ले जाना ही चाहिए। वहाँ माँ/दादी आदि तो भगवान के सामने मुँह करके बैठ जाते हैं लेकिन बच्चों को अपनी तरफ मुँह करके बैठा देते हैं जिससे भगवान को उनकी (बच्चों की) पीठ लगती रहती है। कई बार बच्चे भगवान के सामने पैर फैलाकर बैठ जाते हैं, माँ कुछ ध्यान ही नहीं देती है। कई बार तो उपवासादि के समय शारीरिक क्षमता कम हो जाने से बड़े लोग भी भगवान की तरफ पैर फैला कर बैठ/लेट जाते हैं। कई लोग तो घण्टे भर तक सोते भी रहते हैं। कई लोग पर्दा लगाकर ऐसा करते हुए सोचते हैं कि हमने भगवान को पीठ या पैर नहीं लगाये हैं लेकिन पर्दा लगाकर ऐसा करना भी उचित नहीं है। कहीं-कहीं मंदिर में से बहुत दूर तक भगवान दिखते हैं तो वहाँ भले ही पर्दा डालकर भोजन करना तो फिर भी उचित माना जा सकता है, माफ किया जा सकता है। लेकिन हर जगह तो ऐसा नहीं किया जा सकता।

इसी प्रकार विधानाचार्य, प्रतिष्ठाचार्य, बृह्मचारी आदि को भी विधान के समय, पूजा का अर्थ समझाते समय जनता के सामने मुँह करके खड़ा होना पड़ता है तब भी भगवान को पीठ लग जाती है अत: उस समय भी थोड़ा विवेक रखें ताकि भगवान को पीठ नहीं लगे।

द्रव्य कैसे चढ़ावें :

कई लोग पूजा करते समय द्रव्य की थाली नीचे और द्रव्य चढ़ाने की थाली को ऊपर रखते हैं। अथवा दोनों थालियों को बराबर रख देते हैं, कोई द्रव्य की थाली आगे और चढ़ाने पीछे रखते हैं कोई दोनों थालियों की किनारे मिलाकर बराबरी से रखते हैं। कोई-कोई आमने-सामने खड़े रह कर पूजा करते हैं तब उनकी थाली ऐसे रखी रहती है कि द्रव्य चढ़ाते समय ऐसा लगता है कि वे मानों एक-दूसरे को द्रव्य चढ़ा रहे हों। बड़े विधान आदि में पूजा के समय ऐसे ही खड़ा होना पड़ता है उस समय यदि थाली को थोड़ा-सा आगे रख दिया जाये तो दोनों व्यक्तियों का मुँह भगवान के सामने रह सकता है। कई लोगों की द्रव्य चढ़ाने की विधि से ऐसा लगता है कि वे स्वयं को अथवा किसी दीवाल को या दीवाल के कोने को द्रव्य चढ़ा रहे हों। इसमें हिंसा का तो कोई प्रसंग नहीं है लेकिन थोड़ा सा विवेक रखते हुए विधिपूर्वक पूजा करें तो भगवान के प्रति हमें जितना बहुमान रखना चाहिए उतना रखकर पुण्य में वृद्धि कर सकते हैं और पापों से बच सकते हैं। पूजा करते समय भगवान की मुद्रा के अभिमुख हो द्रव्य चढ़ाना चाहिए अर्थात् चढ़ाते समय हमें यह अनुभव आना चाहिए कि मैं भगवान को द्रव्य चढ़ा रहा हूँ।

कई बार जब विधान की पूजा होती है तो एक दिन में कभी 500 तो कभी 1000 अर्घ्य एक साथ चढ़ते हैं या चढ़ाये जाते हैं क्योंकि जयमाला पूरी होने के पहले बीच में पूजा छोड़ी नहीं जा सकती है अथवा एक ही थाली में दो-चार व्यक्ति एक साथ अर्घ्य चढ़ाते हैं अथवा एक ही दिन में 4-5 घण्टे तक लगातार पूजा करते समय जो द्रव्य चढ़ाया जाता है उसकी व्यवस्था करने के लिए तो व्यक्ति नियुक्त रहते हैं जो द्रव्य खतम होने से पहले अपेक्षित द्रव्य लाकर रख देते हैं लेकिन जिस थाली में द्रव्य चढ़ाया जाता है वह थाली द्रव्य चढ़ाते-चढ़ाते भर जाती है तो उस पर दूसरी-तीसरी और पाँच-छह थाली तक

रख दी जाती है। ऐसा करने से पहली भूल तो चढ़ाने वाले द्रव्य की (जिसमें द्रव्य-चढ़ाया जाता है) थाली नीचे रहनी चाहिए वह ऊँची हो गई तथा दूसरी बात ऊँची थाली में द्रव्य चढ़ाने से चढ़ाते समय दो-चार दाने उछलकर द्रव्य की थाली में गिर ही जाते हैं। वे चढ़े हुए दाने ही फिर से चढ़ाने में आ जाते हैं। निर्माल्य द्रव्य चढ़ाने से महान् पाप का बन्ध होता है। अत: थाली भरते ही अर्थात् थाली में द्रव्य का पर्वत बने उसके पहले ही थाली को खाली कर लें। अथवा द्रव्य रखने वाले को ही द्रव्य की थाली खाली करने के लिए भी समझा दें ताकि सैकड़ों लोग निर्माल्य द्रव्य चढ़ाने के पाप से बच सकें।

सावधानी :

(1) जिस थाली में से द्रव्य चढ़ा रहे हैं वह किसी पाटे आदि के ऊपर रखें ताकि चढ़ाते समय दाने उछल भी जावें तो भी पुन: द्रव्य की थाली में नहीं गिरें। इसके लिए थाल/थाली से कुछ बड़े लकड़ी के चौकोर पीस बनवा लें ताकि हमेशा पाटे नहीं ढूँढ़ने पड़ें।

(2) यदि भूल से चढ़ाये गये द्रव्य की थाली में हाथ लग जावे तो तत्काल हाथ अवश्य धोवें।

(3) अपनी शक्ति के अनुसार अच्छे से अच्छा द्रव्य भगवान को चढ़ावें।

(4) ऐसा द्रव्य चढ़ावें जिसको यदि माली उठाना भूल भी जावे या दो-चार दिन वहीं रखा भी रहे तो भी उसमें जीव उत्पन्न न हो पावें।

(5) पूजा करते समय यदि थाली (जिसमे द्रव्य चढ़ा रहे हैं) भर जावे तो बीच की पूजा पूरी होने पर खाली कर दें ताकि थाली में पहाड़ सा नहीं बन पावे।

(6) यदि बहुत बड़ी पूजा है तो पूजा शुरू करने के पहले ही द्रव्य की थाली खाली करने की व्यवस्था कर लें।

द्रव्य कहाँ धोवें :

कई मंदिरों में चावल आदि पूजा की सामग्री धोने के स्थान से अर्थात् जिस कमरे में अथवा सामग्री धोने का पानी जिस नाले में जाता है वहाँ से बदबू आने लगती है। उसके पास से निकलते ही ऐसा लगता है कि जैसे कहीं यहाँ 2-4 चूहे मरे पड़े हों। उनके सड़ने की बदबू आ रही हो। उसके कारण

का कोई अनुमान ही नहीं लगता है। एक दो बार वहाँ से निकलने का काम पड़ता या 5-7 मिनट वहाँ सामग्री धोते समय बदबू का अहसास भी होता है लेकिन किसी को इसके बारे में विचार करने का समय ही नहीं मिलता या उस बदबू की तरफ किसी का ध्यान ही नहीं जाता है कि उसका कारण चावल आदि सामग्री धोते समय चावल के कुछ दाने पानी के साथ नाले में चले जाते हैं। नाले में ढलान नहीं होने के कारण वे दाने वहीं पड़े-पड़े सड़ते रहते हैं। उन्हीं के सड़ने की वह बदबू होती है। सड़ने का अर्थ त्रस जीवों की उत्पत्ति होता है। त्रस जीवों की उत्पत्ति हुए बिना वस्तु सड़ नहीं सकती, सड़े बिना बदबू नहीं आ सकती। कभी चावल के दाने नहीं भी जावें तो भी चावल धोने के पानी में भी चावल का अंश निकलता है वह पानी भी यदि एक स्थान पर डालते रहें तो वहाँ जीवों की उत्पत्ति हो जाती है। वैसे अन्न का पानी जहाँ भी जाता है वहाँ जीवों की उत्पत्ति होती है इसलिए अन्न के पानी को नाली में डालना ही नहीं चाहिए लेकिन सामान्य गृहस्थ इस प्रकार का विवेक नहीं रख पाते हैं अथवा ऐसा विवेक रखना गृहस्थ के लिए एक प्रकार से असंभव है। इसलिए इसे विवेकपूर्वक ऐसा कार्य करना चाहिए कि नाली में चावल के कण पड़े-पड़े सड़े नहीं, उनमें लटें, कीड़ें उत्पन्न न हों। एक बार दसलक्षण पर्व चल रहे थे। सौ-पचास लोगों के द्रव्य धोने की व्यवस्था एक स्थान पर सामूहिक की गई थी। कुँए के पास ही एक बहुत बड़ा कच्चा स्थान था। वहीं पर यह सोचकर कि द्रव्य धोने का पानी नाली में नहीं जायेगा जिससे हम भारी हिंसा से बच जायेंगे, द्रव्य धोकर पानी फेंक देते थे। थोड़े से अविवेक के कारण पानी को पूरे चौक में दूर-दूर तक न फैलाकर एक ही स्थान पर अर्थात् 20-25 स्क्वायर फुट में ही डालते गये। पाँच-सात दिन के बाद वहाँ (उस चौक में) ऐसी बदबू आने लगी कि मानों कहीं मरे हुए चूहे तो नहीं पड़े हैं या कहीं कुत्ता-बिल्ली आदि किसी का शव पड़ा होगा। कितनी भयंकर बदबू आ रही है। सब लोगों ने आस-पास के घरों तक में चूहे ढूँढ़े पर कहीं किसी का शव नहीं मिला। ऐसा करते-करते दो-चार दिन और निकल गये। दसलक्षण पर्व पूरे हो गये। दो-चार दिन में अपने-आप बदबू कम होने लगी। तब मैंने अनुमान लगाया कि शायद लगातार एक ही स्थान पर चावल (द्रव्य) धोने का पानी

डालने से वहाँ त्रस जीव उत्पन्न हो गये थे। उन्हीं की बदबू आ रही थी।

कई लोग इससे बचने के लिए पानी को इकट्ठा करते जाते हैं। इकट्ठा करना तो ठीक है लेकिन वह पानी सुबह से लेकर दस-ग्यारह बजे तक जब-तक द्रव्य धुलता रहता है, खुला ही पड़ा रहता है उसमें मच्छर आदि जीव-जन्तु मरते रहते हैं। इसमें ऐसा कहा जा सकता है कि सुबह से द्रव्य धोने वालों की लाइन लगी रहती है पानी का पात्र कैसे ढका रह सकता है? ऐसा कहने वाले यदि थोड़े विवेक से काम करें अर्थात् पात्र के नाप वाली जाली बनाकर ढक दें तो पानी डालने के लिए न पात्र खोलने की आवश्यकता होगी और न पात्र ही खुला रहेगा अत: जाली बनवाकर/जाली का दान देकर परम अहिंसा धर्म का फल प्राप्त कर सकते हैं।

इसी प्रकार जब सामूहिक पूजा-विधान आदि बड़े कार्यक्रम होते हैं उनमें भी अधिक मात्रा में द्रव्य धुलता है वहाँ भी ऐसी स्थिति बन सकती है इसलिए सावधानी रखें। जहाँ द्रव्य धाने का पानी जाता है, उस नाली को साफ रखें, पानी का निकास अच्छा रखें अर्थात् नाली में ढलान रखें, नाली में गड्ढ़ा नहीं होने दें ताकि चावल के कण उसमें पड़े-पड़े सड़ते नहीं रहें।

कई मंदिरों में अभिषेक तो गर्म पानी से करते हैं लेकिन द्रव्य धोने का पानी कच्चा ही रखते हैं ऐसा करना उचित नहीं है, क्योंकि कच्चे पानी में एक अन्तर्मुहूर्त में ही त्रस जीव उत्पन्न हो जाते हैं। जिससे जब जल-चन्दन चढ़ाते हैं तब भी जल के साथ जीवों को भी चढ़ाना पड़ता है। इसलिए भले ही ज्यादा गरम नहीं करें। थोड़ा सा कुनकुना ही कर लें। छह घण्टे की मर्यादा तो हो ही जायेगी। अत: कच्चे पानी के स्थान पर थोड़ा कुनकुना अवश्य कर लें ताकि जल-चन्दन के साथ जीव नहीं चढ़ाना पड़े।

इसी प्रकार मंदिर में सभी पूजक समय पर नहीं आ पाते हैं तो पीछे से आने वालों को द्रव्य अथवा हाथ धोने के लिए पानी और पूजा करने के लिए द्रव्य धोकर रखना आवश्यक होता है। कई लोग उस पानी को लोटा आदि में भरकर खुला रख देते हैं। द्रव्य की थाली लगाकर उसे भी बिना ढके ही रख देते हैं। थाली के द्रव्य में भले ही कोई जीव गिरकर नहीं मर सकता, क्योंकि वह द्रव्य सूखा होता है लेकिन उस थाली में रखे हुए कलशों में जो जल चन्दन

होते हैं उनमें तो जीव आकर गिर ही सकते हैं और सूखे द्रव्य पर मक्खियाँ आदि बैठकर मल-मूत्र करके द्रव्य को अपवित्र कर ही देती हैं। इसकी अपेक्षा पूरे पानी को किसी एक बर्तन में रखकर उस पर द्रव्य चढ़ाने की प्लेट, कटोरी आदि ढक कर हिंसा से बचा जा सकता है, अन्यथा थोड़े से प्रमाद के कारण घण्टों तक वह पानी खुला रहेगा। उसके निमित्त से हमें पाप का बन्ध होता रहेगा। अत: पानी, द्रव्य की थाली, जल-चन्दन के कलश आदि ढककर रखें।

इसी प्रकार कई स्थानों पर दो-चार व्यक्ति ही सबके लिए पूजन सामग्री की थालियाँ लगाते हैं। उस पूजन की थाली में कई स्थानों पर दीपक रखा जाता है वह दीपक सुबह से लेकर जब तक पूजा करने वाला पूजा नहीं कर लेता, खुला ही रखा रहता है। उस दीपक में भी जीव गिरकर मर सकते हैं उसे भी अच्छी तरह ढककर रखें।

कई लोग मंदिर में भगवान के सामने ही द्रव्य धोने लगते हैं। कभी पूजा करते समय द्रव्य कम पड़ गया तो पूजा के बीच में ही द्रव्य धोने लग जाते हैं , क्या वे इतना अनुमान नहीं लगा सकते हैं कि हमें कितनी पूजा करनी है, उतनी पूजा में कितना द्रव्य लगता है। अचानक कभी पूजा करते-करते विशेष पूजा करने का भाव उत्पन्न हो जावे या विधान आदि करने का मन हो जावे तो वह अपवाद मार्ग है अर्थात् कदाचित् होता है। उस समय भी भगवान के सामने द्रव्य नहीं धोकर अन्य स्थान पर जाकर द्रव्य धोना ही पड़ेगा। द्रव्य धोना भी एक आरम्भ तो है ही। ऐसा आरम्भ का कार्य भगवान के सामने कैसे किया जा सकता है। यदि भगवान के सामने द्रव्य धोना उचित होता तो लगभग सभी मंदिरों में द्रव्य धोने का स्थान अलग से क्यों बनाया जाता। अत: भगवान के सामने द्रव्य नहीं धोवें, चाहे थोड़ा कम-कम चढ़ा दें।

निर्माल्य नहीं चढ़ावें/खावें :

कई लोग कभी मंदिर का काम चल रहा होता है उसी समय में यदि हमारे घर पर भी थोड़ी सी रेत, कंकरीट, दो-चार ईंटों या एक-दो पत्थर की आवश्यकता पड़ती है तो मंदिर में से उसे ले लेते हैं। उनका विचार रहता है कि मंदिर तो अपना ही है इसलिए मंदिर की चीज उठाने में क्या पाप? अथवा दो-चार ईंटें या थोड़ी-सी रेत ले लेने से क्या फर्क पड़ने वाला है, मंदिर में

तो ढेर सारी रेत आदि रखी हुई है अथवा कौन मैं अकेला ही ये चीजें ले जा रहा हूँ कई लोग तो इससे भी ज्यादा उठा ले जाते हैं अथवा कमेटी वाले तो कितना ही पैसा यूँ ही जेब में रख लेते हैं, सौ रुपये के स्थान पर पाँच सौ का बिल बना देते हैं। उनकी अपेक्षा तो मैं थोड़ा-सा ही उठा रहा हूँ आदि-आदि विचार करके चीज उठा लाते हैं। मंदिर की चीज उठाने से मंदिर में तो कुछ भी कमी नहीं आती है न आयेगी, क्योंकि वहाँ तो लाखों का दान देने वाले और मिल जायेंगे लेकिन आपके (उठाने वाले के) घर में धन का नाश अवश्य हो जायेगा। उससे (जितना उठाया है) कई गुना धन आपके घर से कहाँ चला जायेगा। आप कुछ भी नहीं समझ पायेंगे। **दूसरी बात** आप सोचें इतनी सी चीज उठा ले जाने से आपके घर में कितना पैसा बच जायेगा, यदि 10-15 रुपये बच भी गये तो उनसे आपके घर का कितना खर्चा निकल सकता है। इसी प्रकार कभी अचानक रुई, घी, लौंग, इलाइची आदि की आवश्यकता पड़ी तो झट से मंदिर से उठा लाए। यह बात अलग है कि जो द्रव्य अभी चढ़ाया नहीं है, चढ़ाने के लिए रखा गया है उसको उठाकर मंदिर में चढ़ा देना, मंदिर में द्रव्य की थाली लगी हो उस द्रव्य से पूजा करना तो उचित है, क्योंकि वह द्रव्य चढ़ाने के उद्देश्य से ही रखा गया है। मंदिर के द्रव्य से पूजा करते समय भी अपनी शक्ति के अनुसार गुप्त भंडार में पैसा डाल ही देते हैं लेकिन उस द्रव्य को अपने घर में ही ले आना, शरीर के लिए या भोगों में उपयोग करना तो उचित नहीं कहा जा सकता है। वह रेत, ईंटें, कंकरीट आदि चढ़ा हुआ तो नहीं है लेकिन मंदिर आदि बनाने के लिए दान दिया गया है इसलिए वह भी निर्माल्य की कोटि में ही आता है।

इसी प्रकार कई लोग कमेटी के सदस्य होते हैं। कमेटी के सदस्यों को अपनी-अपनी योग्यता अनुसार काम सौंपे जाते हैं। कई लोगों को पैसे का, खरीदी का तथा सामान तैयार करने का काम सौंपा जाता है। जिनको पैसे का काम दिया जाता है वे 25 रुपये का सामान लाते हैं और बिल 75 या सौ रुपये का बनाते हैं। कोई 75 रुपये का सामान लाते हैं और 75 का ही बिल बनाते हैं लेकिन उस सामान में से आधा/चौथाई सामान अपने घर ले जाते हैं। खाने की चीज हो तो स्वयं खाते हैं और अपने बच्चों-मित्रों, रिश्तेदारों को

खिला देते हैं। उन्हें कोई ऐसा करना पाप बतावे तो वे कहते हैं कि देखो वे वर्षों से कमेटी के सदस्य हैं, पचासों वर्षों से मंदिर का पैसा खा रहे हैं, उनके तो आज तक दरिद्रता नहीं आई उनके तो धन का नाश नहीं हुआ। उनके तो घर में किसी प्रकार का दु:ख नहीं आया फिर इतना-सा द्रव्य खाने में हमें दु:ख क्यों मिलेगा, हमारे धन का नाश क्यों होगा...? वर्तमान में तो कोई-कोई कसाई या जुआरी आदि व्यसनी लोग भी सुखी, धनवान और हर तरफ से सम्पन्न नजर आते हैं। इसका अर्थ जीवों की हत्या करने के कारण/पाप के फल में वे सुखी हैं ऐसा तो नहीं कहा जा सकता है इसी प्रकार निर्माल्य द्रव्य खाने वाले सेठ साहूकार धनाढ्य सुखसम्पन्न लोग भले ही पूर्वोपार्जित पुण्य के उदय से सुखी हों लेकिन भविष्य में तो वे उसके फल में कष्ट ही भोगेंगे। ऐसी ही एक कथा है –

एक निर्माल्यभोगी धन्यकुमार मरकर नरक में गया। वहाँ उसने सागरों पर्यन्त दु:सह दु:खों को भोगा। फिर भी उसका पाप समाप्त नहीं हुआ। वह नरक से आकर अनेक भवों को धारण करता हुआ यहाँ एक सेठानी के गर्भ में आया। गर्भ में आते ही पूर्वोपार्जित पाप के उदय से उसके पिता की मृत्यु हो गई। घर की करोड़ों की सम्पत्ति चन्द दिनों में कहाँ विलुप्त हो गई, पता ही नहीं चला। उसके जन्म लेने के पहले ही उसके घर में भोजन व्यवस्था तक नहीं बची थी। उसकी माँ खेतों में काम करके बड़ी मुश्किल से अपना एवं अपने पुत्र का भरण-पोषण करती थी। कुछ बड़ा होने पर एक दिन वह अपने मित्रों के साथ एक सेठ के खेत पर काम करने चला गया। सेठ ने सोचा यह मेरे सेठ का पुत्र है। इसके पिता के यहाँ तो मैंने बहुत काम किया था। उन्हीं के यहाँ काम करके मैं आज धनाढ्य बन गया हूँ अत: उस उपकार को चुकाने के लिए मैं इसे चने के स्थान पर पाँच हीरे दे देता हूँ ताकि यह एवं इसकी माँ शान्ति से अपना जीवनयापन कर सके। यही सोचकर उसने उसको पाँच हीरे दे दिये। जैसे ही उसने उस बालक के हाथ में हीरे रखे वे हीरे अंगारे बन गये। वह बालक हीरों को फेंकते हुए कहता है, सेठजी! मैंने ऐसा क्या अपराध किया है जो आपने सबको तो चने दिये और मुझे जलाने के लिए अंगारे दे दिये। सेठ उसकी भाग्यहीनता देखता रह गया फिर भी उसने दया करके अन्य सबकी अपेक्षा सबसे दूने चने उस बालक को दिये। बालक ने जिस वस्त्र में

चने लिये थे उसमें छेद थे इसलिए जब तक वह घर पहुँचा तब तक उस कपड़े में से एक-एक चना गिरते-गिरते आधे रह गये अर्थात् आधे चने रास्ते में गिर गये। आखिर उसने एक दिन अपने घर पर स्वयं की हठ के कारण माँ के द्वारा बनाई गई खीर मुनिराज को आहार में दी तब उसका वह पाप नष्ट हुआ। इसी प्रकार किसी पाप का फल तत्क्षण या उसी भव में भी मिल सकता है इसलिए आप उपर्युक्त उदाहरण से साहूकारों को सुखी देखकर निश्चिंतता से निर्माल्य द्रव्य को गृहण नहीं करें। इसका फल वर्तमान में मिले या भविष्य में दु:खप्रद ही मिलता है और वह फल पाप करने वाले को भी भोगना पड़ता है। भूखे रहकर मर जाना भी इतना दु:खदायी और पापप्रद नहीं है जितना निर्माल्य द्रव्य खाकर जीवित रहना दु:खदायक है। अत: आप थोड़े से लोभ में अथवा अज्ञानता से निर्माल्य द्रव्य का उपयोग करके अपना भव नहीं बिगाड़ें।

कई लोगों का तर्क रहता है कि जो द्रव्य भगवान के सामने मंत्र बोलकर स्वाहा करते हुए चढ़ा दिया जाता है वही निर्माल्य होता है तथा जो इस विधि से नहीं चढ़ाकर मात्र भेंट किया जाता है वह निर्माल्य नहीं होता है उसे तो उठाकर उपयोग कर सकते हैं। जैसे किसी साधु के सामने किसी ने श्रीफल भेंट किया तो हम उसे उठाकर फोड़कर खा सकते हैं। अथवा किसी ने सोने-चाँदी का श्रीफल, लौंग, बादाम आदि भेंट किये हैं तो हम उन्हें ले जाकर अपने शो केश में रखकर घर की सजावट कर सकते हैं, इसमें कोई बाधा नहीं है क्योंकि इतनी मूल्यवान वस्तुओं का माली के घर में महत्त्व ही क्या है। वह उनका उपयोग ही क्या कर सकता है आदि...। उनको सोचना चाहिए कि मात्र मंत्रादि बोलकर और स्वाहा कहते हुए चढ़ाया गया द्रव्य ही निर्माल्य नहीं होता है और ऐसा माना जावेगा तो मेरे अनुमान से मंदिर की एक प्रतिशत सामग्री भी निर्माल्य नहीं होगी। क्योंकि अष्ट द्रव्य को छोड़कर और कोई भी वस्तु अर्थात् शास्त्र, बर्तन, मकान-दुकान, घण्टा, अष्ट मंगल द्रव्य, टेबल, चौकी, पाटा, चटाइयाँ तथा मंदिर की व्यवस्था के लिए भेंट की गई जमीन-खेत, रुपया-पैसा, सोना-चाँदी आदि कुछ भी निर्माल्य नहीं होंगे। ऐसा होने पर तो निर्माल्य द्रव्य को खाने वाले कोई नहीं रहेंगे। क्योंकि भगवान के सामने स्वाहा बोलकर चढ़ाया गया पाव आधा किलो चावल 10-15 बादाम आदि को तो शायद ही कोई सज्जन व्यक्ति उठाकर नहीं ले जाता होगा। उसे तो माली ही ले जाता है तथा

उपर्युक्त उदाहरण में भी धन्यकुमार के जीव ने कोई भगवान के सामने चढ़ाया गया अष्टद्रव्य नहीं खाया था अपितु भगवान की पूजा के लिए मंदिर में रखे गए द्रव्य का ही उपभोग किया था, भगवान की पूजा के लिए सेठ के द्वारा दी गई मोहरों को खाया था। वे मोहरें चढ़ी हुई नहीं थीं लेकिन भगवान की पूजा के लिए दी हुई थीं इसलिए उसे इतना पाप /दु:ख भोगना पड़ा। अत: आप कभी निर्माल्य द्रव्य का भोग नहीं करें। अपने काम में नहीं लें।

निर्माल्य द्रव्य दो प्रकार का होता है –

(1) नैवेद्य निर्माल्य : देव-शास्त्र-गुरु की पूजा-अर्चना के समय समर्पित किया हुआ अष्टद्रव्य। यह चढ़ाने के बाद किसी भी प्रकार से मंदिर अथवा समाज के उपयोग में नहीं लिया जाता है। उक्त अष्ट द्रव्य मंदिर की सेवा रखवाली करने वाला माली ले लेता है। जहाँ माली आदि की व्यवस्था नहीं होती है वहाँ पशु-पक्षियों को डाल दिया जाता है अथवा अग्नि आदि में जला दिया जाता है।

(2) अनैवेद्य निर्माल्य : देव-शास्त्र-गुरु को निमित्त बनाकर आहार, औषधि, उपकरण, वसतिका, शास्त्र आदि दानों के रूप में अपनी वस्तु का यथायोग्य आवश्यकतानुसार दे देना, घोषित कर देना अर्थात् बोली आदि के माध्यम से घोषणा कर देना अथवा चल-अचल सम्पत्ति मंदिर के लिए समर्पित कर देना अनैवेद्य निर्माल्य कहा जाता है। गुप्त भण्डार का पैसा भी इसी में आता है।

कई लोगों को जब सामूहिक कार्यक्रमों में बाहर से आने वाले अतिथियों के लिए भोजन की व्यवस्था सौंपी जाती है वे लोग तो स्वयं भी वहीं भोजन करते हैं। अपने बच्चों मित्रों परिचितों को भी बुला-बुलाकर खिलाते हैं। उन खाने वालों एवं खिलाने वालों का विचार रहता है कि अपनी ही तो भोजनशाला है, अपन लोगों ने ही तो भोजन के लिए चन्दा (पैसा) दिया है फिर हमें यहाँ खाने में पाप क्यों लगेगा? यह सत्य है कि हमारा ही पैसा है लेकिन उसको हम आने वाले अतिथियों के लिए दे चुके हैं इसलिए वह दान का ही कहलाएगा। अत: थोड़े से के लिए निर्माल्य द्रव्य का भक्षण करके, उपयोग करके पाप न कमाएँ।

कई लोग पञ्च कल्याणक, विधान, वेदी प्रतिष्ठा आदि के समय बोली बोल देते हैं। उसका पैसा कोई-कोई तो वर्षों तक नहीं चुकाता है। कभी व्यवस्थापक यदि पैसे लेने आते हैं तो वह कहता है कि अमुक ने भी तो अभी तक पैसे नहीं दिये हैं। पहले उनसे लाओ फिर मैं दूँगा या उसने भी अभी तक पैसे नहीं दिये। मैं क्यों दूँ? आदि-आदि बहाना बनाकर पैसे नहीं देते हैं। भले ही आप कोई भी बहाना बनाकर पैसे नहीं दें, निर्माल्य द्रव्य खाने का पाप तो अवश्य लगेगा।

कई लोग मंदिर की दुकान-मकान आदि किराये से लेते हैं। पचासों वर्षों से उनके पास वह दुकान रहती है। वे उस दुकान का किराया पचास वर्ष के बाद भी उतना ही या थोड़ा ज्यादा चुकाते हैं। बाजार में अन्य दुकानों का किराया जहाँ पाँच हजार तक हो जाता है वहाँ वे सौ-पचास रुपये भी किराये का नहीं देते हैं। वह भी प्रति महीने नहीं चुकाते हैं, कभी 8 महीने में तो कभी साल-डेढ़ साल तक किराया नहीं चुकाते हैं। खाली करने के लिए कहने पर खाली भी नहीं करते हैं, चाहे मंदिर का जीर्णोद्धार होना है, धर्मशाला, संत निवास आदि बनना हो तो भी उन्हें कोई विचार नहीं आता है, ऐसा करने वाले को क्या निर्माल्य द्रव्य खाने का पाप नहीं लगता है। हमें मंदिर में दान देना चाहिए या मंदिर की वस्तुओं का उपयोग करना चाहिए? इसी प्रकार कई स्थानों पर मंदिर के खेत होते हैं, उनमें भी फसल में से हिस्सा खा जाना या ईमानदारी से बँटवारा नहीं करना भी एक प्रकार से निर्माल्य सेवन ही है।

कभी मंदिर की चीज बिकती है, उसको सस्ते दाम में खरीदने की कोशिश करना, अपने या अपने मित्र आदि के हाथ में यह काम है तो छल करके कम दाम में ले लेना भी एक प्रकार से निर्माल्य द्रव्य खाना ही है। मंदिर के पैसों को उधार लेते समय भी जितना ब्याज देना चाहिए, उतना नहीं देना अथवा बिल्कुल ही ब्याज नहीं देना भी निर्माल्य का अंश खाना ही है।

कई लोगों के तो लोभ कषाय की सीमा ही नहीं रहती है। वे पंचकल्याणक आदि बड़े-बड़े कार्यक्रमों में बोली तो ले लेते हैं लेकिन 5-10 वर्ष तक भी और कई लोग 15-20-25 वर्ष तक भी पैसा नहीं चुकाते हैं। गहराई से विचार किया जाय तो यदि किसी ने पाँच वर्ष तक एक हजार रुपये नहीं चुकाये, बैंक

में रख दें तो 2000 हो जाते हैं और यदि उन्हें व्यापार में लगा दिये जाँय तो 20-25 हजार से भी ज्यादा हो सकते हैं। इसका अर्थ हमने 5 वर्ष पैसा नहीं चुका कर दान का कितना पैसा खा लिया, हमें उसका क्या फल मिलेगा? सोचें और दान का पैसा कभी घर में नहीं रखें। **दूसरी बात** इसी बीच में यदि आपकी आयु खतम हो गई तो आपकी पूरी सम्पत्ति तो यहीं रह जायेगी। लेकिन दान का पैसा, मंदिर का कर्जा तो आपके साथ अवश्य जायेगा। वह भविष्य में कितना गुणा होकर फलेगा, कुछ कहा नहीं जा सकता है अत: दान बोलने के साथ-ही-साथ रकम चुका दें। ताकि अगले भवों में मजबूर होकर कई गुणा नहीं चुकाना पड़े तथा दरिद्रता के गर्त में गिरकर वेदनाएँ भी नहीं भोगनी पड़ें।

मंदिर का पैसा रखने का काम हमारे हस्ते है तो उस पैसे को अपने व्यापार आदि में लगाकर धन अर्जन करते रहना भी निर्माल्य का ही अंश है।

सावधानी :

(1) यदि 50-100 वर्ष से भी मंदिर की दुकान आपके पास है तो भी आप बाजार भाव से स्वयं ही किराया बढ़ा दें।

(2) आपको दुकान-मकान की आवश्यकता नहीं है तो सहज रूप से खाली कर दें, यह बहुत बड़े पाप से बचने का सरल उपाय है।

(3) मंदिर (धार्मिक स्थल) में पद नहीं लें लेकिन तन-मन से सेवा करने से नहीं चूकें। आपको बहुत आनन्द आयेगा।

(4) यदि आप किस्त में पैसा चुकाना चाहते हैं तो बोली लेते (दान बोलते) समय व्यवस्थापकों को पहले सूचित कर दें।

(5) यदि किसी परिस्थितिवश दान का पैसा नहीं दे पा रहे हैं तो अपनी प्रिय चीज का त्याग कर दें ताकि पैसा जल्दी दिया जा सके।

(6) दान के पैसे एक-दो दिन में भी देने का विचार है तो भी पुत्र आदि को बता दें। देने के लिए कह दें ताकि पैसा देने के पहले कुछ हो जावे तो दान के पैसे आपके साथ नहीं जावें।

(7) बोली लेने का विचार हो तो पैसे लेकर जावें। यदि अचानक बोली ली है तो पैसे देने के बाद रोटी खावें अथवा पैसे देने तक कुछ नियम अवश्य लें।

(8) यदि दूसरे गाँव में बोली ली है या कोई दान दिया है तो घर आते ही पैसा भेजें, उसके बाद दूसरा काम करें। यदि एक-दो दिन लेट हो जावे तो पर्याप्त मात्रा में ब्याज देवें।

(9) दादा-परदादा ने जमीन-जायदाद दान में दी है तो उसका लोभ के वश हो उपयोग नहीं करें। हड़पने की कोशिश नहीं करें।

(10) यदि पूर्व में बोली आदि का पैसा देर से चुकाया है या निर्माल्य द्रव्य खाया है तो उसका प्रायश्चित्त अवश्य लें।

मीटिंग मंदिर में नहीं करें :

कई लोग मंदिर में भगवान के सामने पंचायत की मीटिंग करते हैं। पंचायत में अनेक विपरीत विचार वाले लोग आते हैं। एक कहावत है-''पाँच पंच बैठे तो लड़े बिना नहीं उठते हैं''। वही क्रिया यहाँ होती है। सब अपने-अपने विचार रखते हैं। जहाँ एक-दूसरे के विचार नहीं मिलते हैं वहाँ आपस में टक्कर होती है। विचारों की टक्कर होने पर क्रोध बढ़ता है। क्रोध के वश होकर जो मुँह में आया बोलने लगते हैं। कभी-कभी तो पंचायत में हाथापाई भी हो जाती है, वाग्युद्ध होने लगता है। कभी मार-पीट तक हो जाती हे। मीटिंग करने वाले सोचें क्या भगवान के सामने इस प्रकार के उल्टे-सीधे काम करना उचित है? क्या मीटिंग अन्य स्थान पर नहीं की जा सकती है? जिनेन्द्र भगवान का मंदिर तो केवल धर्मध्यान, पूजा, स्वाध्याय आदिक धार्मिक कार्यों के लिए होता है। इसीलिए मीटिंग/पंचायत करने का स्थान मंदिर कभी नहीं रखें। धर्म-शाला आदि अन्य स्थान रखें ताकि भगवान के सामने यद्वा-तद्वा प्रवृत्ति नहीं करनी पड़े। यदि भगवान के सामने मीटिंग होती है तो आप उस मीटिंग में नहीं जावें, क्योंकि कषायावेश में भले ही सही एवं न्याय की बात भी बोली जाती है तो भी विवेक नहीं रह पाता है। कषाय और विवेक में रात-दिन के समान विरोध है अर्थात् जहाँ कषाय होती है वहाँ विवेक नहीं होता और जहाँ विवेक होता है वहाँ कषायें नहीं होती हैं इसलिए ऐसा निमित्त नहीं बनायें कि भगवान के सामने अनर्गल प्रवृत्ति करके पाप बाँधना पड़े।

पाठशाला में :

कई स्थानों पर पाठशालाएँ चलती हैं। बच्चों में संस्कार के लिए

पाठशाला अति आवश्यक है। पाठशाला में बच्चों को हर रविवार अथवा विशेष कार्यक्रमों में अर्थात् शिविर आदि लगाकर नाश्ता करवाया जाता है। नाश्ते के समय अधिकतर लोग हलवाई के यहाँ से या होटल से कचौड़ी, जलेबी आदि खरीद लाते हैं और बच्चों को बाँट देते हैं। कोई हलवाई या होटल वाले को बुलाकर धर्मशाला में कचौरी आदि बनवा लेते हैं लेकिन सामान तो पूरा हलवाई ही लेकर आता है इसलिए होटल में बने और धर्मशाला में बने भोजन में कोई अन्तर नहीं रहता है। दोनों संस्कार विहीन बनाने वाले ही होते हैं। कई लोग बच्चों के 'बर्थडे' आदि में पाठशाला के बच्चों को टॉफी, बिस्किट आदि बाँट देते हैं जिनको शुद्ध शाकाहारी भी नहीं कहा जा सकता है, क्योंकि उनमें भी अण्डे आदि का उपयोग किया जाता है। क्या ऐसा अभक्ष्य नाश्ता पाठशाला में बाँट कर हम बच्चों को संस्कारित कर सकते हैं? बच्चों में धर्म के बीज बो सकते हैं? क्या ऐसा नाश्ता जहाँ दिया जाता है उसे धार्मिक पाठशाला कहा जा सकता है नहीं, कदापि नहीं कहा जा सकता है, क्योंकि भोजन का शरीर और मन पर गहरा प्रभाव पड़ता है। ऐसा करने से तो कभी-कभी संस्कारित बच्चे भी होटल की चीज खाना सीख जाते हैं, उन्हें भी टॉफी आदि माँसाहार मिश्रित, स्वास्थ्य के लिए हानिकारक चीजें खाने का शौक लग जाता है। वे भी कुसंस्कारों से ग्रसित हो जाते हैं। कई माताएँ अपने बच्चों को बाजार के बिस्किट-टॉफी आदि नहीं खिलाती हैं, कभी होटल की वस्तुओं का स्वाद नहीं चखाती हैं उनके बच्चे जब पाठशाला में आकर होटल का बना खाना सीख जाते हैं, टॉफी खाने लग जाते हैं तब उस माँ पर क्या बीतती होगी? क्या वह माँ आगे कभी अपने बच्चों को पाठशाला भेज सकती है? नहीं, मेरे विचार से भेजना भी नहीं चाहिए, क्योंकि ऐसी पाठशाला की अपेक्षा तो वह अपने घर पर भी बच्चों को ज्यादा संस्कारित कर सकती है। अत: आप पाठशाला में कभी-भी बाजार/हलवाई या होटल वाले के यहाँ से मिठाई नमकीन आदि लाकर नाश्ता नहीं करावें (चाहे वह जैन की होटल ही क्यों न हो)। आप अपने घर में बच्चों को नाश्ता करावें। यदि आपके गाँव (कॉलोनी) में 50 घर हैं तो वर्ष में मात्र एक बार आपको नाश्ता कराने का अवसर मिलेगा या नाश्ता कराना पड़ेगा। आपके घर में जैसा भी हो प्रेमपूर्वक निश्छल दिल से बच्चों को खिलावें।

अपने हाथ से परोसें, आपको बड़ा आनन्द आयेगा। इस प्रकार नाश्ता कराने से आपके बच्चे पाठशाला नहीं जाते होंगे तो भी उन बच्चों को देखकर पाठशाला जाने लगेंगे। और भी आपको अनेक लाभ होंगे जिन्हें आप भविष्य में स्वयं अनुभव करेंगे। अत: आप अपने घर का बना नाश्ता करावें। यदि आप के घर में घी की व्यवस्था नहीं है तो खोपरे (नारियल), मूंगफली आदि की बर्फी बना लें। परवल (मुरमुरा) तलकर नमकीन बना लें। लेकिन अपने घर पर ही नाश्ता तैयार करें। बाजार का अभक्ष्य नाश्ता नहीं करावें। बच्चों को संस्कारित करने के लिए यह भी एक अति आवश्यक विवेक है। यदि यह विवेक नहीं रखा गया तो हमारे बच्चों को संस्कारित होने के सब साधन मिलने पर भी कुसंस्कारों से ही गृसित होना पड़ेगा। ऐसा करने से अर्थात् अभक्ष्य नाश्ता करने पर भी संभव है आपके बच्चे विद्वान् बन जावें लेकिन संस्कारवान, चारित्रवान एवं धर्मात्मा तो नहीं बन सकेंगे। इसलिए पाठशाला चलाते समय विवेक रखें, बच्चों का जीवन उन्नत बनावें। उन्हें संस्कारित करें।

दीपक जलावें तो :

मंदिर में विधान, महापूजन, अखण्ड पाठ आदि के समय दीपक प्रप्तवलित किया जाता है। उस समय भी यह सोचकर कि एक दिन अथवा दो-चार दिन की तो बात ही है या कुछ सोचे बिना ही दीपक जला लेते हैं उस दीपक में भी कीड़े आकर मरते हैं। यदि यह पूजन-विधान का समय आसोज कार्तिक का या दशलक्षण का हो तो फिर जीवों की गणना ही नहीं की जा सकती है। कभी-कभी तो पाण्डाल में लाइटिंग के कारण इतने कीड़े आ जाते हैं कि जिन्हें अञ्जलि से भरकर उठाना पड़ता है। अथवा वहाँ जमीन तो दिखती ही नहीं है केवल कीड़े ही दिखते हैं। उन कीड़ों के मरने से इतनी बदबू आती है कि नाक ही सड़ने लगे। ऐसे समय में पाण्डाल में लाइटिंग के स्थान पर झूमर, रंग-बिरंगी कागज की फर्रियों आदि से सजावट करके हिंसा से बचा जा सकता है।

अखण्ड ज्योति का दीपक जलाते समय भी इसी प्रकार सावधानी रखनी चाहिए।

चातुर्मास आदि के समय जब दीपक/लाइट के कारण जीव ज्यादा उत्पन्न होते हैं, घर में भी दीपक-चिमनी आदि के स्थान पर लालटेन आदि बन्द दीपक

के प्रकाश में भी काम चलाया जा सकता है।

कहीं-कहीं भगवान के कल्याणकों के समय अर्थात् महावीर जयन्ती, निर्वाण महोत्सव आदि के समय 108-108 दीपकों से आरती की जाती है। कभी-कभी कार्यक्रमों के उद्घाटन में भी कहीं 51 तो कहीं 60-70 आदि दीपक जलाये जाते हैं। दीपक जलाकर आरती/उद्घाटन करना तो कोई बुरा नहीं है लेकिन उन दीपकों को ऐसे ही छोड़ देना तो हिंसा का कारण ही है। अत: ऐसे समय में दीपक का काम पूरा होते ही तत्काल उसे व्यवस्थित कर दें अर्थात् दीपकों को इकट्ठा करके धूल आदि डाल दें ताकि जीव आकर उनमें नहीं चिपकें।

दीपावली का त्यौहार लगभग भारत के सब लोग मनाते हैं। जैन लोग भगवान के निर्वाण महोत्सव के रूप में दीपावली मनाते हैं और हिन्दू लोग रामचन्द्र जी जब वनवास का समय पूरा कर अयोध्या लौटे थे उसी की खुशियों में महोत्सव मनाते हैं। दोनों के दीपावली मनाने की विधि एक जैसी है। सब इस त्यौहार पर मिष्टान्न बनाते हैं और दीपक जलाकर अमावस्या की अंधेरी रात में भी प्रकाश का अनुभव करते हैं। दीपक जलाना कोई खराब काम नहीं है लेकिन दीपक जलाने में विवेक खो देना पाप कार्य है। दीपावली पर कोई 11,15,21,25 आदि संख्या में दीपक जलाते हैं। दीपक जलाकर प्रत्येक कमरे में, मकान के बाहर, छत पर, आस-पड़ोस में तथा मंदिर में दीपक रखे जाते है। वहाँ पर भी इतने ही कीड़े आकर मरते हैं। दीपक जलाते समय यदि थोड़ा विवेक रखा जावे अर्थात् दीपक पर चिमनी, जाली आदि लगा दी जाय तो दीपक की लौ में जलकर, दीपक के घी में गिरकर तथा घी की चिकनाई में चिपककर मरने वाले जीवों की रक्षा की जा सकती है। हिंसा से बचा जा सकता है। यह भी नहीं सोचना चाहिए कि इतने दीपक जलाते हैं कितनी जालियाँ बनाते रहेंगे, क्योंकि अहिंसा धर्म की परिपालना के फल के सामने इतना सा पैसा और इतनी सी मेहनत का महत्त्व ही क्या है? दूसरी बात एक वर्ष खरीदी हुई जालियों को सम्हाल कर रख ली जाँय तो वर्षों तक भी उनके माध्यम से जीवों की रक्षा की जा सकती है।

कोई दयालु व्यक्ति यदि दीपावली के समय छोटी-छोटी अर्थात् दीपक के अनुपात वाली जालियाँ बनवाकर बेचे अथवा दान में भी देवे तो भी लोगों

को अहिंसा धर्म का पालन करने में सहयोग मिल सकता है।

मंदिर में 30-40 दीपक एक साथ पाट (भगवान के सामने रखे पाटे) पर इकट्ठे हो जाते हैं। इसलिए उसके अनुपात वाली जाली बनाई जा सकती है। मंदिर में जितनी वेदियाँ हों, जितनी वेदियों पर दीपक जलते हों उतनी जालियों का दान देकर सातिशय पुण्य कमाया जा सकता है। जालियों का दान भी बहुत बड़ा दान है।

यदि आप बिना पैसे पुण्य कमाना चाहते हैं तो रात्रि में 10-11 बजे जब मंदिर बन्द होता है अथवा सुबह मंदिर के सभी दीपकों को इकट्ठा करके उनके ऊपर धूल-राख आदि डाल दें ताकि बाद में उनकी चिकनाई में जीव आकर न चिपकें।

दीपक किसका जलावें :

कई लोग सोचते हैं कि घी का दीपक जलाने से उसमें अनेक जीव आकर गिर कर मरते हैं। इस हिंसा से बचने के लिए लाइट का दीपक जला देते हैं। लाइट का दीपक जलाते समय उनके मन में यह विचार भी उत्पन्न नहीं होता है कि घी के दीपक में तो शायद सौ पचास जीव आकर गिरेंगे, उनको भी चिमनी आदि लगाकर बचाया जा सकता है लेकिन लाइट के बनते समय जितनी हिंसा होती है उस हिंसा के सामने तो दीपक में हिंसा का एक अंश भी नहीं होता है। **दूसरी बात,** जिस मौसम में दीपक में विशेष जाति के जीव आते हैं उस मौसम में तो लाइट के दीपक में ही क्यों, लाइट आदि सामान्य प्रकाश में भी हजारों कीड़े आते हैं उनको तो चिमनी आदि से भी नहीं बचाया जा सकता है। कई लोग मंदिर में हेलोजन आदि बड़ी-बड़ी लाइटें जलाते हैं। उनमें सैकड़ों-हजारों कीड़े उत्पन्न होते हैं जिन्हें छिपकली खाती रहती है और वे खड़े-खड़े देखते रहते हैं, उसी लाइट में स्वाध्याय करते रहते हैं, उसी लाइट के प्रकाश में भगवान के दर्शन करते हुए अपने आप को धन्य मानते हैं। उनके पैरों से कीड़े कुचलते जाते हैं, वे वहीं कुचले हुए मरे, अधमरे, तड़फते कीड़ों को देखकर भी उन्हें दया नहीं आती, यही आश्चर्य है। उन्हें धर्मात्मा की श्रेणी में कैसे लिया जा सकता है?

एक गाँव के मंदिर में श्रावकों ने दीपक जलाना प्रारम्भ किया तो एक

समझदार महिला ने उस परम्परा को नष्ट करने के लिए एक महीने तक दीपक बुझाया अर्थात् लोग दीपक जलाने मंदिर जाते थे और वह दीपक बुझाने मंदिर जाती थी। जब मैंने यह बात सुनी तो मुझे लगा क्या सच में वह महिला धर्मात्मा थी, क्या वह भगवान की आज्ञा-पालन करने वाली थी या पक्ष व्यामोह से ग्रसित थी। यदि उसे भगवान की आज्ञा पालन करने में रुचि थी, उसे भगवान के द्वारा उपदेशित अहिंसा धर्म से प्रेम था तो वह दीपक बुझाने के स्थान पर मंदिर की लाइट फीटिंग तोड़ती, मंदिर के पंखे खोलकर फेंक देती लेकिन उसने यह नहीं किया इसका अर्थ....। क्योंकि दीपक की अपेक्षा लाइट-पंखे में ज्यादा हिंसा होती है।

कई लोग बाजार से घी का पैकेट लाकर मंदिर तक में दीपक जला देते हैं। मंदिर के दीपक में डाल देते हैं। ऐसे घी का दीपक जलाने की अपेक्षा तो दीपक नहीं जलाना ही अच्छा है, क्योंकि पैकेट के घी में चर्बी आदि अशुद्ध चीजों की मिलावट होती है। कभी-कभी शुद्ध देसी घी के नाम से घी खरीदने पर भी उसमें डालडा-अशुद्ध घी मिला होता है, क्योंकि अच्छे-अच्छे धर्मात्मा-पापभीरु लोग भी पैसे के लोभ में बिना मिलावट का घी बेचने के लिए अपने आपको तैयार नहीं कर पाते हैं अर्थात् घी में मिलावट कर ही देते हैं। इसलिए यदि दीपक जलाना है तो अपने हाथ से निकला अथवा किसी विश्वासपात्र के यहाँ से शुद्ध घी मिल जावे तो दीपक जलाना उचित है अन्यथा सोच समझकर कार्य करना चाहिए।

कई लोग सोचते हैं कि शुद्ध घी नहीं मिलता है इसलिए तेल का दीपक जलाना ज्यादा उचित है लेकिन ऐसा करना उचित नहीं है क्योंकि घी के दीपक एवं तेल के दीपक में जमीन-आसमान का अन्तर है। घी के दीपक से ऑक्सीजन उत्पन्न होती है और तेल के दीपक से कॉर्बनडाईऑक्साइड उत्पन्न होती है। घी का धुआँ आँख, नाक, गले आदि को ठीक करने वाला है इसीलिए तो घी के दीपक की लौ से ही आँखों की ज्योति बढ़ाने के लिए अंजन (काजल) बनाया जाता है। जब अकंपनादि 700 मुनिराज पर उपसर्ग हुआ, जब राजा बलि ने अनेक दुर्गन्धित पदार्थों को जला कर कष्ट दिया था। उस धुएँ से मुनिराज के गले रुन्ध गये थे, आँखें धुएँ से भर गई थीं, नाक में भी धुआँ भरने से श्वासनली

में सूजन आदि आ गई थी। उस समय भी श्रावकों ने घी की आहुतियाँ देकर ही उनके कष्ट को दूर किया था। **दूसरी बात,** अच्छे उत्तम मांगलिक कार्यों के समय भी घी का दीपक जलाने की ही परम्परा है। पुराने जमाने में जब राजा-महाराजा युद्ध में विजय प्राप्त करके लौटते थे तब भी यद्यपि उनके भण्डार में अनेक रत्न दीपक होते थे तो भी उनसे आरती न उतार कर घी के दीपक से ही आरती उतारी जाती थी। आज भी मंगल कार्यों में व्यक्ति कितना ही गरीब हो, कितने ही हीन कुल का हो, दीपक तो घी का ही जलाता है। अपने घर में भी चाहे एक छोटा-सा, अपने इष्ट देवता के सामने भी कोई दीपक जलाता है तो वह घी का ही जलाता है। बड़े-बड़े हवन के कार्यों में भी चाहे 100-150 किलो घी की आवश्यकता पड़े, घी ही लाया जाता है, घी की आहुतियाँ दी जाती हैं, चाहे वह पूर्ण रूप से शुद्ध घी नहीं ला पावे तो भी लाया तो शुद्ध घी ही जाता है। इसलिए आप तेल का दीपक कभी नहीं जलावें मंदिर में तो शुद्ध घी का ही दीपक जलावें। यदि शुद्ध घी नहीं मिल पावे तो दीपक नहीं जलावें, अपनी श्रद्धा के दीपक से ही भगवान की आरती कर लें।

धूप चढ़ावें तो :

कई मंदिरों में पूजा करते समय धूप को अग्नि में चढ़ाने की परम्परा है तो कई मंदिरों में धूप थाली में ही चढ़ा दी जाती है। धूप किसी में भी चढ़ावें चाहे अग्नि में या थाली में, विवेक दोनों जगह आवश्यक है। कई लोग बाजार से धूप लाकर अग्नि में चढ़ा देते हैं। लकड़ी के बुरादे में वैसे ही बहुत जीव उत्पन्न होते हैं और अगर वह बहुत दिनों तक रखा रहे तो उसमें उत्पन्न होने वाले जीवों की गणना ही नहीं की जा सकती है। बाजार में धूप कितने दिन की रखी रहती है उसकी कोई सीमा नहीं रहती है। कई लोग धूप तो ताजा लाते हैं परन्तु बहुत दिनों तक चलाते रहते हैं। कई लोग धूप चढ़ाकर धूपदान को वहीं ऐसे ही छोड़कर आ जाते हैं। उस धूपदान के अंगारों के ऊपर राख आ जाती है इसलिए ऐसा लगता है कि उसमें आग नहीं है लेकिन राख के नीचे तो अग्नि रहती है। जब तक माली उसको ग्यारह बारह बजे तक उठा नहीं लेता है तब तक उसमें जीव गिर-गिरकर मरते हैं। कभी-कभी बड़े-बड़े विधान आदि में हवन का आयोजन होता है। आजकल यद्यपि काफी विवेक से धूप

आदि हवन की सामग्री तैयार की जाती है फिर भी विधानाचार्य/प्रतिष्ठाचार्य अथवा हवन संचालक/हवनकर्त्ता इस ओर ध्यान नहीं दे पाते हैं। हवन के बाद हवन कुण्ड सुबह से लेकर शाम और दूसरे दिन तक भी रखे रहते हैं। एक दिन एक व्यक्ति ने अपने अन्दर की वेदना सुनाते हुए कहा-''माताजी! हमारे यहाँ एक बहुत बड़ा विधान हुआ था। विधान के अन्त में हवन हुआ। उसमें अनेक लोगों ने उत्साह से भाग लिया। सब लोग हवन करके चले गये। जब हमने हवन की राख उठाई तो उसमें एक बड़ी सी छिपकली का भुना हुआ शव निकला। उसे देखकर मेरा तो कलेजा काँप गया। उसकी बात सुनकर मैंने सोचा-सच है हवनकुण्ड में इतनी अग्नि भी नहीं होती है कि जीव उसमें गिरने पर भस्मीभूत हो जावे और इतनी कम अग्नि भी नहीं होती है कि उसमें गिरा हुआ जीव जीवित बच जावे। छिपकली इतनी बड़ी थी इसलिए उसका शव बच गया। आँखों से दिख गया। छोटे-छोटे तो कितने जीव आकर उसमें गिरते होंगे /गिरकर मरते होंगे। हम उसका अनुमान ही नहीं लगा पाते हैं, क्योंकि उनके शव आँखों से नहीं दिखते हैं। यदि हवन के बाद हम हवनकुण्ड को ढककर आते तो शायद ऐसी घटना नहीं घटती। यह तो उठाने वाला विवेकवान था इसलिए उसको छिपकली दिख गई। यदि कोई लापरवाह व्यक्ति या कोई नौकर-चाकर राख उठाता तो शायद उसे इतनी बड़ी छिपकली भी नहीं दिख पाती। क्या हम इतना सा विवेक भी नहीं रख सकते? क्या विवेक के बिना धर्म होगा? असंभव, अत: विवेकपूर्वक काम करें।

धूपदान कैसा हो?

लगभग सभी मंदिरों में (जहाँ धूपदान में धूप चढ़ाई जाती है) धूप खेने के लिए अंगारे तैयार करने की विधि लगभग एक जैसी ही होती है। सभी स्थानों पर सुबह से एक बर्तन या सिगड़ी में कोयले या लकड़ी के टुकड़े/गट्ठे जलाकर रख दिये जाते हैं। वे कोयले 8-9-10 बजे जब तक लोग पूजा करने के लिए आते रहते हैं तब तक जलते रहते हैं अथवा यों समझो जब तक उनमें ईंधन रहता है तब तक जलते रहते हैं। आप स्वयं सोचें 2-3 घण्टे तक झग-झग करके जलते हुए उन अंगारों में कितने जीव गिरते होंगे। गिरकर मरते होंगे। क्या ऐसे अंगारों में धूप चढ़ाने से हमें पुण्य का अंश भी मिलेगा? एक मंदिर के

अध्यक्ष ने बताया-माताजी, हमारे मंदिर में एक साल में 1 लाख रुपये के (धूपदान में अंगारे बनाने के लिए) लकड़ी के गट्ठे आते हैं इसका तो फिर भी खेद नहीं है लेकिन बारिस के मौसम में तो उनमें इतने जीव हो जाते हैं जिनकी कल्पना भी कर लो तो शरीर में रोएँ खड़े हो जाते हैं.....। ऐसे अविवेक से यदि अंगारे तैयार किये जाते हैं तो हमें पुण्य के बजाय पाप का ही बन्ध होगा। अत: इस प्रकार से धूप चढ़ाने की अपेक्षा तो अग्नि में धूप न चढ़ाकर थाली में चढ़ा देना भी लाभदायक है। **दूसरी बात,** ये अंगारे स्वयं पूजा करने वाले तो तैयार करते नहीं हैं। मंदिर का माली बनाता है। जब हमारे जैसे धर्मात्मा लोगों को इतना समय भी नहीं है कि इन लकड़ी /कोयले (जिनके अंगारे बन रहे हैं) में कहीं जीव तो नहीं है, थोड़ा देख लें तो माली को तो समय और इसका विवेक होने की अर्थात् वह देख-शोधकर कोयले जलाता होगा, धधकती अग्नि को इस ढंग से रखता होगा कि उसमें कोई जीव आकर नहीं गिरे, नहीं मरे; कल्पना ही नहीं की जा सकती है अत: धूपदान तैयार करने के पहले सोच-समझ कर काम करें ताकि पुण्य के स्थान पर पाप का बन्ध नहीं हो।

सावधानी :

(1) लौंग के ऊपर का फूल अथवा गोले के ऊपर के छिलके की तत्काल धूप बनाई जा सकती है।

(2) चन्दन या धूप के योग्य लकड़ी के टुकड़े को चाकू से छीलकर हमेशा धूप बन सकती है।

(3) यदि दीपक जलाते हैं तो दीपक की लौ में लौंग को जलाकर भी धूप जला सकते हैं।

(4) धूप दसमी के दिन यदि धूपदान रखते हैं तो जाली से ढककर रखें, हमेशा भी धूपदान ढककर रखें।

(5) यदि धूपदान में धूप खेई है तो धूपदान को तत्काल व्यवस्थित करके आवें।

(6) धूप कम-से-कम मात्रा में चढ़ावें (आग में डालें) ताकि ज्यादा धुआँ भी न हो और अग्नि भी नहीं बुझे।

नमस्कार करते समय :

मंदिरों में कोई स्वाध्याय करते हैं तो कोई पूजा, कोई माला फेरता है

तो कोई पाठ करता है तो कोई प्रवचन सभा में बैठकर उपदेश/स्वाध्याय सुनता है। कई स्थानों पर मंदिर में साधुओं के प्रवचन होते हैं। उन्हें सुनने के लिए सैकड़ों लोग आते हैं। सभी लोग एकागृता से गुरुओं का उपदेश सुन रहे हों उस समय सभा के बीच में आगे जाकर चावल चढ़ाना, नमस्कार करते हुए नमोऽस्तु आदि बोलना महान् अन्तराय-ज्ञानावरण आदि कर्मों के बाँधने का कारण है। इसी प्रकार कोई साधु जाप कर रहे हैं / शास्त्र पढ़ रहे हैं उनके दर्शन करते समय जोर से नमोऽस्तु/वन्दामि आदि कहना या बच्चों से बार-बार नमोऽस्तु आदि कहलवाना उन्हें सम्बोधन करके अर्थात् महाराज जी, माताजी को नमोऽस्तु कहना भी बहुत बड़े पाप कर्म को बाँधने वाला है। हम धीरे और मौन पूर्वक भी यदि साधु को नमस्कार करते हैं, साधु के दर्शन करते हैं तो भी हमें उतना ही और उससे ज्यादा फल भी मिल सकता है जितना हम बोलकर करते हैं। यदि साधु फ्री बैठे हैं या सामान्य पुस्तक का अवलोकन कर रहे हैं या आने-जाने वालों से बात-चीत कर रहे हैं, आशीर्वाद दे रहे हैं अथवा हमारे जाने पर उन्होंने अपनी जाप, स्वाध्याय आदि बन्द कर दिये हैं तो जोर से बोलकर नमस्कार करने में भी कोई हानि नहीं है लेकिन स्वाध्याय आदि करते समय तो जोर से बोलकर नमस्कार करने में पुण्य के स्थान पर पाप का ही बन्ध होगा। लाभ के स्थान पर हानि ही होगी। इसलिए हम सबके देखा-देखी भेड़-चाल न चलकर विवेकपूर्वक कार्य करके धार्मिक क्रियाओं का यथोचित फल प्राप्त कर सकते हैं अन्यथा हम धर्मक्षेत्र में आकर भी पापों में लिप्त होते रहेंगे।

माला कैसे फेरें :

वैसे भारत के आस्तिक लोग अपने इष्ट भगवान के मंत्र की माला अवश्य फेरते / जपते हैं। माला फेरते हुए कोई इधर-उधर देखते रहते हैं, कोई तो माला के मणिये खिसकाते जाते हैं, मंत्र बोलते जाते हैं और बातें करते जाते हैं। कोई नाक, कान, आँख साफ करते जाते हैं, कोई बच्चों को खिलाते जाते हैं, कोई आने-जाने वालों को देखते हुए माला फेरते हैं; यह कोई माला फेरने की विधि नहीं है। माला ध्यानात्मक होती है। हाँ, जो दिन में 100-50 मालाएँ फेरता है अथवा कोई वृद्ध है वह इस प्रकार फेरे तो फिर भी क्षम्य है, क्योंकि उनका लक्ष्य माला फेरने का नहीं, पूरे दिन धर्मध्यान करने का रहता है। उनका माला

फेरना तो एक बहाना होता है। **दूसरी बात** वृद्धावस्था में माला फेरने में मन कम ही लगता है इसलिए वे इस प्रकार भी माला फेर लें भी तो उन्हें कुछ पुण्य ही लगेगा। लेकिन उनको भी दो-चार माला तो एकागृता से फेरना ही चाहिए ताकि विशेष पापों का क्षय होवे। जो जवान है अथवा दिन में दो-चार माला ही फेरते हैं उनको तो नासागृदृष्टि से या आँखें बन्द करके ही माला फेरना चाहिए। यदि आँखें बन्द करके फेरने में तकलीफ होती है तो दीवार की तरफ मुँह करके माला फेरना चाहिए ताकि आँखें खुली भी रहें तो भी दुनिया नहीं दिखे।

कई लोग माला को गोदी में डालकर फेरते हैं। कई लोगों की माला तो फेरते-फेरते जमीन में ही गिर जाती है। कई लोग माला को कपड़ों पर डालकर फेरते हैं। जिन कपड़ों में शरीर का पसीना लगा रहता है, जो कपड़े लघुशंका आदि अपवित्र पदार्थों के छींटों से अशुद्ध हो जाते हैं, जिन कपड़ों पर कई बार मुँह की लार, भोजन करते समय जूठन गिर जाती है, जिन वस्त्रों से कभी नाक भी पौंछ लिया जाता है। जहाँ-कहीं, जब-कभी गंदे हाथ भी जिनसे पौंछ लिये जाते हैं उन वस्त्रों पर हजारों मंत्रों से पवित्र माला को कैसे डाला जा सकता है। ऐसे कपड़ों पर डाल देने/गिर जाने पर माला पवित्र कैसे रह सकती है? नाभि के नीचे के अंग अपवित्र माने जाते हैं। उन अंगों से माला स्पर्श हो जाती है। इस विधि से माला फेरने पर जाप के फल में कमी तो आ ही जाती है अत: माला फेरते समय माला को गोदी में नहीं डालें और न कपड़ों पर डालकर फेरें। यदि माला हाथ में लेने से हाथों में दर्द होता है तो सूती धागे की चन्दन की माला रखें लेकिन हाथ में रखकर ही फेरें। अथवा एक हाथ में माला रखें, एक हाथ से फेरें अथवा सामने चौकी-पाटा आदि रख लें उस पर रखकर भी माला फेरी जा सकती है।

माला कहाँ रखें :

कई लोग सोने-चाँदी अथवा स्फटिक-मणि आदि से बनी हुई मूल्यवान माला से जाप करते हैं। ऐसी माला से जाप करने में कोई बाधा नहीं है लेकिन वे जाप करके माला को गले में पहन लेते हैं। उस माला को पहनकर वे शौच के लिए चले जाते हैं, लघुशंका कर लेते हैं। उस माला के पूरे दिन शरीर का

पसीना-मैल आदि भी चिपकता रहता है और आवश्यकता पड़ने पर गले में से वही माला निकाल कर जाप कर लेते हैं। उनको यदि कोई पूछता है कि आप जाप करने की माला को पहनकर शौचालय आदि अपवित्र स्थानों पर कैसे चले जाते हैं, शौच जैसे कार्य कैसे कर लेते हैं? क्या माला पहनकर ऐसे कार्य करने से माला अपवित्र नहीं हो जाती है तो वे उत्तर देते हैं कि सोना-चाँदी आदि ऐसी धातुएँ हैं जो कभी अशुद्ध नहीं होती हैं इसलिए सोने आदि धातु की माला को पहन शौच आदि अपवित्र कार्य करने पर भी वे (मालाएँ) अपवित्र नहीं होती हैं। लेकिन वे स्वयं सोचें, सोना चाँदी आदि भले ही अपवित्र नहीं होते हों परन्तु माला तो जाप करने का एक उपकरण है, क्या ऐसे पवित्र उपकरण को शौचालय आदि जैसे अपवित्र स्थान पर ले जाया जा सकता है? क्या आप सोने चाँदी के लोटा जग आदि लेकर शौच जाकर उसी से पानी पी सकते हैं? उसको बिना माँजे अपने रसोई घर आदि पवित्र स्थानों पर ले जा सकते हैं? यदि सोना चाँदी अशुद्ध/अपवित्र नहीं होते हैं तो आप उस लोटे से पानी क्यों नहीं पी लेते हैं? यदि आपको वह शौच आदि के लिए ले जाने के कारण अशुद्ध लगता है, ग्लानि आती है तो जाप के उपकरण माला को हम वहाँ ले जाकर भी कैसे पवित्र मान सकते हैं? वह माला कैसे पवित्र रह सकती है? आदि बातों को सोचकर माला की पवित्रता बनाये रखने के लिए उसे गले अथवा हाथ आदि में नहीं पहनें। **दूसरी बात** यदि सोना-चाँदी अपवित्र नहीं होते हैं तो उनसे बनी माला की शुद्धि के लिए मंत्र क्यों बताया गया है? क्यों रत्नों की प्रतिमा की भी प्रतिष्ठा होती है?

कई लोग जिस चटाई या आसन पर बैठकर माला फेरते हैं, माला को उसी पर रख देते हैं। कई लोग माला फेर कर वहीं अर्थात् उसी चटाई-आसन पर लुढ़क (सो) जाते हैं। तब माला उसी पर गिर जाती है तो भी उनको कोई विकल्प नहीं आता है। वे कहते हैं हमारी माला तो मात्र गिनती करने अर्थात् 108 बार गिनने के लिए है इसलिए नीचे गिर भी जावे तो कुछ नहीं होगा, अशुद्ध नहीं होगी। ऐसा कहने वाले यदि माला को डिब्बी में रख दिया करें; आसन, चटाई, जमीन पर नहीं डालें तो क्या उन्हें पाप लग जायेगा? नहीं, नीचे डाल देने पर पाप लगे या नहीं लगे। डिब्बी में या किसी ऊँचे पवित्र स्थान

पर रखेंगे तो निश्चित रूप से पाप नहीं लगेगा। **दूसरी बात** भले ही आप गिनती करने के लिए माला रखते हैं लेकिन देखने वाले को क्या पता कि आपने गिनती के लिए माला रखी है वह तो आप की माला को नीचे डली देखकर नीचे डालने में पाप नहीं लगता है ऐसा समझकर अपनी शुद्ध उपकरण रूप माला को नीचे डालने लगेगा तो उसके पाप का अंश आपको भी लगेगा, यह तथा ऐसे ही उसे देखकर, कोई और उसे देखकर, कोई और ऐसी परम्परा चलते-चलते कितने लोग माला नीचे डालने लगेंगे। हमारे प्रमाद के कारण ऐसी खोटी परम्परा चलेगी उसको मिटाना कितना कठिन होगा। **तीसरी बात** जमीन/आसन आदि पर हमारे गंदे पैर लगते हैं। उसकी गंदगी हमारी माला में चिपक/ लग जाती है उसे पवित्र तो नहीं कहा जा सकता है। अत: आप भले ही गिनने के लिए माला रखते हैं, उसे नीचे नहीं गिरावें।

कई मंदिरों की मालाओं का रंग सफेद से काला हो जाता है। वह माला चिपचिपाने लगती है तो भी हमारा मन नहीं होता है कि हम इतने अच्छे साफ-सुथरे कपड़े पहनकर आये हैं, इतनी गंदी माला से कैसे जाप करें? इस माला को घर ले जाकर धोकर ले आऊँ। ऐसे भाव उत्पन्न नहीं होते हैं। गंदगी के कारण उस माला में जीव उत्पन्न होते रहते हैं। यदि हम 15-20 दिन में मंदिर की एक माला भी धोलें तो भी हमारे रोज कपड़े धोने का पाप तो अवश्य धुल ही जाता है, क्योंकि हमने अपने कपड़े धोने के साथ मंदिर का एक उपकरण भी धोया है।

कई लोग जब मंदिर की माला उठाकर फेरते हैं तो कभी-कभी फेरते-फेरते वह टूट जाती है तो वैसी ही मंदिर में रखकर आ जाते हैं। वे यह नहीं सोचते हैं कि कम-से-कम मेरे हाथ से माला टूटी है इसलिए तो मैं इसे ठीक करके रखूँ। कई लोगों के हाथ से मोती की माला टूटती है मोती बिखर जाते हैं तो जितने मिल जाते हैं उन्हें इकट्ठा करके मंदिर में रख आते हैं। कभी तो दो-चार मोती लुढ़ककर इधर-उधर हो जावें तो उन्हें कोई चिन्ता नहीं रहती है। वे मोती को गिनते तक नहीं हैं कि माला के मोती पूरे हुए या नहीं? व्यक्ति अपने घर के सिलाई-बुनाई आदि सैकड़ों काम करते हैं लेकिन मंदिर की टूटी हुई माला को पिरो कर रखना तो बहुत दूर अपने हाथ से टूटी हुई माला तक

को पिरो कर नहीं रख सकते, यह बड़े आश्चर्य की बात है।

मणियाँ ढूँढ़ने का चमत्कार :

लालमनदासजी की एक बार अचानक दृष्टि चली गई। वे अन्धे हो गये। फिर भी उनकी भगवान के दर्शन की तीव्र लालसा बनी रहती थी। इसलिए वे मंदिर अवश्य जाते थे। एक दिन वे भगवान के दर्शन करके माला फेर रहे थे। अचानक माला टूट गई। मणियाँ बिखर गईं। माला टूटने से उनको बहुत दु:ख हुआ। उन्होंने उसी समय नियम ले लिया कि जब तक मैं माला के पूरे मोती नहीं ढूँढ़ लूँगा, मंदिर के बाहर भी नहीं निकलूँगा। वे हाथ से टटोल-टटोल कर मोती इकट्ठे कर रहे थे। उनको पूरे मोती मिल गये लेकिन एक मोती नहीं मिला। उन्होंने मंदिर आने वाले औरों से भी वह मोती ढुँढ़वाया लेकिन मोती नहीं मिला। मोती ढूँढ़ते-ढूँढ़ते उनका सिर वेदी के कोने से टकरा गया। उनके सिर से खून बहने लगा। पुण्य योग से अथवा माला (उपकरण) के प्रति आस्था का भाव होने से उनकी आँखों में ज्योति आ गई। सिर से खून बह रहा था फिर भी उन्होंने पहले मोती ढूँढ़ा उसके बाद ही मंदिर से बाहर निकले। हमें तो आँखों से दिखता है, क्या हम मोतियों को ढूँढ़ कर पुन: माला पिरो कर नहीं रख सकते हैं। हम नयी माला मंदिर में रखकर अथवा टूटी माला को पिरो कर पुण्य नहीं कमा सकते हैं तो अपने हाथ से टूटी हुई माला को ठीक करके पाप से तो बच ही सकते हैं।

सावधानी :

(1) यदि माला गंदी दिखे तो शुद्ध (चर्बीरहित) साबुन या अरीठा से धोकर गंधोदक से शुद्धि करके ही मंदिर में रखें।

(2) यदि टूटी माला दिखे या पतले धागे में पिरोई माला दिखे तो पुन: पिरो लें, मोती कम हों तो पूरे करके ही पिरोवें।

(3) मंदिर की माला को घर पर या कहीं बाहर जाते समय नहीं ले जावें, मंदिर में ही बैठकर फेरें।

(4) यदि माला नीचे गिर जावे तो तत्काल उठाकर सिर पर चढ़ावें तथा ग्लानिप्रद स्थान में गिरे तो पानी से धोवें।

(5) यदि माला लेकर लघुशंका या शौच हेतु चले जावें तो उसे धोकर गंधोदक से शुद्धि करें। प्रायश्चित्त लें।

(6) दसलक्षण आदि में पूरे दिन मंदिर में रहते हैं तो भी जब माला फेरनी हो तब ही उठावें। पूरे दिन लेकर नहीं बैठे रहें, क्योंकि अन्य लोगों को भी माला की आवश्यकता पड़ सकती है।

(7) आपके हाथ से माला टूट जावे तो एक नई माला मंदिर में दान करें तो अच्छा हे।

(8) सोना चाँदी आदि की मूल्यवान माला को घर से बाहर नहीं ले जावें।

(9) माला फेर कर तत्काल डिब्बी आदि में रखें। हाथ में लिये रहने से हाथ के पसीने से माला गंदी हो जाती है।

माला कहाँ फेरें :

कई लोग घर में जहाँ सब लोगों का आना-जाना बना रहता है वहीं माला फेरने बैठ जाते हैं। उन्हें देखकर तो ऐसा लगता है कि वे घर की रखवाली करने के लिए ही माला का बहाना बनाकर बैठ गये हैं। ऐसा करने से न तो घर की रखवाली ही अच्छी तरह से होती है और न ही माला अच्छे से फिरती है। एक दिन एक महिला ऐसे ही स्थान पर बैठकर माला फेर रही थी। उसने आँखें बन्द कर रखी थीं, उसी समय उसके बेटे को पानी पीना था। उसने कहा- मम्मी, यदि छोटे घड़े में छना पानी हो तो आँखें खोल देना और यदि बड़े-घड़े में छना पानी हो तो आँखों को बन्द रखना, यह सुनकर उसे आँखें खोलनी पड़ीं, क्योंकि छोटे घड़े में छना पानी था। इसी प्रकार एक सेठ अपनी दुकान पर बैठकर माला फेर रहा था। माला फेरते-फेरते एक कुत्ता आकर गुड़ चाटने लगा अर्थात् दुकान में जो बेचने के लिए गुड़ रखा था उसे खाने लगा। कुत्ते को गुड़ खाते देखकर सेठ को चिन्ता लगी। उसने खाँस करके कुत्ते को भगाने की कोशिश की, फिर हाथ के इशारे आदि से कुत्ते को भगाने लगा लेकिन कुत्ता नहीं भागा तो उसको मजबूर होकर ये पंक्तियाँ बोलनी पड़ीं -

सामायिक में समता भाव, गुड़ की भेली कुत्ता खाय।

सामायिक/माला आदि के माध्यम से धर्मध्यान कहाँ करना चाहिए?

इसका विवेक नहीं रखने के कारण ही हमें माला फेरना, सामायिक करना आदि कार्य करने पर भी कुछ भी फल नहीं मिल पाया। अत: योग्य स्थल पर बैठकर माला फेरना आदि धार्मिक कार्य करें। वैसे मुख्य रूप से मंदिर में ही धर्मध्यान करें। वहाँ सबसे अच्छा स्थान एवं पर्यावरण रहता है।

कई लोग माला फेरने (सामायिक करने) बैठते हैं तो सोचते हैं कि घड़ी को हाथ पर बाँधकर क्यों परिगृह लगाऊँ, वे घड़ी खोलकर सामने रख लेते हैं। कोई बच्चा या जानवर आदि यदि उसको उठाकर ले जाते हैं तो माला फेरते-फेरते ही आकुलता होने लगती है। जो घड़ी ले जा रहा है उसके प्रति द्वेष उत्पन्न होने लगता है। उसको देखने का मन होने लगता है अत: घड़ी सामने रखकर जाप करने की अपेक्षा बिना घड़ी रखे ही या घड़ी बाँधकर जाप करना ज्यादा उचित है।

सावधानी :

(1) यदि मूल्यवान माला है, खोने का डर है तो उस माला से घर पर ही बैठकर जाप कर लें।

(2) माला को रखने के लिए एक डिब्बी रखें ताकि माला की पवित्रता भी बनी रहे और सुरक्षा भी।

(3) इधर-उधर रखकर भूलने की आदत है तो उसी स्थान पर बैठकर जाप करें, जहाँ माला रखी रहती है।

(4) यह कल्पना छोड़ दें कि मूल्यवान माला से जाप करने पर ज्यादा फल मिलता है। मुख्य रूप से तो भावों का ही फल मिलता है।

(5) हाथ धोकर ही माला छूएँ ताकि माला अशुद्ध न हो।

(6) यदि दिन में दो-चार माला ही फेरते हैं तो हाथ से भी माला फेर सकते हैं।

(7) कायोत्सर्ग में मच्छर-मक्खी आदि काटने लगे तो उनको नहीं भगावें। माला फेरने में भी मच्छर आदि को नहीं भगाने की पूरी कोशिश करें, विशेष फल मिलेगा।

(8) ऐसे स्थान पर बैठकर माला फेरें जहाँ मन को चंचल करने वाले निमित्त न हों।

जिनवाणी को व्यवस्थित रखें :

प्रत्येक मंदिर में जिनवाणी, शास्त्र, ग्रन्थ आदि अवश्य होते हैं। उनका उपयोग मंदिर में आने वाले सब लोग करते हैं। उनमें से अधिकांश लोग जिनवाणी को जहाँ-तहाँ रखकर चले जाते हैं। जिनवाणी विराजमान करने का सही स्थान होने पर भी कोई तो जिनवाणी को चौकी पर, तो कोई अलमारी के ऊपर रखकर चले जाते हैं। कोई नीचे छोटी पुस्तक रखी है उसी पर बड़ी (वजन वाली) पुस्तक रखकर चले जाते हैं। ऐसे करते-करते जब छोटी पुस्तक पर दो-चार पुस्तकें वजन वाली रख दी जाती हैं तो पूरी पुस्तकें फिसल कर धड़ा-धड़ गिर जाती हैं। इस प्रकार गिरने से किसी पुस्तक की बाइंडिंग खुलने लगती है तो किसी के पृष्ठ मुड़ने लग जाते हैं, मुड़ जाते हैं, किसी के पृष्ठ फट जाते हैं।

कई बार पूजा करते-करते पुस्तक में द्रव्य के दाने गिर जाते हैं। कई लोग उन दानों को बिना निकाले ही पुस्तक बन्दकर रख देते हैं। वे दाने पुस्तक की बाइंडिंग में जाकर फँस जाते हैं जिससे पुस्तक की बाइंडिंग ढीली हो जाती है। विधान आदि की पुस्तक हो तो वह महीनों रखी रहती है। दाने उसमें पड़े-पड़े सड़ जाने के कारण उनमें जीव उत्पन्न हो जाते हैं। वे सब दबकर या आपस में घर्षण से मरण को प्राप्त हो जाते हैं।

कई लोग जब मंदिर में पूजा-पाठ, स्वाध्याय, माला-जाप आदि करते हैं तब उन्हें बच्चे परेशान करते हैं तो वे एक छोटी-मोटी पुस्तक बच्चों को पकड़ा देते हैं। बच्चे उसको कभी जमीन में पटकते हैं, कभी पैर में डाल देते हैं, कभी पेज फाड़ देते हैं, कभी मुँह में लेते हैं। ऐसा करने से जिनवाणी का कितना अविनय होता है, उसका पाप बच्चों को तो कम लगता है,अभिभावकों को ज्यादा लगता है। कई मंदिरों की जिनवाणी की पुस्तकें बहुत फट जाती हैं फिर भी किसी को उन पर कवर चढ़ाने की सुध नहीं आती है, किसी को ऐसा नहीं लगता है कि इस पर बाइंडिंग करवा दें। उन्हीं पुस्तकों से पूजा-पाठ करते रहते हैं। कवर एवं बाइंडिंग के अभाव में पाँच साल चलने वाली पुस्तक दो-तीन साल में ही फटकर समाप्त हो जाती है। यदि हम मंदिर की एक पुस्तक पर भी कवर चढ़ाते हैं, बाइंडिंग कराते हैं, उस कवर/बाइंडिंग से पुस्तक यदि एक साल भी ज्यादा चलती है तो उस पुस्तक से यदि 10 व्यक्ति रोज पूजा-पाठ

करते हैं तो हमें 3650 व्यक्तियों के धर्मध्यान का छठा अंश मिलता है और जिनवाणी की सुरक्षा करने से ज्ञानावरणकर्म का क्षयोपशम बढ़ता है अर्थात् वर्तमान में ज्ञान की वृद्धि और भविष्य में विशिष्ट ज्ञान की प्राप्ति होती है।

अधिकतर लोग जिनवाणी से पूजा-पाठ, स्वाध्याय आदि करके यथास्थान अर्थात् अलमारी में रखते हैं लेकिन रखते समय यह ध्यान नहीं रखते हैं कि शास्त्र जी कहाँ रखने चाहिए और पूजा-पाठ की पुस्तक कहाँ रखनी चाहिए ? मोटी वजन वाली जिनवाणी कहाँ रखना है और हल्की जिनवाणी कहाँ रखना है इसलिए बड़े-बड़े शास्त्रों के बीच में छोटी जिनवाणी और जिनवाणियों के बीच में शास्त्र आ जाते हैं जिससे न अलमारी अच्छी लगती है और न ही समय पर शास्त्र/जिनवाणी व्यवस्थित मिल पाते हैं। इसी प्रकार कई लोग जब अलमारी से जिनवाणी उठाते हैं तो आठ-पन्द्रह पुस्तकों के बीच में से अपनी आवश्यक जिनवाणी खींच कर निकाल लेते हैं, ऐसा करने से कभी-कभी पुस्तकें लुढ़क जाती हैं। अत: हम जिनवाणी उठाते समय और विराजमान करते समय विवेक रखें तो जिनवाणी का विनय करके ज्ञानावरणकर्म का क्षयोपशम बढ़ा सकते हैं और जिनवाणी की सुरक्षा करके पाप से भी बच सकते हैं।

कई लोग सोचते /कहते हैं कि हम मंदिर की अलमारी कितनी ही बार जमा लें; लोग, महिलाएँ बार-बार उसे बिखेर ही देती हैं। हम कितनी बार अलमारी जमाते रहेंगे? ऐसा विचार करने वालों से मैं पूछना चाहती हूँ कि आपके घर में बच्चे कितनी बार चीजों/सामानों को इधर-उधर कर देते हैं, बिखेरते रहते हैं, क्या आप उतनी बार पूरे दिन पुन:-पुन: घर को व्यवस्थित नहीं करते हैं। माँ एक ही होती है और बच्चे दो-चार भी हों तो अकेली माँ घर को व्यवस्थित रखती ही है। उसी प्रकार मंदिर में भी जिनवाणी बिखेरने वाले अनेक होंगे पर जमाने वाले तो बहुत कम लोग ही होंगे। मैं तो सोचती हूँ कि समाज के मात्र दो-तीन प्रतिशत लोग भी यदि जिनवाणी की अलमारी जमाने का नियम रखें तो भी अलमारी हमेशा जमी हुई रह सकती है। जो कभी न जिनवाणी को छूता ही है और न कभी भगवान की पूजा-पाठ ही करता है वह भी यदि एक-दो मिनट मात्र भी जिनवाणी / जिनवाणी की अलमारी जमावे, 8-15 दिन में एक आलमारी को व्यवस्थित करे तो वह भी महान् पुण्य का बन्ध कर सकता है,

उसके भी ज्ञानावरण कर्म का क्षयोपशम बढ़ सकता है और वह भी पाप से बच सकता है तथा प्रत्येक व्यक्ति यह संकल्प रखे कि मैं जो जिनवाणी/शास्त्र उठाऊँगा उसे सही स्थान पर सही ढंग से विराजमान करके आऊँगा तो मंदिर की आलमारी कभी बिखर ही नहीं सकती लेकिन ऐसा होना असंभव है इसलिए हम जब भी मंदिर जावें, जिनवाणी की अलमारी व्यवस्थित करके आवें, उसे अपना ही, अपने घर का ही काम समझें, इसमें आपको भी उपर्युक्त लाभ अवश्य होंगे और मंदिर की अलमारी भी सही जमी रहेगी।

सावधानी :

(1) यदि आप मंदिर में जिनवाणी की कोई नयी पुस्तक विराजमान करें तो कवर चढ़ाकर करें।

(2) आप एक महीने में कम-से-कम दो-तीन पुस्तकों पर कवर चढ़ाने/रिपेरिंग करने का नियम रखें।

(3) जिनवाणी को मंदिर में इधर-उधर छोड़कर नहीं आवें, यथास्थान सुरक्षित रखकर आवें।

(4) बच्चा कितना ही परेशान करे उसे जिनवाणी की पुस्तक नहीं पकड़ावें।

(5) पूजा के बाद पुस्तक में से चावल निकालकर ही उसे रखें।

(6) महीने-पन्द्रह दिन में अलमारी साफ भी करें।

(7) चार-छह महीने में जिनवाणी को धूप में अवश्य रखें।

(8) यदि जिनवाणी फट गई है, बिल्कुल उपयोग में नहीं ली जा सकती है तो विधिपूर्वक व्यवस्थित कर दें।

नोट - व्यवस्थित करने की विधि देखें - शास्त्र रखने में।

दीक्षा दिवस आदि में :

आजकल भगवान के कल्याणकों के समय, साधु के सान्निध्य में, दसलक्षण आदि पर्वों में होने वाले कार्यक्रमों में आरती सजाओ, द्रव्य सजाओ, जिनवाणी सजाओ आदि अनेक प्रकार की प्रतियोगिताएँ होने लगी हैं। उसमें पुरस्कार प्राप्त करने के लिए बच्चे, महिलाएँ आदि अनेक प्रकार की आरतियाँ, द्रव्य की थालियाँ आदि तैयार करके लाते हैं। कोई आटे की आरती बनाता है तो कोई मिट्टी के बर्तनों को सजाकर आरती तैयार करता है, कैसी भी आरती

हो उसमें दीपक होना तो आवश्यक है ही। जो लोग आटे की आरती बनाते हैं उनकी आरती 4-8 घण्टे भी रखी रह जाती है तो उस आटे में फफूँद आने लगती है। एक दिन कुछ लड़कियों ने बताया, माताजी! कुछ दिन पहले हमारे यहाँ आर्यिका माताजी का दीक्षा दिवस मनाया गया था। हम लोग अपनी-अपनी आरती सजाकर मंदिर के एक कमरे में रखकर आ गये क्योंकि आरती प्रतियोगिता का रिजल्ट निकलना था। मूल्यांकन करने वालों ने रिजल्ट निकालकर लिस्ट तैयार कर दी लेकिन यह सूचना देना भूल गये कि सब अपनी-अपनी आरती ले जावें। इसलिए किसी ने आरतियों की तरफ ध्यान नहीं दिया। दो-तीन दिन के बाद जब आरतियाँ देखी गईं तो आटे की आरती/दीपक आदि में इतनी लटें थीं जिनकी गिनती नहीं की जा सकती है और कई दीपकों के ऊपर फफूँद आ गई और अन्दर लटें हो गईं...। हम सोचें थोड़े से प्रमाद के कारण कितने जीवों की उत्पत्ति हमारे निमित्त से हो गई। अब उस आरती/दीपक को नहीं उठायें तो हजारों जीव और उत्पन्न होंगे और यदि उठाते हैं तो वे सब मरण को प्राप्त होंगे। दोनों ही तरफ हिंसा की भरमार है। आखिर ऐसी विधि से दीक्षा दिवस आदि मनाकर (प्रमाद के कारण) हम कितना पुण्य कमा सकते हैं, कितने पापों का क्षय कर सकते हैं, यह विचारणीय है।

इसी प्रकार द्रव्य की थाली सजाते समय भी यदि जल-चन्दन के कलश रखते हैं, प्रासुक पानी के रखें और उनको भी समय (मर्यादा) पूरा होने के पहले ही व्यवस्थित कर दें ताकि उनमें त्रस जीव उत्पन्न न हों। ऐसे पदार्थ नहीं रखें जिनमें जीव उत्पत्ति की सम्भावना हो। कलशों को ढक कर रखें।

इसी प्रकार जिनवाणी सजाते समय, जिनवाणी को सुन्दर बनाने के साथ-साथ उसकी मरम्मत भी अर्थात् यदि फटी हो, बाइंडिंग खुली हो, उसमें चावल के दाने आदि डले हों, कवर फटा हो तो उस तरफ भी ध्यान दें; मात्र सजावट ही नहीं करें उसको मजबूत भी बनावें ताकि इनाम के साथ-साथ आपके ज्ञानावरण कर्म का क्षयोपशम भी बढ़े।

सावधानी :

(1) आरती करते ही अर्थात् कार्यक्रम पूरा होते ही आरती/दीपक आदि का

आटा निकालकर गाय आदि पशु को खिला दें।

(2) रिजल्ट निकलना हो तो एक व्यक्ति जिम्मेदारी से रिजल्ट तैयार होते ही आटे को व्यवस्थित कर दे।

(3) निर्णायक महोदय 2-3 घण्टे के भीतर ही रिजल्ट तैयार कर दें। रिजल्ट रात होने के पहले ही तैयार कर दें।

(4) घर ले जाकर भी आरती ऐसे ही नहीं रख दें।

(5) आटे का दीपक : यदि मिट्टी, स्टील-ताँबा आदि के दीपक पर आटे का पतला-पतला लेप करके दीपक बनावें तो वह एक-आध घण्टे में सूख जायेगा, जिससे जीवों की उत्पत्ति नहीं होगी।

झाड़ू में :

कई मन्दिरों में कोटा स्टोन, मारबल तथा ग्रेनाइट जैसे मूल्यवान पत्थर का फर्श बना दिया जाता है लेकिन उसकी सफाई करने के लिए खजूर की कठोर झाड़ू रखी जाती है। उनकी दृष्टि में फूल-झाड़ू बहुत महँगी पड़ती है, बार-बार टूटती है। सहज रूप से उपलब्ध नहीं होती है परन्तु उनके दिमाग में यह बात नहीं आती है कि उस कठोर झाड़ू से सफाई करते समय चींटी-चींटा आदि छोटे-छोटे जीवों की क्या हालत होती होगी। यदि वे एक-बार अपने ही शरीर पर उस झाड़ू को फेर कर देख लेते, उसकी वेदना को समझ लेते तो शायद ऐसी झाड़ू से मंदिर की बात तो बहुत दूर अपने घर में भी सफाई नहीं करते पर उन्होंने ऐसा करके देखा ही कब अथवा कभी झाड़ू शरीर पर लग भी गया होगा तो जल्दी से उसका उपचार कर लिया होगा। मुझे समझ में नहीं आता कि लाखों रुपये लगाकर इतना सुंदर मंदिर बनवा लिया तब तो पैसे की तरफ ध्यान नहीं गया और अब एक झाड़ू जैसी अल्प मूल्य वाली चीज के लिए इतनी कृपणता क्यों की जाती है? **दूसरी बात** लोग मंदिर में हजारों-लाखों रुपयों का दान दे देते हैं लेकिन अहिंसा का पालन करने के लिए फूल झाड़ू मंदिर में रखने की अथवा झाड़ू के घिस जाने पर/कड़क हो जाने पर भी उसे बदलने का विचार उनके मन में उत्पन्न नहीं होता है, यह आश्चर्य की बात है।

स्वयं का अर्थात् कार्यकर्त्ता या मंदिर में आने वालों के दिमाग में झाड़ू

की तरफ ध्यान नहीं जाता है तो कम-से-कम कोई सामने वाला कह रहा है उसे सुन करके तो हम झाडू ला ही सकते हैं लेकिन कोई छोटे लोगों की बात सुनना भी तो नहीं चाहते हैं। एक स्थान पर साधु संघ एक मंदिर में रुका हुआ था। मंदिर की मालिन की बात को शायद कार्यकर्ताओं ने नहीं सुना होगा इसलिए उसने एक दिन साधुओं के सामने ही कार्यकर्ताओं से झाडू बदलने को अर्थात् नई झाडू लाने के लिए कहा। कार्यकर्ताओं ने उसकी बात अनसुनी कर दी। साधु संघ को यह बात समझ में आ गई। एक साधु ने अपने बाहर के किसी परिचित गृहस्थ से दो झाडू मंगवाकर मंदिर में रखवा दी। उन झाडुओं को देखकर उन कार्यकर्ताओं ने उस मालिन को इतना जोर से डाँटा कि बेचारी मालिन काँपने लगी। क्या यह उचित है, क्या हम झाडू जैसी छोटी सी चीज में भी कृपणता, लापरवाही के कारण पाप का अर्जन करते रहेंगे? नहीं, हम थोड़ी सी सावधानी रखकर हिंसा से बच सकते हैं?

सावधानी :

(1) छोटे-छोटे गाँवों में जहाँ फूल-झाडू नहीं मिलती हो वहाँ फूल-झाडू अवश्य भेज दें।

(2) अपने नगर में 5-7 मंदिर हैं तो महीने-दो महीने में वहाँ (मंदिरों) की झाडू देखते रहें।

मंदिर की सज्जा में :

वैसे इस संसार में जहाँ जिनेन्द्र भगवान विराजमान हों वे स्थान-वेदी आसन आदि सुन्दर ही होते हैं उनमें बाह्य डेकोरेशन की आवश्यकता नहीं रहती है फिर भी आज का प्राणी इन्द्रिय विषयों से विशेष आकर्षित होता है इसलिए सोचता है कि जिस प्रकार हम अपने घर को नाना प्रकार के रंग-रंगीले पदार्थों/कलाकृतियों से सज्जित करते हैं, घर को सुन्दर-आकर्षक बनाते हैं उसी प्रकार अपने धर्मायतन/इष्ट भगवान के मंदिर को भी आकर्षक बनायें। ऐसा होना भी चाहिए। यह भी सम्यग्दर्शन का एक चिह्न कहा जा सकता है। महापुरुषों का कहना भी यही है कि पूरे नगर/गाँव आदि में मंदिर से अच्छा और ऊँचा कोई घर/बंगला नहीं होना चाहिए। सबसे मूल्यवान धातु/पाषाण हीरे-मोती आदि

मंदिर में लगाना चाहिए। इसीलिए हमारे जिनालयों में भी सोने का काम करवाने की परम्परा प्राचीन काल से ही चली आ रही है। सोने का काम बहुत सुन्दर भी लगता है, वर्षों तक स्थायी बना रहता है और इसमें चोरी होने की सम्भावना भी नहीं रहती है इसलिए ऐसा काम करवाना कोई गलत नहीं है लेकिन जीवों की हिंसा से /जीवों की हड्डी आदि में रखकर तैयार किये हुए सोने से मंदिर की सज्जा करना, सुन्दरता बढ़ाना तो उचित नहीं कहा जा सकता है। पुराने जमाने में सोने के पानी से मंदिरों में कलाकृतियों की रचना होती थी। उन कलाकृतियों में सैकड़ों वर्ष बीत जाने के बाद भी किसी प्रकार की विकृति/पुरानापन/घिस जाना, धीरे-धीरे समाप्त हो जाना आदि क्षति नहीं होती थी। उसी का प्रमाण अजमेर (राजस्थान) में स्थित 'सोनी जी की नसिया' और वहीं सरावगी मोहल्ले में स्थित भगवान आदिनाथ स्वामी का समवसरण है। इनको बने लगभग 100 वर्ष हो चुके हैं लेकिन आज भी कोई यह नहीं कह सकता कि ये ऐतिहासिक हैं, देखने वाले को लगता है कि ये आज ही अभी 2-4 वर्ष पहले बनवाई होगी। इस मंदिर को बनाने वाले की 5-7 पीढ़ियाँ बीत चुकी हैं....। वर्तमान के कई मंदिरों की सोने की कलाकृतियाँ अधिक से अधिक 30-40 वर्ष तक ही चलती हैं अर्थात् 30-40 वर्ष में तो पुन: कलाकृति करवानी पड़ती है...। क्योंकि आज सोने के पानी के स्थान पर सोने के वरक से कलाकृतियों का काम होने लगा है। मुझे तो बचपन से ही यह पता था कि मंदिर में जो सोने का काम होता है वह सोने को पिघला कर अर्थात् सोने का पानी बनाकर किया जाता है। आज से लगभग 5-7 वर्ष पहले तक भी मुझे यही पता था लेकिन जब हम लोग आरौन में भगवान शान्तिनाथ स्वामी के मंदिर में दर्शन करने गये तब वहाँ भगवान की वेदी में कारीगर सोने का काम कर रहे थे। हम लोगों ने सोचा, देखना चाहिए कि आखिर सोना इतना पतला कैसे हो जाता है। हम लोगों ने जब पास जाकर काम करते हुए कारीगरों को देखा तो वे स्टीकर जैसे सोने के पत्ते निकालकर चिपका रहे थे तब समझ में आया कि मंदिरों में यह काम सोने के पानी से नहीं, सोने के वरक से होता है। फिर थोड़ी खोज-बीन करने के बाद समझ में आया कि पुराने जमाने में तो यह सब काम सोने के पानी से ही होता था लेकिन अब वरक से होने लगा है। पहले वरक के बारे

में सुना था कि मिठाइयों पर लगाये जाते हैं वे माँसाहार में आते हैं। इसलिए वरक वाली मिठाई नहीं खानी चाहिए। अब वैसे ही निर्मित वरकों से मंदिर की शोभा बढ़ाई जाती है। कई लोग कहते हैं कि हमने तो कारीगर को अपने यहाँ बुलाकर वरक तैयार करवाये थे, वे अशुद्ध कैसे हो सकते हैं परन्तु अपने घर पर बनाने मात्र से कोई चीज शुद्ध हो और बाजार से खरीद कर लाने से अशुद्ध हो ऐसा तो कोई नियम नहीं बनाया जा सकता है इसलिए कोई सा भी वरक हो उसकी उत्पत्ति तो हिंसात्मक ही होती है। मैंने एक पम्पलेट में वरक बनाने की विधि पढ़ी थी उसको यहाँ लिखना चाहती हूँ।

वरक बनाने का उपकरण :

पशुओं की आँतों की पतली-पतली परतों को वरक बनाने के साधन के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। ये झिल्लियाँ इतनी मजबूत होती हैं कि कई दफा कूटने के बाद भी फटती नहीं हैं। इन्हीं झिल्लियों के बीच में सोने के टुकड़े रखकर उनका आकार बढ़ाया जाता है। 10 ग्राम सोने से 80 से 120 वरक तक बनाये जाते हैं। संख्या उनकी मोटाई पर निर्भर करती है।

गायों और बैलों को कसाईखानों में मारने के बाद खून से लथपथ उनकी आँतों को बाहर खींच लिया जाता है। उसे साफ करके उपयोग में लाया जाता है। गाय या बैल की आँत की औसत लम्बाई 540 इंच व उसका व्यास 3 इंच होता है। इसके छोटे-छोटे टुकड़े करके लगभग 150 से 170 टुकड़ों की एक डायरी बनती है और उसके बीच में सोने के पतले टुकड़े रखकर पीटे जाते हैं। इस डायरी को जिस जिल्द के भीतर सिलते हैं उसे भी गाय या बैल के चमड़े से बनाते हैं। यह डायरीनुमा वरक बनाने का उपकरण 4 से 6 हजार रुपये में बाजार में उपलब्ध होता है और छह से आठ महीने तक काम में लिया जा सकता है। एक डायरी में 48000 वरक बन सकते हैं अर्थात् एक गाय की आँतों से 16000 वरक बन सकते हैं। वरक बनाने वाले डायरी के पन्नों को फायबर जापानी कागज या पोलियस्टर से बना बताते हैं। यह सरासर झूठ एवं आँखों में धूल झोंकना है क्योंकि इन पन्नों की प्रयोगशाला में जाँच कराने पर इनके पशुओं के अंगों से बने होने की पुष्टि होती है। यदि इन डायरी के पन्नों और वरकों को शक्तिशाली माइक्रोस्कोप से देखें तो मल एवं खून के धब्बे

नजर आते हैं।

यदि विश्वास नहीं हो तो :

(1) अपने सामने वरक बनवाकर जिस डायरीनुमा उपकरण में वरक बनवाया है उसका पन्ना लेकर किसी प्रयोगशाला में जाँच करवावें, आपको सब सही-सही समझ में आ जायेगा।

(2) बिल्कुल नये डायरीनुमा उपकरण का पन्ना लेकर उसे इलेक्ट-ोनिक माइक्रोस्कोप में देखें तो उसमें बहुतायत में रक्त व मल के कण दिखाई देंगे। पुराने डायरीनुमा उपकरण के पन्नों में थोड़े कम, क्योंकि वरक इनमें कूटा जाता है इसलिए ये कण धीरे-धीरे उस वरक में मिलते जाते हैं।

(3) जिस घोल में यह डायरीनुमा उपकरण पीटा जाता है वह भी चमड़े का बना होता है। किसी भी चर्मकार को दिखाने पर वह उसकी पुष्टि कर देगा अर्थात् चमड़ा बता देगा। सूँघने व देखने पर भी इसका चमड़ा होना निश्चित है। **(आशुतोषकुमार जैन, 1073 ए, सेक्टर-1, रोहतक)**

फर्श आदि बनाते समय :

जिस प्रकार हमारे घर का आँगन, फर्श आदि सुन्दर होने चाहिए उसी प्रकार मंदिर-धर्मशाला आदि धार्मिक स्थलों के फर्श भी सुन्दर होने चाहिए। वास्तव में सबसे सुन्दर तो हमारा जिनालय ही होना चाहिए और होते ही हैं। जिस नगर/गाँव का जिनालय उस नगर के सभी घरों से श्रेष्ठ सुन्दर और ऊँचा होता है, उस नगर के नागरिकों के धन जन की समृद्धि होती है, धर्म एवं सुख-शान्ति वृद्धि को प्राप्त होती रहती है, वहाँ कभी व्यक्ति किसी भी दुर्लभ चीज के लिए भी परेशान नहीं होते हैं। आप मंदिर का फर्श दीवारें आदि अच्छी-से-अच्छी बनावें लेकिन बनाते समय थोड़ा विवेक रखें। मंदिर का फर्श काले या ऐसे डार्क रंग का नहीं बनावें कि उस पर चलने वाली छोटी-छोटी चींटियाँ/चींटे आदि दिखाई ही नहीं देवें। व्यक्ति चाहते हुए भी उनकी रक्षा नहीं कर पावे। कई दयालु गृहस्थ जो धर्म-कर्म कुछ भी नहीं जानते हैं वे भी अपने घर में भी हल्के रंग के अर्थात् सफेद पीले रंग के पत्थर लगवाते हैं। चिप्स आदि डलवाते हैं ताकि चलते-फिरते झाड़ू-पौंछा करते समय जीवों की हिंसा से बच सकें। फिर मंदिर तो हमारे धर्म करने का ही स्थान है वहाँ हम थोड़ा विवेक

रखकर फर्श बनावें ताकि हम और मंदिर में आने वाले हजारों लोग पाप से बच सकें, बच जावें।

इसी प्रकार दानदातारों के नाम लिखवाते समय भी ध्यान रखें। वैसे तो मंदिर में दातारों के नाम लिखने की परम्परा ही नहीं बनावें, क्योंकि यह संसारी प्राणी भोगों में ही रुचि रखता है वह भगवान के दर्शन करते-करते भी अपनी आँखों को संवृत नहीं कर पाता है और यदि सीढ़ी पर ही और आँगन में ही किसी का नाम लिखा हुआ मिल जावे तो वह उसको पढ़ने में नहीं चूकता है अर्थात् उसको पढ़े बिना रहना उसके लिए कठिन हो जाता है। फिर भी यदि आपके यहाँ फर्श बनाने वालों के नाम फर्श पर ही लिखे जाते हैं तो एक साइड में जहाँ किसी के पाँव नहीं लग पावें, लिखें/ लिखावें। क्योंकि चाहे किसी का भी नाम हो, कोई भी शब्द हो उन्हीं अक्षरों से बनता है जिन अक्षरों से जिनवाणी बनती है। उस नाम/शब्द पर भी पैर रखने वाले किसी अपेक्षा अप्रत्यक्ष रूप से जिनवाणी का अथवा श्रुत का अपमान करने वालों में ही आते हैं। उन्हें भी उन पर पाँव रखने से ज्ञानावरण कर्म का विशेष बन्ध होता ही है इसलिए जमीन पर तो नाम कभी नहीं लिखवावें। नाम लिखवाने वाला स्वयं सोचे कि आप नाम लिखवा भी देंगे तो भी जो आपको नहीं पहचानता है वह नहीं पहचान पायेगा और जो आपकी दानवृत्ति से, व्यक्तित्व से परिचित है वह तो बिना नाम लिखवाये भी आपको जानता ही है अत: नाम लिखवाने के चक्कर में नहीं पड़ें। यदि नाम लिखे ही जाते हैं तो ऐसे स्थान पर लिखें जहाँ पर पैर नहीं लग पावे।

इसी प्रकार अपने घर में भी फर्श बनाते समय ध्यान रखें। कई घरों में भी मुख्यद्वार पर Welcome वेलकम आदि अक्षर लिखे रहते हैं, भले ही वे अंग्रेजी भाषा के हों उनका भी अर्थ तो आपका स्वागत है, यही होता है इसलिए नहीं लिखवावें। इसकी अपेक्षा दरवाजे के ऊपर या दीवार आदि पर लिखवावें ताकि उन पर पैर नहीं लगे। हमें भी पाप का बन्ध नहीं हो और आने-जाने वालों को भी पाप का बन्ध नहीं हो। इसी प्रकार पैर पौंछने के पायदान में भी अक्षर लिखे रहते हैं, उन्हें खरीदते समय ध्यान रखें। आप अपने घर में घर मालिक दादा, पिता, बेटा, भैया आदि के नाम भी रास्ते में नहीं लिखवावें,

एक तरफ लिखवावें या दीवाल आदि पर लिखवावें ताकि पाप के बन्ध से बच सकें।

कागज का उपयोग करते समय :

संसार में कुछ कागज ऐसे होते हैं जिन पर लौकिक साहित्य लिखा रहता है, कुछ कागजों पर अश्लील वासनाप्रद उपन्यास, कॉमिक्स आदि लिखे रहते हैं, कुछ कागज प्रतिदिन की अथवा 2-4 दिन की खबर देने के लिए लिखे जाते हैं, छपते हैं उनका नाम न्यूज पेपर होता है। पत्रिका (पाक्षिक-मासिक साप्ताहिक आदि) में लौकिक या पारलौकिक साहित्यादि लिखे जाते हैं। कुछ कागजों पर जिनेन्द्र भगवान के द्वारा बताया गया मुनि श्रावक धर्म लिखा जाता है, उन्हें हम शास्त्र, आगम या धर्मगून्थ कहते हैं। चाहे कितना ही मजबूत और क्वालिटी का कागज हो, समय पाकर वह अवश्य नष्ट हो जाता है। वह धीरे-धीरे जीर्ण-शीर्ण होने लगता है। वर्तमान में प्रतिदिन लाखों की संख्या में न्यूज पेपर/पत्रिकाएँ छपते हैं। वे न्यूज पेपर एक दिन अथवा एक-दो घण्टे में पढ़ लिये जाते हैं। एक-दो दिन के बाद उस न्यूज पेपर का कोई महत्त्व नहीं रहता है। वह न्यूज पेपर एक प्रकार से रद्‌दी हो जाता है। इसी प्रकार पत्रिका आदि भी जिस महीने की है उसके बाद वह रद्दी जैसी ही हो जाती है। धार्मिक पत्रिका समाचार पत्र आदि का तो फिर भी लोग सम्मान करते हैं लेकिन उनकी भी संख्या अधिक हो जाने पर उनका भी सम्मान/विनय करना कठिन हो जाता है। कागज चाहे उपन्यास का हो या न्यूज पेपर का या शास्त्र का सामान्य से सबमें अक्षर तो जिनवाणी के ही होते हैं; फिर भी लोक में शास्त्र जी के कागज एवं न्यूज पेपर के कागज/अक्षरों में अन्तर माना गया है इसलिए शास्त्र-धर्म गून्थ/पुस्तक के कागज से तो कोई कभी-भी पोटी (मल) पेशाब, उल्टी आदि अस्पृश्य जिनको छूने पर हाथ आदि धोना आवश्यक है, चीजों को साफ नहीं करते हैं, उन्हें बिछाकर नहीं बैठते हैं। उन पर भोजन करना, उनसे आंगन आदि साफ करना, उन पर पैर रखना आदि को पाप समझकर बचते हैं लेकिन प्रमाद के कारण अनजान में या लापरवाही के कारण कभी-कभी ऐसा हो जाता है। व्यक्ति ऐसे काम कर लेता है। कभी-कभी किसी पत्रिका के 8-10 पृष्ठ पढ़कर लगता है कि इसमें धर्म की ऐसी कोई बात नहीं लिखी हुई है इसलिए इसका

उपयोग तो यद्वा-तद्वा कहीं पर भी किया जा सकता है परन्तु वह धर्म पत्रिका होने से उसमें कहीं भी किसी भी लेख/पृष्ठ पर शास्त्र की एक-आध गाथा / सूक्ति दोहा मंगलाचरण आदि उदाहरण या प्रमाण के रूप में लिख ही दिये जाते हैं। कहीं तो गाथा का मात्र चौथाई भाग या एक-दो शब्द लिखे रहते हैं उसे भी धर्म ग्रन्थ के बाहर का तो नहीं कहा जा सकता है। वे धर्म ग्रन्थ के दो-चार अक्षर सामान्य से दृष्टि में नहीं आते हैं। कभी-कभी तो ये पत्र-पत्रिकाएँ ऐसे स्थान पर डले हुए मिल जाते हैं /डले रहते हैं जहाँ उनकी कल्पना ही नहीं की जा सकती है। इस कारण भी व्यक्ति उसको उठाकर उपर्युक्त कार्य कर लेता है। कभी-कभी तो साधु के लिए इनका उपयोग कर लेने में कोई पाप बन्ध नहीं होता है, ऐसा सोचकर भी उनका उपयोग कर लिया जाता है लेकिन पापबन्ध के क्षेत्र में साधु और गृहस्थ, पापी और पुण्यात्मा का कोई विभाजन नहीं है इसलिए जो जैसा कार्य करता है उसे वैसा कर्म बँधता है चाहे वह किसी का बहाना बना कर करे।

एक दिन कुछ साधुओं को शौच के लिए जाना था। श्रावकों ने हाथ धोने के लिए मंदिर में ही एक तरफ डली हुई पत्रिकाओं को उठाकर राख की छोटी-छोटी पुड़िया बना ली। साधु एक-एक पुड़िया लेकर शौच के लिए चले गये। एक साधु जो पढ़ने के रसिक थे उसने राख से हाथ धोकर कागज को देखा तो उसे लगा कि शायद इस कागज में कुछ धर्म की बातें लिखी हैं। उसने कागज को ध्यान लगाकर पढ़ा तो उसमें श्री धवल जैसे सिद्धान्त ग्रन्थ के उद्धरण दिये गये थे। श्री धवल के सूत्र लिखे थे, टीका की पंक्तियाँ लिखी थीं। उसे देखकर साधु को बहुत दु:ख हुआ। उसने उसी दिन....। आप सोचें ऐसे कागज में पुड़िया बनाने वाले और पुड़िया ले जाने वाले को कितना पाप लगा होगा। भले ही यह सब अनजान में हुआ हो लेकिन प्रमादवृत्ति तो थी ही। यदि अक्षर वाले कागज में पुड़िया बनाने की परम्परा नहीं होती अथवा किसी अन्य प्रकार से राख ले जाने की परम्परा होती तो शायद ऐसी घटना नहीं घटती। उस पुड़िया को शौच जाते समय, शौच की शुद्धि के समय, शौच के हाथ धोते समय छूना ही पड़ता है। एक तरफ हम शौच के कपड़ों से जिनवाणी / शास्त्र को छूते नहीं हैं, छूने में पाप मानते हैं उसी कागज को लेकर हम शौच के लिए चले गये

तो पाप तो हुआ ही, **दूसरी बात** हाथ धोकर उस कागज को वहीं फेंककर आना पड़ता है। वह कागज कितने दिनों तक इधर-उधर उड़ता रहेगा। इसी प्रकार कभी-कभी न्यूज पेपर में भी धार्मिक समाचार अर्थात् साधु-सन्त के प्रवचन छप जाते हैं उनकी भी ऐसी ही दशा हो जाती है इसलिए राख की पुड़िया बनाते समय या भोजन करना (कहीं बाहर जाते हैं तब), पोटी आदि साफ करना, बैठना आदि कार्यों में किसी भी अक्षर वाले कागज का उपयोग नहीं करें। आप यह भी नहीं सोचें कि बिना अक्षर के इतने सारे नये कागज खरीदने में कितना पैसा बरबाद होगा और भोजन आदि करने के बाद कागज किसी काम के भी नहीं रहेंगे। यदि हम न्यूज पेपर पर भोजन कर लेंगे, बैठ जायेंगे, पोटी आदि साफ कर लेंगे तो बिना अक्षर वाले कागज पर जिनवाणी छपकर कई लोगों के उपकार का कारण बन सकती है, ऐसा कहना भी ठीक नहीं है, क्योंकि जितना पाप न्यूज पेपर आदि से यह काम करने में लगेगा उसका एक प्रतिशत भी पुण्य उन कागजों पर जिनवाणी छप जावे तो भी नहीं लगेगा। **दूसरी बात** उन पर जिनवाणी ही छपेगी ऐसा निश्चित कहा भी तो नहीं जा सकता है अत: ऐसा अविवेक नहीं करें।

शास्त्र रखने में :

कई लोगों को साहित्य खरीदने/रखने/पढ़ने का बहुत शौक होता है। वे जहाँ भी जाते हैं कोई-न-कोई सत्साहित्य/शास्त्र अवश्य खरीद कर लाते हैं। उनको वे एक बार पढ़ते हैं और रख देते हैं। एक के पास एक अथवा एक के ऊपर एक रखते-रखते कभी-कभी तो वे लुढ़क जाते हैं। लुढ़कते-लुढ़कते 4-8 वर्षों में तो वह एक ऐसा ढेर बन जाता है जिसे देखकर ऐसा लगता है कि इनको छुओ ही नहीं, क्या पता इनमें कितने जीव होंगे। एक दिन एक महिला एक टोकरा भर के शास्त्र जी लेकर आई। उसने कहा-''माताजी, इनमें से आपको कुछ आवश्यक हो तो ले लीजिए। शास्त्रों की ऐसी स्थिति देखकर कभी-कभी तो ऐसा लगता है कि एक-बार इनसे पूछ लूँ कि क्या तुम्हारे वस्त्र, खाने-पीने की वस्तुएँ भी ऐसी ही रखी हैं क्या? तुम्हारा घर भी ऐसा ही अस्त-व्यस्त है क्या? आपके वस्त्राभूषण, शृंगार की सामग्रियाँ आदि भी ऐसे ही रखी हैं क्या? कभी मैं पूछ भी लेती हूँ लेकिन पुस्तकें खरीदकर लाने वाले को यह

भी नहीं लगता है कि मैं शास्त्र पर कम-से-कम एक छोटा-मोटा कवर तो चढ़ा दूँ जबकि हम कभी बिना प्रेस किये कपड़े नहीं पहनते हैं, बिना पीकू-फाल के साड़ी का उपयोग नहीं करते हैं, क्योंकि उनके खराब होने की चिन्ता हमें लगी रहती है। हम पुस्तक पर कवर चढ़ा दें तो पुस्तक की उम्र बढ़ जाती है। कभी हाथ से फिसल जाने पर या कहीं रखने पर सीधी पुस्तक ही फटती है, गंदी होती है कवर चढ़ा देने पर पहले कवर गंदा होता है, कवर फटता है। कवर बदल कर उसको पुन: पूर्ववत् सुन्दर और नयी रखी जा सकती है, सुरक्षा की जा सकती है। पुस्तक को सुरक्षित रखकर एक वर्ष ज्यादा धर्मध्यान किया जा सकता है और जिनवाणी का विनय करके पुण्य कमाया जा सकता है।

कई लोग घर में रखे शास्त्रों को महीनों-वर्षों तक हिलाते ही नहीं हैं अर्थात् जब तक उसमें से कुछ देखने का काम नहीं पड़ता है तब तक उनको पलटते ही नहीं हैं। शास्त्रों को अलट-पलट नहीं करने से कई शास्त्रों में तो जाले लग जाते हैं, कई में छोटे-छोटे सैकड़ों जीव उत्पन्न हो जाते हैं, कई में कागज के कीड़े लग जाते हैं जिनके कारण शास्त्र के पेजों के बीच में छेद हो जाते हैं। एक शास्त्र में कीड़े लगने पर वे कीड़े आगे बढ़कर अनेक शास्त्रों में छेद कर देते हैं। कई शास्त्रों में नमी की हवा लगने से छोटे-छोटे सफेद रंग के खस-खस के दानों जैसे जीव पैदा हो जाते हैं। शास्त्र दीवाल से सटा कर रखे रहने से दीवाल की नमी के कारण उनमें काई लग जाती है। उस काई के कारण शास्त्र की बाइंडिंग तक गल जाती है। कई लोगों के घरों में शास्त्र ऐसे डले रहते हैं जैसे कचरा ही डला हो। कई लोग तो शास्त्र पर कवर चढ़ाने का कभी विचार ही नहीं करते हैं। कई लोगों के यहाँ शास्त्रों को रखने का स्थान नहीं होने से यहाँ से वहाँ और वहाँ से यहाँ रखते-रखते फट जाते हैं।

कई लोग शास्त्र को हाथ में लटका कर इस प्रकार ले जाते हैं जैसे-किसी बच्चे का कान पकड़ कर ले जा रहे हों। कई पढ़ने के लोभी मोटरसाइकिल की सीट की डिग्गी में ही शास्त्र रखकर सीट पर बैठ जाते हैं वे कहते हैं कि शास्त्र और सीट के बीच में गेप तो रहता ही है। जिस प्रकार नीचे के रूम में शास्त्र रखे हैं तो क्या उसके ऊपर वाले रूम में भी नहीं बैठ सकते हैं। यदि बैठ सकते हैं तो उस सीट पर बैठने में क्या तकलीफ? ऐसा कहने वालों को

शक्यानुष्ठान और अशक्यानुष्ठान की परिभाषा समझना चाहिए। जिसमें ज्ञान विषय की पराकाष्ठा है जो विवेकवान है वे तो सरस्वती भण्डार के ऊपर भी कभी पैर नहीं रखते हैं। वे तो जिनेन्द्र भगवान के समान जिनवाणी के ऊपर अर्थात् जहाँ जिनवाणी रखी है उस पर दीवाल आदि बनवा देते हैं जिससे जिनवाणी पर पैर नहीं लगे।

हम इतना विनय नहीं कर सकते हैं तो क्या डिग्गी में रखकर उस पर बैठने से भी नहीं बच सकते हैं। गाड़ी की सीट, फर्श आदि पर रखने से भी नहीं बच सकते हैं? यदि आप किसी साधु के दर्शन करने गये वह साधु जिस तख्त पर बैठा था उसी के नीचे यदि जिनवाणी के बस्ते कार्टून या पाटे आदि पर जिनवाणी रखी हो तो उन्हें देखकर आपको कैसा लगता है? क्या उस जिनवाणी को देखकर आपके मन में ऐसा विकल्प नहीं आता है कि क्या इस साधु में इतना विवेक भी नहीं है कि अपने तख्त के नीचे ही जिनवाणी रखे है? किसी के घर में यदि जमीन में ही पुस्तकों की स्टाल जैसी जिनवाणी जमी हो तो आपको कैसा लगता है? तीसरी बात यदि आप जिनवाणी का महत्त्व समझते हैं तो सीट की डिग्गी में जिनवाणी रखकर उस पर बैठते समय आपको यह नहीं लगता है कि मैं जिनवाणी पर ही बैठा हूँ। चौथी बात स्वाध्याय करने के नियम में बताया है कि स्वाध्याय करते समय जिनवाणी कम से कम नाभि के ऊपर तो होनी ही चाहिए तो सीट के नीचे रखना कितना उचित है? इन सबसे हम बच सकते हैं इसी को शक्यानुष्ठान कहते हैं; फिर क्यों हम प्रमाद करके नरक का द्वार खोलें?

स्वाध्याय करते समय :

अधिकतर लोगों को तो यह पता ही नहीं रहता है कि हमें शास्त्र किस समय, किस प्रकार पढ़ना चाहिए। वे इन सब बातों पर ध्यान नहीं देते हुए जहाँ कहीं और जब कभी शास्त्र लेकर पढ़ने बैठ जाते हैं। पढ़ने के लोभ में अथवा अज्ञानता के कारण उन्हें यह भी ध्यान नहीं रहता है कि हम कहाँ बैठकर स्वाध्याय कर रहे हैं। ऐसा करने से हमें भविष्य में कैसा फल मिलेगा? कई घरों में अटेच रूम होते हैं तो लेटि-न और शास्त्र के बीच में केवल एक दीवाल

का अन्तर रहता है। कभी-कभी अण्डरग्राउण्ड नाली होती है तो नाली के ऊपर ही बैठकर शास्त्र पढ़ लिया जाता है। आप सोचें नाली में कौन-सी गन्दगी नहीं होती है। किसी-किसी घर/धर्मशाला में सबसे नीचे लेटि-न-बाथरूम होते हैं। दूसरी-तीसरी मंजिल पर लेटि-न-बाथरूम नहीं बनाते हैं तो लेटि-न-बाथरूम पर ही कमरा बन जाता है। उस कमरे में लेटि-न बाथरूम तो नहीं होते हैं लेकिन उस कमरे के नीचे लेटि-न का गड्ढ़ा तो होता ही है। ऐसे स्थानों पर बैठकर स्वाध्याय करना कितना उचित है आप स्वयं विचार करें।

कई लोग पैर के तलवे में हाथ फेरते जाते हैं। कई लोग नाक साफ करते जाते हैं और उन्हीं हाथों से पुस्तकें उठाते हैं, पेज पलटते रहते हैं। सज्जन-सभ्य लोग पैरों के हाथ लग जाने पर उन हाथों से अपने या दूसरों के उत्तमांग अर्थात् नाभि के ऊपर के अंगों को नहीं छूते हैं, क्योंकि पैरों में रास्ते की धूल आदि गंदी वस्तु भी लगी रह सकती है और नाभि से नीचे के अंग लोक में अपवित्र माने गये हैं। ऐसे हाथों से जिनवाणी को कैसे छुआ जा सकता है ? अचानक भूल से पैर का पुस्तक से स्पर्श हो जाने पर तत्काल उसका प्रायश्चित्त लिया जाता है और उसको हाथ से छूकर शिर पर चढ़ाया जाता है। इससे भी स्पष्ट है कि पैरों से स्पर्श किये हाथों से जिनवाणी को नहीं छूना चाहिए। ऐसा करने से हिंसा भले ही नहीं हो परन्तु प्रमादवृत्ति के कारण पाप का बन्ध तो अवश्य होता है। अत: ऐसा नहीं करना चाहिए।

कई लोग मुँह में गुटखा-पाउच, सौंफ-इलायची आदि चबाते-चबाते अर्थात् इनको खाकर बिना कुल्ला किए ही चना, मूँगफली, ककड़ी, एपल, केला आदि खाते-खाते ही जिनवाणी, शास्त्र, पुस्तक आदि पढ़ते रहते हैं। वे यह नहीं सोचते हैं कि हम जूठे मुँह जिनवाणी को कैसे छुएँ? आचार्य महाराज ने भोजन करते समय मौन रखने का विधान किया है अर्थात् बोलते-बोलते खाने का निषेध किया है। खाते-खाते बोलने का फल बताते हुए कहा है कि ऐसा व्यक्ति कुभोगभूमि में जाकर उत्पन्न होता है। वहाँ एक कान ही इतना बड़ा मिलता है कि उसी को ओढ़ लो और उसी को बिछा लो, क्योंकि उसने जूठे मुँह से जिनवाणी के अक्षरों का उच्चारण किया है। जूठे मुँह बोलने का ही ऐसा फल है तो जिनवाणी को छूने का क्या फल मिलता होगा? दूसरी बात जिनवाणी

के अक्षरों का जूठे मुँह से उच्चारण करने से जिनवाणी का अविनय होता है। संसार में सभ्य लोग अपने गुरुजनों के सामने यद्वा-तद्वा प्रवृत्ति नहीं करते हैं। जिनवाणी भी बहुत पूज्य है, जूठे मुँह उसको कैसे पढ़ सकते हैं। मेरे विचार से तो लौकिक पुस्तकें भी जूठे मुँह नहीं पढ़नी चाहिए, क्योंकि उन पुस्तकों में ये ही अक्षर होते हैं।

कई लोग सोफे पर बैठ/लेटकर, बिस्तरों में ही बैठे-बैठे जिनवाणी (बड़े-बड़े ग्रन्थ) पढ़ते हैं। उनके मन में इतना-सा विचार भी उत्पन्न नहीं होता है कि जिन बिस्तरों को छूकर सभ्य लोग रसोई घर में नहीं जाते हैं, बिस्तर पर सोने के बाद बिना नहाये किसी चीज को स्पर्श नहीं करते हैं। डॉ. वैद्य भी बिस्तरों पर बैठकर खाना-पीना सैकड़ों रोगों का कारण बताते हैं और सच पूछो तो जिस बिस्तर पर वासना की उत्पत्ति एवं पूर्ति होती है उस बिस्तर पर बैठने वाले का मन पवित्र कैसे हो सकता है ? उस बिस्तर पर बैठकर जिनवाणी पढ़ने वाले के भाव अच्छे कैसे हो सकते हैं? वह जिनवाणी का सही अर्थ कैसे ग्रहण कर सकता है। जहाँ लेटि-न और लघुशंका के कपड़ों से जिनवाणी पढ़ने में भी ज्ञानावरणादि कर्मों का बन्ध होता है तो जो बिस्तरों में बैठकर ही जिनवाणी पढ़ते हैं उनको क्या फल मिलता होगा। क्या मिलेगा, वे स्वयं इस बात को सोचकर स्वाध्याय करें।

कई लोग ट-ेन बस जीप कार आदि में बैठे-बैठे धार्मिक पुस्तक-जिनवाणी पढ़ते हैं। ट-ेन के हर डिब्बे में लेटि-न होती है। लेटि-न के पास बैठकर शास्त्र पढ़ना और ट-ेन की पटरी में भी जगह-जगह मल-मूत्र पड़ा रहता है। उस मल-मूत्र और हमारे बीच में मात्र एक-दो फुट का अथवा ऊपर की बर्थ पर बैठे हों तो 5-7 फुट का अन्तर होता है। क्या वहाँ जिनवाणी पढ़ना उचित है? जिस प्रकार सड़क पर हर प्रकार की गन्दगी डली रहती है उसी प्रकार बस आदि के पहिये में भी हर प्रकार की गन्दगी चिपकी रहती है। हम उस पर बैठकर जिनवाणी का अध्ययन कैसे कर सकते हैं? एक दिन एक स्वाध्यायशील नव युवक की गाड़ी रखी थी। हम लोग उधर से निकल रहे थे तो मैंने झाँक कर उसकी गाड़ी में देखा, क्योंकि मुझे कुछ ऐसी ही शंका हो रही थी तो गाड़ी में सीट पर 'समाधितंत्र' नामक पुस्तकें रखी थीं। मेरे अनुमान से ऐसे अविवेकी

लोग तो गाड़ी की सीट पर ही क्यों, सीट के नीचे, पैर फैलाने के स्थान पर और गाड़ी के फर्श पर भी श्री धवल, समयसार, नियमसार आदि ग्रन्थ रख दें तो कोई आश्चर्य वाली बात नहीं है, क्योंकि उन्हें तो मात्र ज्ञान के अर्जन से प्रयोजन है, जिनवाणी के विनय और बँधने वाले पाप-पुण्य से कोई प्रयोजन नहीं है। पूर्वोपार्जित पुण्य एवं ज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम से सम्भव है वर्तमान में ऐसा करते हुए भी उनके ज्ञान की वृद्धि होती रहे। लेकिन जब उन्हें जिनवाणी के अविनय का फल मिलेगा तब समझ में आयेगा। **दूसरी बात** गाड़ी में तो किसी प्रकार की शुद्धि हो ही नहीं सकती है, क्योंकि गाड़ी में M.C.वाली महिलाएँ भी बैठी रहती हैं। कई बार तो गाड़ी में प्रसूति भी हो जाती है। घर की गाड़ी हो तो भी प्रसूति होने के बाद सामान्य रूप से गाड़ी की सफाई हो सकती है, विशेष नहीं। कभी प्रसूति के दो-चार दिन बाद ही गाड़ी में प्रसूति वाली महिला को लाना पड़ता है, वह गाड़ी अशुद्ध हो जाती है। आज के युग में फिर शुद्धि का इतना ध्यान रखा भी नहीं जाता है इसलिए मेरे विचार से तो शास्त्र लेकर गाड़ी में पढ़ने की बात तो बहुत दूर, बैठना भी नहीं चाहिए।

प्रश्न - यदि शास्त्र लेकर गाड़ी में बैठ भी नहीं सकते हैं तो एक गाँव से दूसरे गाँव अथवा जहाँ से शास्त्र छपे हैं वहाँ से शास्त्र हमें कैसे प्राप्त हो पायेंगे?

उत्तर - आपका कहना सत्य है। आज से लगभग 24-25 वर्ष पहले हम लोग कोठिया गाँव (राज.) गये थे। वहाँ के पण्डित जी ने अपने जीवन का एक संस्मरण सुनाया था। उन्होंने कहा-माताजी ! मुझे एक बार गोम्मटसार जीवकाण्ड ग्रन्थ पढ़ना था। हमारे गाँव में ग्रन्थ नहीं था इसलिए मैं हमारे पास के गाँव शाहपुरा (जो...कि.मी. दूर है) से गृंथ लेने के लिए गया। मैंने जब वहाँ के पण्डित जी से ग्रन्थ के लिए निवेदन किया तो उन्होंने कहा-भाई, मैं आपको इस शर्त पर ग्रन्थ दे सकता हूँ कि आप यहाँ से शुद्ध धोती-दुपट्टा पहन कर अपने सिर पर ग्रन्थ को विराजमान करके ले जावें एवं अध्ययन करके पुन: इसी विधि से हमारे पास पहुँचावें। मैंने उनकी शर्त को स्वीकार किया और इसी विधि से ग्रन्थ लाकर अध्ययन करके वापस उनके पास पहुँचाया। इसी प्रकार एक व्यक्ति ने बताया-माताजी! हमें पण्डित जी छहढ़ाला पढ़ाते थे तो

हमें भी शुद्ध धोती-दुपट्टा पहनने पर ही पढ़ाते थे। 30-40 वर्ष पहले जिनवाणी का इतना विनय था। ठीक है, हम इतना विनय नहीं कर सकते हैं तो कम-से-कम शुद्ध स्थान पर व्यवस्थित ढंग से बैठकर तो पढ़ सकते हैं। हम इस विधि से ग्रन्थ नहीं ला सकते हैं तो पैर पर रखकर या जमीन में डालकर तो नहीं लावें, हम गाड़ी में उच्चस्थान पर विराजमान करके तो ला सकते हैं।

प्रश्न - जिनवाणी ही तो हमारे लिए सर्वस्व है। हम जिनवाणी के बिना एक क्षण भी नहीं रह सकते हैं। क्या पता कब हमारे आयु का बन्ध हो जाय/आयुबन्ध का समय आ जाय अथवा आयु खतम हो जावे तो यदि हम जिनवाणी पढ़ते रहेंगे तो हमारे खोटी आयु का बन्ध नहीं होगा। इसलिए हम बिस्तर में भी शास्त्र पढ़ते हैं। यदि हम बिस्तर को छू करके या बिस्तर में बैठकर जिनवाणी नहीं पढ़ेंगे तो हम कभी जिनवाणी पढ़ ही नहीं सकेंगे। हमारे लिए तो जिनवाणी पढ़ना ही दुर्लभ हो जायेगा, क्योंकि दिन में तो हमें वैसे ही शास्त्र पढ़ने का समय नहीं मिलता है और बिस्तर में बैठकर पढ़ने का आपने निषेध कर दिया तो हम रात में भी नहीं पढ़ पायेंगे। तो हम शास्त्र कब पढ़ेंगे?

उत्तर - ऐसा कहने वालों से मैं पूछना चाहती हूँ कि वे दुकान पर छल-कपट करते समय, झूठ बोलते समय, रोटी बनाते, कपड़े धोते समय यह बात क्यों नहीं सोचते हैं कि यदि अभी (छल-कपट आदि करते समय) मेरे आयु बन्ध का काल आ जायेगा तो खोटी आयु बँध जायेगी। इसलिए मैं छल-कपट नहीं करूँ। ये पापारम्भ नहीं करूँ, अभक्ष्य पदार्थों का भोग नहीं करूँ। टी.वी. नहीं देखूँ, क्योंकि इन सब कार्यों में भी तो पाप का ही बन्ध होता है। इन सब कार्यों को करते समय भी तो खोटी आयु का ही बन्ध होगा। यदि सच में आपको यह भय है कि कहीं मुझे खोटी आयु का बन्ध नहीं हो जाये तो आप इन पापात्मक कार्यों को छोड़ दीजिए। आप लड़ना-झगड़ना, आर्त्त-रौद्र भाव करना छोड़ दीजिए, क्योंकि ये दुर्गति के कारण हैं; आप जिनवाणी नहीं पढ़ेंगे तो भी आपको कभी खोटी आयु का बन्ध नहीं होगा। स्वाध्याय करने से या स्वाध्याय करते समय भी यदि आपमें विवेक नहीं है, आप द्रव्य क्षेत्र काल भाव की शुद्धि का ध्यान नहीं रख पाते हैं, आप पक्षव्यामोह का चश्मा लगाकर शास्त्र पढ़ रहे हैं तो आपको खोटी आयु का ही बन्ध होगा क्योंकि

आपने बाह्य स्वाध्याय रूप क्रिया तो अच्छी कर ली लेकिन आयुबन्ध का विशेष सम्बन्ध बाह्य क्रियाओं से नहीं अभ्यन्तर क्रियाओं से होता है। इसलिए यदि आपके पास द्रव्यादि की अनुकूलता हो तो आप अवश्य स्वाध्याय करें लेकिन यदि आपके पास द्रव्य, क्षेत्र आदि की अनुकूलता नहीं है तो आपको जो पाठ कण्ठस्थ है अथवा आपको जिनवाणी सम्बन्धी जो भी आता है उसका चिन्तन करें, मनन करें, आप महापुरुषों के जीवन का स्मरण करें। भले ही आप लेटि-न में बैठे हों, अस्पताल में हों और चाहे आप कितनी भी आपत्ति में हों आप पुस्तक/शास्त्र नहीं पढ़ पा रहे फिर भी आपको खोटी आयु का बन्ध नहीं होगा, क्योंकि आपके भावों में धर्म है और आपने धर्म करने के लोभ में यद्वा-तद्वा स्थान पर स्वाध्याय किया तो निश्चित रूप से खोटी आयु का ही बन्ध होगा। अत: आप स्वाध्याय करने के पहले द्रव्यादि की शुद्धि का ध्यान अवश्य रखें।

कई महिलाएँ तो व्यावहारिक शुद्धि भी भूल जाती हैं। उपर्युक्त विधि से ही विचार करती हुई प्रसूति के समय धार्मिक ग्रन्थ तो नहीं पढ़ती हैं क्योंकि उसकी आत्मा 'हाँ' नहीं भरती है। उसे पता है कि ऐसी स्थिति में शास्त्र पढ़ने से मुझे भारी पाप का बन्ध होगा। लेकिन वह अपनी आत्मा को समझा-बुझा कर धार्मिक पत्रिकाएँ पढ़ लेती है लेकिन पत्रिका में भी आचार्य महाराज की गाथाएँ, श्लोक, छन्द दिये ही रहते हैं, उन्हें पढ़ने में भी पाप का बन्ध होता है। ऐसा करने वाले मूर्ख, अज्ञानी बनेंगे। बहुत बार पढ़-पढ़कर भी कुछ याद नहीं रख पायेंगे। कुछ नहीं समझ पायेंगे। विद्वानों के बीच में ऐसे ही लगेंगे जैसे हंसों के बीच में बगुला लगता है। अत: आप विवेक पूर्वक स्वाध्याय करें।

सावधानी :

(1) कैसी भी परिस्थिति हो, लेटि-न आदि के कपड़ों से जिनवाणी का स्पर्श नहीं करें।

(2) प्रसूति आदि अशुद्ध अवस्था में स्मरण, मनन, चिन्तन करके भावों को सुधारते रहें।

(3) स्वाध्याय करते समय नाभि के नीचे के अंगों को स्पर्श नहीं करें।

(4) यदि कुछ खाया है तो कुल्ला किये बिना जिनवाणी को नहीं छुएँ/नहीं पढ़ें।

(5) घर में विशेष ग्रन्थ नहीं रखें, ताकि अविनय नहीं हो।

(6) छोटे ग्रन्थों को भी पेटी या अलमारी में रखें ताकि अशुद्धि के समय छूने का एवं देखने का विकल्प नहीं हो।

(7) यदि बच्चे नासमझ हैं तो भले ही चाबी वहीं रखें लेकिन ताला लगाकर रखें ताकि बच्चे यद्वा-तद्वा हाथों से नहीं छुएँ।

(8) वाहन में बैठे हैं तो शास्त्र जिनवाणी नहीं पढ़ें। इससे आपको दोहरा लाभ होगा।

(1) आपको ज्ञानावरण कर्म का बन्ध नहीं होगा।

(2) आपकी आँखें कमजोर नहीं होंगी।

(9) सिद्धान्त ग्रन्थों को पढ़ते समय शुद्धि का विशेष ध्यान रखें।

(10) स्वाध्याय के लिए एक धोती-दुपट्टा अलग रख लें। उन्हें ही पहनकर स्वाध्याय करें।

(11) यदि सेप्टिक टेंक पर कमरा बना है, अण्डरग्राउण्ड से नाली है तो उस स्थान पर स्वाध्याय नहीं करें।

(12) सबसे अच्छा मंदिर में स्वाध्याय करें या एकान्त में साधना कक्ष बनाकर वहाँ स्वाध्याय करें।

अकाल में अध्ययन का फल :

कई लोग संधिकाल में अर्थात् सुबह और शाम को सूर्य अस्त होने के पहले और बाद में जिसे काल का समय कहा जाता है, जिस समय लोक में झाडू नहीं लगाया जाता है, यद्वा-तद्वा नहीं बोला जाता है वह संधिकाल है उस समय भगवान की दिव्य देशना होती है। उस समय सिद्धान्त ग्रन्थ नहीं पढ़े जाते हैं। फिर भी ज्ञानवृद्धि के लोभ में पढ़ लेते हैं लेकिन यह उचित नहीं है। अकाल में अध्ययन का फल बताते हुए आचार्य महाराज ने एक मुनिराज की कथा शास्त्रों में लिखी है -

शिवनन्दी मुनि ने अपने गुरु से यद्यपि यह जान रखा था कि स्वाध्याय का काल/समय श्रवण नक्षत्र का उदय होने के बाद माना गया है तथापि कर्मों के तीव्र उदय से वे अकाल में ही शास्त्राध्ययन किया करते थे। इसका फल

यह हुआ कि उन्होंने मिथ्या मरण अर्थात् असमाधि से मरण करके गंगा में एक भारी मच्छ की पर्याय धारण की। एक दिन नदी के किनारे पर एक मुनिराज शास्त्र अध्ययन कर रहे थे। उस मच्छ ने उनके पाठ को सुन लिया। उससे उसको जातिस्मरण हो गया...। एक मुनिराज ने अकाल में अध्ययन किया जिससे उसी भव में उनकी गर्दन टेढ़ी हो गई थी। इसी प्रकार आज भी अकाल में अध्ययन करने के अनेक दुष्फल दिखाई देते हैं इसलिए भले ही कम अध्ययन कर पावें लेकिन कालादि की शुद्धि पूर्वक करेंगे तो थोड़ा पढ़ने पर भी आपके ज्ञान की बहुत वृद्धि होगी और अकाल में यदि आप अधिक भी पढ़ेंगे तो आपके ज्ञान की इतनी वृद्धि नहीं होगी और उसके साथ पाप का बन्ध विशेष होगा। अत: लोभ के वश में होकर काल का उल्लंघन नहीं करें।

जीर्ण-शीर्ण जिनवाणी का क्या करें :

कई लोगों में तो इतना अविवेक होता है कि वे ग्रन्थों को जला देते हैं। यद्यपि जलाते समय उनकी आत्मा गवाह नहीं देती है फिर भी पक्ष व्यामोह के कारण जलाते हैं। वे सोचते हैं कि इन ग्रन्थों से मिथ्यात्व का प्रचार-प्रसार होता है। लोग इनको पढ़कर भ्रमित होते हैं इसलिए इनको जला देने पर न रहेगा बाँस और न बजेगी बाँसुरी अर्थात् न ये शास्त्र रहेंगे और न मिथ्यात्व का प्रचार होगा। उनको सोचना चाहिए कि संसार में मात्र एक प्रतिशत शास्त्र/साहित्य होगा जिनसे जिनेन्द्र भगवान के मार्ग का प्रचार प्रसार होता है, बाकी सब तो मिथ्यामत/संसार के मार्ग का, विषय-कषाय का ही पोषण करने वाले हैं। आप किन-किन शास्त्रों को जलाएँगे? यह बात अलग है कि हम इनको अलग करें। अपने घर/मंदिर में नहीं रखें अथवा ऐसे स्थान पर रख दें जो किसी के हाथ में नहीं आवे। जलाना तो उचित नहीं कहा जा सकता है। आप उन्हें जहाँ कागज बनता हो वहाँ सीधा भेज सकते हैं। अथवा जहाँ धार्मिक साहित्य इकट्ठा करके एक साथ पुन: उसका कागज बनवाकर जिनवाणी छपवाने की योजना हो वहाँ भेज दें ताकि उनका उपयोग हो जावे। इसी प्रकार घर में रखे हुए कलेण्डर कार्ड छोटी-मोटी धार्मिक पुस्तकें जीर्ण-शीर्ण, हस्तलिखित कॉपी, डायरी आदि को भी न जलावें, न रद्दी में बेचें और न ही घर में रखे रहें। इन सबको भी ऐसे ही स्थानों पर भेज दें ताकि उनका अविनय न हो और जलाने का पाप भी नहीं

करना पड़े।

कई लोग धार्मिक शास्त्र आदि को पानी में बहा देते हैं यह भी एक विधि है लेकिन छोटे-मोटे कुँए, तालाब आदि में डाल देने से भी उनका अविनय ही होता है, क्योंकि छोटे-छोटे तालाबों में लोग शौच जाकर धोते हैं, साफ करते हैं। कोई गन्दे और अशुद्ध वस्त्र धोते हैं। कोई नहाते हैं कोई चप्पल-जूते आदि धोते रहते हैं। वहाँ का पानी बहता नहीं है इसलिए गन्दगी उसी में घुलती रहती है, ऐसे तालाब आदि में जिनवाणी का विसर्जन करना तो अविवेक ही है। हाँ, जो नदियाँ बहुत वेग से बहती हैं उनमें जिनवाणी का विसर्जन किया जा सकता है लेकिन ऐसी नदियाँ हर गाँव में और हर गाँव के निकट नहीं मिल सकती हैं। ऐसी नदियाँ तो श्रावण-भादवे अर्थात् बारिस के दिनों में कदाचित् ही मिलती हैं। उसमें बहाते समय भी विशेष ध्यान रखना चाहिए, क्योंकि कागज में बहुत जल्दी जीव उत्पन्न होते हैं फिर चातुर्मास के समय में तो विशेष ही जीव उत्पन्न होते हैं। इसलिए नदी में बहाने के पहले एक-एक कागज को अच्छी तरह से झाड़-फटक कर साफ करके विसर्जित करें अन्यथा उनमें रहने वाले लाखों-करोड़ों जीव पानी में डूबकर मर जाएँगे। इससे जितना जिनवाणी के विनय का फल नहीं मिलेगा उससे ज्यादा जीवों की हिंसा का पाप बन्ध हो जायेगा। अत: पानी में विसर्जित करने की अपेक्षा उपर्युक्त अर्थात् किसी संस्थान में भेज दिये जायें तो भारत की सम्पत्ति की रक्षा भी होगी और जिनवाणी का विनय भी होगा। संस्थान वाले जो वाचनालय में विराजमान करने के योग्य होगी उन्हें वाचनालय में रख देंगे और जो जीर्ण-शीर्ण हो गई हैं उनका कागज बना लेंगे। कभी-कभी अच्छे ग्रन्थ भी हमारे घर में रखे रहते हैं। यदि घर में उचित स्थान नहीं है तो उन्हें भी योग्य पात्र को दे दें या उचित स्थान पर रख दें ताकि उनका योग्य विनय हो सके।

आप अपने अन्दर से अनुभव करें कि आपने जब जिनवाणी को जलाया या डुबोया था तब आपको कैसा लगा था। आज भी जब वह बात याद आती है तो आपको कैसा लगता है, क्या आपको ऐसा नहीं लगता है कि कहीं जिनवाणी को जलाने-डुबोने से मुझे पाप तो नहीं लगा होगा, कहीं इससे मेरा भविष्य खराब तो नहीं हो जायेगा; कहीं अगले भव में मैं मूर्ख तो नहीं बनूँगा, कहीं

ऐसा करने से मेरे घर में विघ्न-बाधाएँ तो नहीं आ जावेंगी आदि-आदि विचार उत्पन्न नहीं होते हैं, यदि होते हैं तो निश्चित यह काम अच्छा नहीं होगा। कुछ दिन पहले एक व्यक्ति जिसने लगभग 10-15 वर्ष पहले जिनवाणी (शास्त्र) को जलाया था, प्रायश्चित्त लेने के लिए आया। उसने कहा-माताजी! यद्यपि मैंने किसी...की प्रेरणा से ही दो बोरे भर के शास्त्र जलाए लेकिन अब तक भी जब-कभी उसका टेंशन होता रहता है। ऐसा करने में **पहली बात** तो हम समझ रहे हैं कि यह जिनवाणी है, कह भी रहे हैं कि मैं जिनवाणी को जला दूँगा या मैंने जिनवाणी को जलाया था, यही पाप है क्योंकि यदि कोई अन्य पुस्तक/वस्तु को भी जिनवाणी समझ/मान कर जलाता है तो उसे जिनवाणी जलाने का पाप लगता ही है। जिस प्रकार यशोधर राजा ने मुर्गा समझकर आटे के मुर्गे की भी बलि चढ़ाई थी तो भी उनको मुर्गे की बलि चढ़ाने का पाप लगा ही था इसलिए पाप लगेगा ही। **दूसरी बात** जलाने में जीवों की हिंसा हुई उसका पाप तो लगता ही है, क्योंकि इस प्रकार जलाते समय जिनवाणी को फटकना, साफ करना, उसमें जीवादि को देखने का तो अवसर ही नहीं है। **तीसरी बात** चाहे न्यूज पेपर में हो, पत्थर पर खोदे गये हों अथवा कहीं पर भी कोई भी अक्षर लिखा हुआ हो उस पर पैर रखना, रौंदना, फाड़ना आदि भी पाप का कारण है, क्योंकि जो अक्षर न्यूजपेपर आदि में लिखे गये हैं उन्हीं अक्षरों से जिनवाणी/गृंथों की रचना हुई है, उन्हीं अक्षरों को जमाकर सिद्धान्त (धर्म) की बातें लिखी गई हैं। जैसे – म हा वी र शब्द ही मिलकर चौबीसवें तीर्थंकर का नाम बन जाता है वह पूज्य होता है। इसलिए समझदार लोग अशुद्धि के समय, लेटि-न-बाथरूम आदि के समय अक्षर वाले कागज आदि का उपयोग नहीं करते हैं, उस पर रखकर भोजन नहीं करते, उस पर बैठते नहीं हैं आदि....। अत: विवेक पूर्वक कार्य करें ताकि पापों से बच सकें।

इसी प्रकार कई साड़ी आदि वस्त्रों में भी णमोकार आदि मंत्र लिखे रहते हैं, कई बर्तनों पर मंत्र लिखे रहते हैं, उनका उपयोग करते समय ध्यान रखें।

(1) यदि कोई बड़े लोग जिनवाणी जलाने के लिए कहें तो आप मना कर दें, पाप नहीं लगेगा। मना नहीं कर सकते तो बात टाल दूसरे काम में

लग जावें अर्थात् उस बात में रुचि नहीं लें, अपने आप सब ठीक हो जायेगा।

(2) यदि आप सक्षम हैं तो समाज के सब घरों से जिनवाणी इकट्ठी करके जहाँ कागज बनता है, पहुँचा दें। मंदिर में सूचना लिख कर जिनवाणी इकट्ठी की जा सकती है।

(3) यदि कभी द्वेष बुद्धि या किसी के कहने से जिनवाणी जलाई है तो प्रायश्चित्त अवश्य करें।

(4) यदि साड़ी, शर्ट आदि में धार्मिक मंत्रादि लिखे हैं तो उन्हें अशुद्धि आदि के समय नहीं पहनें।

(5) न्यूज पेपर आदि अक्षर वाले कागज से मल आदि साफ नहीं करें, पैरों आदि में नहीं डालें तो भी चल सकता है।

अतिथि संविभाग में

पड़गाहन में :

कई लोगों के घर में विधान आदि के मंगल कलश रखे रहते हैं। उन पर कपड़ा लगा रहता है। उसके गले में धागा (पंचरंगी) बँधा रहता है। साधु का पड़गाहन करने के लिए वे ही कलश लेकर खड़े हो जाते हैं। वे स्वयं सोला के शुद्ध वस्त्र पहने रहते हैं लेकिन उन कलशों के स्पर्श से उनके वस्त्र भी अशुद्ध हो जाते हैं। कई लोग पहले दिन जिन कलशों में पानी भरकर पड़गाहन करते हैं उन्हीं कलशों को 4-8 दिन तक भी वैसे के वैसे रखे रहते हैं, खाली नहीं करते हैं, उन कलशों का पानी बिना छना तो हो ही जाता है, साथ ही इतने दिनों तक लोटे में भरा रहने से उसमें विशेष जीव भी उत्पन्न हो जाते हैं।

कई लोग यह सोचकर कि मैं साधु का पड़गाहन नहीं कर पाऊँगा तो साधु मेरे से आहार नहीं लेंगे अथवा पड़गाहन करके आहार देने में बहुत अच्छा लगता है, फल ज्यादा मिलता है, अशुद्ध वस्त्रों से ही साधु का पड़गाहन कर लेते हैं, उसके बाद वस्त्र बदलकर आहार देते हैं लेकिन उनको सोचना चाहिए कि पड़गाहन के समय भी तो शुद्धि बोलना ही पड़ती है; उस समय काय शुद्धि/ वस्त्र शुद्धि बोलने में क्या असत्य नहीं है, उसका पाप नहीं लगेगा, अवश्य ही लगेगा। अत: अशुद्ध वस्त्रों से पड़गाहन भी नहीं करें।

कई लोग, साधु का पड़गाहन हो गया है, पड़गाहन करने वाले साधु की परिक्रमा लगा रहे हैं, वे छुपकर उनके बीच में घुसकर परिक्रमा लगाने लगते हैं। ऐसा करने से कोई पड़गाहन एवं भक्ति का फल नहीं मिल जाता है लेकिन ऐसा करने से कभी-कभी साधु को अच्छा नहीं लगता है तो साधु उस गृहस्थ के यहाँ से लौट जाता है अथवा अलाभ/उपवास कर लेता है तब हमें पश्चाताप ही करना पड़ता है इसलिए भक्ति से पड़गाहन करें, किसी के बीच में नहीं घुसें अन्यथा पुण्य के स्थान पर पाप का आस्रव होगा।

कभी-कभी दो-तीन चौके वाले पास-पास में खड़े होकर पड़गाहन करते हैं। साधु अलग-अलग श्रावकों को नहीं पहचान पाते हैं। इसलिए वे दोनों श्रावकों के बीच में जाकर खड़े हो जाते हैं तो दोनों श्रावकों में लड़ाई हो जाती है, दोनों ही सोचते हैं कि महाराज को मैं अपने घर में ले जाऊँगा। इस प्रकार करते-करते जब कोई निर्णय नहीं हो पाता है तो साधु को मजबूर होकर कभी तो उपवास कर लेना पड़ता है और कभी तीसरे श्रावक के यहाँ जाना पड़ता है। क्या ऐसा करना अच्छा है? सही है? नहीं, अत: पहले तो आप पड़गाहन करने के लिए दूर-दूर खड़े होवें। यदि पास-पास हो गये हैं तो झगड़ा नहीं करें। अगर सामने वाला हठ कर रहा है तो उसी के यहाँ साधु को ले जाने दें ताकि साधु का आहार अच्छे से हो जावे। उसमें भी आपको पुण्य का ही बन्ध होगा। यही विवेक है और साधु की वैयावृत्य है।

सावधानी :

(1) यदि नये कलश लेकर पड़गाहन करना है तो उसका धागा, कपड़ा आदि पहले से ही अलग कर लें।

(2) कभी खाली कलश से पड़गाहन नहीं करें। पानी के स्थान पर हल्दी, बादाम, सिक्का, सरसों आदि मंगल द्रव्य भी डाले जा सकते हैं।

(3) यदि कलश में पानी भरकर पड़गाहन किया है तो रोज पानी खाली करने का ध्यान रखें अन्यथा दो-तीन दिन कलशों में पड़ा पानी सड़ जायेगा, उसमें से बदबू आने लगेगी।

(4) पड़गाहन की सामग्री को पड़गाहन के बाद व्यवस्थित करने के लिए किसी को जिम्मेदारी अवश्य सौंप दें ताकि आहार देते समय उस सम्बन्धी विकल्प

नहीं आवे।

(5) केवल अपने यहीं आहार की भावना नहीं रखे, साधु के निरन्तराय आहार की भावना रखें ताकि पड़गाहन के समय लड़ाई-झगड़ा नहीं हो।

आहार देते समय :

भोजन और आहार में बहुत अन्तर है। सामान्य से एक गृहस्थ विवेक पूर्वक रोटी-दाल, चावल आदि खाता है, उसे भोजन कहते हैं और वही भोजन यदि पात्र को विधिपूर्वक दिया जाता है तो वह आहार कहलाता है। आहार देते समय श्रावक को द्रव्य, क्षेत्र, काल तथा भाव की शुद्धि का ध्यान रखना आवश्यक है।

द्रव्य - जो वस्तु आहार में दी जाती है, वह द्रव्य कहलाती है।

क्षेत्र - जिस स्थान पर साधु (पात्र) को आहार दिया जाता है, वह क्षेत्र है।

काल - जिस समय आहार दिया जाता है, वह काल है।

भाव - आहार देते समय दातार के होने वाले परिणाम भाव हैं।

श्रावक जितनी शुद्धि-विशुद्धि एवं भक्ति पूर्वक आहार देता है उतना ही उसे विशेष फल मिलता है। लोभ के वशीभूत होकर द्रव्यादि की शुद्धि का ध्यान रखे बिना ही साधु को आहार देने से पुण्य के साथ पाप का भी बन्ध होता है और कभी-कभी तो पुण्य से ज्यादा पाप का बन्ध हो जाता है। उसका जब फल मिलता है तो दुःख से मिश्रित सुख मिलता है अर्थात् उसके फल में पुण्योदय से धन-सम्पदा आदि अनेक प्रकार की भोग-उपभोग की सामग्रियाँ मिलती हैं लेकिन उनका भोग करने के लिए शारीरिक क्षमता नहीं मिलती है जैसे - शुगर की बीमारी हो गई तो घर के नौकर-चाकर आदि अच्छे उत्तम स्वादिष्ट भोजन कर लेते हैं लेकिन सेठ को (तो सेठ बनने पर भी कोई-न-कोई शारीरिक या मानसिक टेंशन अवश्य रहेगा) करेला, मेथी जैसी कड़वी चीजें ही खानी पड़ती हैं। अथवा कुत्ता जैसी नीच पर्याय मिली लेकिन छल के साथ धर्म किया था इसलिए छल के कारण तिर्यञ्च पर्याय मिली परन्तु आहारदान आदि दिया था इसलिए दूध-रोटी खाने को मिल जाती है। बीमार हो जाने पर दवाई आदि की व्यवस्था हो जाती है। उपर्युक्त द्रव्यादि शुद्धियों में से द्रव्य शुद्धि में विशेष रूप से विकृतियाँ होती हैं।

एक दिन एक महिला रोती-रोती आयी। उसने कहा-माताजी, आज हमारे यहाँ माताजी को अन्तराय हो गया। माताजी के पहले ही 9 दिन से अन्तराय आ रहा था इसलिए बहुत ही दुःख हुआ। उसके पहले दिन मेरा आहार उसी के यहाँ हुआ था। इसलिए मैंने पूछ लिया कि तुमने कल वाला मोहनभोग दे दिया होगा? इसलिए अन्तराय हो गया। उसने कहा-जी माताजी! मेरे से बहुत बड़ी गलती हो गई। मैंने कल का मोहनभोग ही लोभ के वश होकर रख लिया था। मलाई की मर्यादा 24 घण्टे से ज्यादा नहीं होती है, उसमें पानी भी डाला जाता है इसलिए मोहनभोग की मर्यादा तो 12 घण्टे मात्र ही होती है वह दूसरे दिन अमर्यादित/अभक्ष्य हो जाता है। कोई भी पदार्थ देने के पहले भोजन की शुद्धि बोलना भी आवश्यक होती है। भोजन की शुद्धि बोलते समय असत्य भी बोलना पड़ता है। इसकी अपेक्षा साधु को आहार कराते, देते समय मोहन-भोग आदि कोई मिठाई नहीं देते तो पाप तो नहीं लगता। आपके भोजन से साधु के परिणाम भी निर्मल रहते, क्योंकि भोजन का प्रभाव भी मन पर अवश्य पड़ता ही है इसीलिए तो यह कहावत बनी है कि "जैसा खावे अन्न वैसा होवे मन।"

कई लोग पहले दिन की तली हुई वस्तु पापड़, खीचला, जलेबी, बूँदी आदि दूसरे दिन भी दे देते हैं। उनका कहना रहता है कि 24 घण्टे से एक-दो घण्टे ही तो ज्यादा हुए हैं अर्थात् कल आठ-साढ़े आठ बजे जलेबी बनाई थी। दस-ग्यारह बजे तक ही तो दे रहे हैं। इतने से में क्या फर्क पड़ेगा। कितने जीव उत्पन्न हो जायेंगे? इससे इतना फर्क पड़ जायेगा जितना एक सैकेण्ड/मिनट लेट हो जाने पर आपको गाड़ी नहीं मिल पाती है। डॉक्टर के एक मिनट लेट हो जाने पर रोगी मर जाता है...। इसी प्रकार मर्यादा समाप्त होने पर एक सैकेण्ड में ही सैकड़ों/अरबों-खरबों जीव उत्पन्न हो जाते हैं जिससे वह भोजन अभक्ष्य होजाता है। अभक्ष्य भोजन शुद्धि बोलकर देने से महापाप का बन्ध होता है। इसी प्रकार कई लोग छल करके साधु को आहार दे देते हैं। एक बार किसी ने बताया-माताजी ! हमारे यहाँ मुनिराज का आहार हुआ था। हमने अपने घर में शक्कर की मिठाई बनायी थी। मुनिराज ने संकेत करके बताया कि आज मुझे शक्कर का त्याग है। हमने इस मिठाई को दूसरे कटोरे में डालकर कहा-महाराज ! यह गुड़ की है। महाराज जी ने कुछ नहीं कहा-हमने महाराज को

मिठाई आहार में दे दी। इससे महाराज को तो पाप का अंश भी नहीं लगा। लेकिन देने वालों को तो पाप लग ही गया। कई लोग सोचते हैं कि हम अपने घर के कार्यों में पूरे दिन झूठ बोलते हैं। साधु को अच्छा (स्वादिष्ट) अथवा स्वास्थ्य के अनुकूल भोजन देने के लिए थोड़ा झूठ बोल भी दें तो कोई विशेष हानि नहीं है। ऐसा कहने वाले ने यह नहीं सोचा कि अन्य स्थान पर किये गये पापों को हम देव-शास्त्र-गुरु की आराधना करके अथवा उनके चरणों में पापों की आलोचना करके/प्रायश्चित्त लेकर नष्ट करते हैं, उन्हीं देव-शास्त्र-गुरु के चरणों में हम पाप करेंगे तो उसकी आलोचना/प्रायश्चित्त कहाँ करेंगे? कहाँ हम उन पापों को नष्ट करेंगे? सच पूछो तो हम ये सब बहाने बनाकर अपने मोह या लोभ कषाय की पूर्ति करते हैं अर्थात् जिस साधु के प्रति हमारा राग/प्रेम है उसी साधु के साथ हम ऐसा काम करते हैं। अनजान/अपरिचित साधु के साथ हम कभी ऐसा काम नहीं करते हैं अथवा लोभ के कारण हम ऐस काम कर लेते हैं। किसी भी दृष्टि से हम पाप करें फल तो दु:खप्रद ही होगा। अत: ऐसा काम कभी नहीं करें।

कई लोगों के लोभ का तो पार ही नहीं रहता है। वे हरीमिर्च/ नीबू-मिर्च/तली मिर्ची जैसी अल्प मूल्य वाली और हमेशा ही खाई जाने वाली वस्तुएँ भी तीन-तीन दिन तक रख लेते हैं। वे मिठाई तो पाँच-सात दिन तक रख लें तो कोई आश्चर्य वाली बात नहीं है। इस प्रकार की अभक्ष्य/अमर्यादित वस्तुएँ देने की अपेक्षा तो दाल-रोटी-सब्जी, चावल आदि सामान्य वस्तुएँ बनाकर साधु का पड़गाहन कर लेना भी ज्यादा लाभदायक है। अथवा आप ऐसी चीज बनावें जो तीन-चार दिन तक रखी रहने पर भी अभक्ष्य नहीं होती है। जैसे-मगद के लड्डू, नानखटाई, सत्तू आदि। इनको मौसम के अनुसार 3,5,7 दिन तक रखा जा सकता है। इनको हमेशा साधु को आहार में देने/चलाने की कोशिश करें। यदि साधु ले लेवे तो बहुत अच्छा और नहीं लेवे तो वापस डिब्बे में बन्द करके रख सकते हैं। इसी प्रकार चावल, मक्का, ज्वार आदि को थोड़े से घी में फोड़ (फुला) कर फुली बनाकर मूँगफली के दाने नमक-मिर्च से फ्राई करके नमकीन तैयार किया जा सकता है। अथवा ड-ाई फ्रूट्स को तलकर भी नमकीन बन सकता है, ऐसा नमकीन जब तक बदबू न आने लगे तब-तक रखा जा सकता है।

इसी प्रकार गुड़ के लड्डू, गोंद के लड्डू, रजगिरा, तिली खोपरे आदि के लड्डुओं को भी जब तक खराब नहीं हों तब तक रखा जा सकता है। इससे आपके यहाँ हमेशा नमकीन, मीठा बना रहेगा। जिससे आपको यह शरम भी नहीं आयेगी कि हमारे यहाँ अतिथि/साधु आहार के लिए आये और कुछ नहीं था। आपको झूठ भी नहीं बोलना पड़ेगा तथा अभक्ष्य भी नहीं देना पड़ेगा तथा आपको चार लोगों के बीच में लज्जित भी नहीं होना पड़ेगा। आप भले ही हमेशा साधु को आहार करावें या कभी-कभी, विवेक अवश्य रखें। आपको आहार दान का सातिशय फल मिलेगा।

कई लोगों का कहना रहता है कि ये साधु तो सब लेते हैं। इनको कुछ भी दो ये विकल्प नहीं करते हैं क्योंकि साधु कुछ कहे या नहीं कहे, शुद्धि तो आपको ही बोलना होती है। साधु आप पर विश्वास करता है इसलिए वह यह विकल्प नहीं करता है कि यह आहार शुद्ध होगा या अशुद्ध? दूसरी बात आपको इधर-उधर के विकल्प से क्या मतलब, आपको तो यह सोचना चाहिए। मैं आहारदान जैसा महान् काम कर रहा हूँ उसमें कोई ऐसी गलती नहीं हो जिससे पुण्य के स्थान पर पाप का बन्ध हो जावे। यदि आप अशुद्ध भोजन को शुद्ध कहकर देते हैं, वचन एवं आहार की शुद्धि बोलते हैं तो साधु को पाप लगे या नहीं लगे आपको तो पाप अवश्य लगेगा। अत: थोड़े से लोभ में पाप का बन्ध नहीं करें।

कभी-कभी आटे आदि की मर्यादा 3-5-7 दिन की पूरी हो जाती है उसके शुद्ध बने रहने का काल अर्थात् उसमें जीवों की उत्पत्ति होने का समय आ जाता है तब कई लोग सोचते हैं कि एक दिन पहले गर्म कर लो तो एक दिन की मर्यादा और बढ़ जायेगी। जिस प्रकार दवाई की एक्सपायरी डेट पूरी हो जाने पर यदि उसका उपयोग किया जाता है तो मृत्यु भी हो सकती है और बाजार में कोई बेचता है तो उसकी रिपोर्ट हो सकती है, उस पर केस भी चल सकता है, क्योंकि वह खाने वाले के स्वास्थ्य को हानि पहुँचाने वाली होती है। उसी प्रकार समय पूरा हो जाने पर उस चीज का उपयोग करना जीव हिंसा का कारण होता है। इसकी अपेक्षा तो एक दिन खिचड़ी खाकर रह जाना अच्छा है लेकिन इस प्रकार अपने आपके साथ छल करना अच्छा नहीं है। साधु के

सामने झूठ बोलकर आहार में देना और अपने मन को समझाकर खाना अच्छा नहीं है।

सावधानी :

(1) रजगिरा के लड्डू आदि बनाते समय हाथ में पानी के स्थान पर थोड़ी सी चिकनाई लगावें ताकि बहुत दिनों तक वे अभक्ष्य न हों।

(2) फूली, ड-ाइफ्रूट्स आदि का नमकीन बनाते समय उन्हें नमक, आटा आदि सकरे की वस्तुओं के स्पर्श से बचावें। सकरे के हाथ भी नहीं लगावें ताकि उनकी मर्यादा समाप्त नहीं हो।

(3) बिना पानी वाली मिठाइयों को नमक, आटा आदि सकरे की वस्तुओं के स्पर्श से बचावें। सकरे के हाथ भी नहीं लगावें ताकि उनकी मर्यादा समाप्त नहीं हो।

(4) बिस्किट आदि बनाते समय मलाई के स्थान पर घी और शक्कर को अच्छा फेंट कर बना लें तो भी मौसम के अनुसार मर्यादा रह सकती है। ऐसा करने से इनमें पानी का अंश नहीं रहेगा।

अभक्ष्य नहीं पर अशुद्ध :

कई महिलाएँ साधु को आहार में बहुत सारी चीजें देना चाहती हैं। यह भावना खराब नहीं है। श्रावक की भावनाएँ साधु को अच्छी से अच्छी और अधिक से अधिक खिलाने की होनी ही चाहिए। लेकिन इन सबके साथ विवेक होना भी आवश्यक है। अनेक वस्तुएँ बनाने के लिए समय और सदस्य पर्याप्त मात्रा में चाहिए। अधिकांश साधु लगभग साढ़े नौ से ग्यारह बजे के बीच में आहारचर्या पर निकल जाते हैं। प्रात: काल सूर्योदय से ग्यारह बजे तक लगभग 3-4 घण्टे मिलते हैं। उतने ही समय में सब कुछ करना होता है। इसलिए कभी तो जल्दी-जल्दी करने से भी विवेक लुप्त होता दिखाई देता है तो कभी कार्य करने में अशुद्धि हो जाती है। कई महिलाएँ M.C. के दिनों में भोजनशाला (चौके) के बाहर पौंछा लगाना आदि कार्य कर लेती हैं। कभी-कभी तो भोजन का कार्य पूरा होने के बाद शुद्धि वाले लोग तो साधु का पड़गाहन करने के लिए चले जाते हैं। पीछे से M.C. वाली महिला आँगन आदि में झाड़ू-पौंछा करती है। झाड़ू लगाना तो फिर भी ठीक है लेकिन पौंछा लगाते ही यदि साधु

आ गये तो उसी अशुद्धि वाली महिला से छुए हुए पानी में पैर रखने पड़ते हैं उस पानी को छूते ही वे (छूने वाले) अशुद्ध हो जाते हैं। उस अशुद्धि की तरफ ध्यान नहीं देते हुए वे मनशुद्धि आदि बोलते हैं तो उनको कितना पाप लगता है। जल्दी-जल्दी में कभी ऐसा नहीं चाहते हुए भी करना पड़ता है। इसके अलावा जो लोग साधु को आहार नहीं देने वाले हैं अर्थात् अशुद्ध वस्त्र पहने हैं वे भी उस पानी में पैर देकर/छूकर सबको छूते हैं अत: अशुद्धि वाली महिलाएँ कम-से-कम तीन दिन तक तो सामान्य समय में भी अर्थात् साधु के आहार नहीं होने हों तो भी पौंछा नहीं लगावे। यदि लगाना ही पड़े तो जब तक आँगन सूख नहीं जावे, ध्यान रखें, किसी को वहाँ से, उसमें पैर रखकर नहीं निकलने दें तथा साधु के आहार होने हैं तो विशेष सावधानी रखें अर्थात् उस समय तो अशुद्धि वाली महिलाएँ पौंछा लगावे ही नहीं, क्योंकि उस समय, समय की कमी रहती है और लोगों का आना-जाना भी बना रहने से छूने के अवसर ज्यादा रहते हैं।

कई महिलाएँ अशुद्धि के समय भी सब्जी-फल आदि सुधार लेती हैं। सब्जी को यदि पहले धोकर सुधारते हैं तो उसमें पानी का अंश रह जाता है वह अशुद्धि वाली से छू जाता है, वही छुई हुई सब्जी हम शुद्धि बोलकर साधु को देते हैं तो निश्चित पाप का बन्ध होगा ही। इसी प्रकार यदि अशुद्धि के समय बर्तन माँजने हैं तो सूखे माँजें ताकि उनमें पानी का अंश नहीं रहे, छुआ-छूत न हो।

कपड़े बदलते समय :

कई लोग आहार देने की भावनाएँ रखते हैं। कई लोग यह जानते ही नहीं है कि आहार कौन-से कपड़े पहनकर देना चाहिए। कई लोग तो सोचते हैं कि धोती-दुपट्टा पहनकर आहार देना पड़ता है इसलिए वे धोती/दुपट्टा पहन लेना ही शुद्ध वस्त्र मान लेते हैं भले ही वे धोबी के यहाँ से धुलकर आये हों अथवा जिनको पहनकर चाहे लेटि-न भी जाकर आ गये हैं। इसीलिए वे कपड़े बदलते समय अण्डरगारमेन्ट्स (बनियान, पेंटी आदि) नहीं बदलते हैं मात्र ऊपर के वस्त्र खोलकर धोती-दुपट्टा पहन लेते हैं। इसी प्रकार महिलाएँ भी समझती हैं कि धुली हुई साड़ी पहन लेना शुद्ध वस्त्र कहलाते हैं। वे भी इसी प्रकार

ऊपर के वस्त्र बदलकर साधु को आहार दे आती हैं। जब कभी उनके निमित्त से या उनके हाथ से साधु के आहार में विघ्न/अन्तराय आ जाता है तो उनको पश्चाताप होता है कि शायद मैंने पूरे वस्त्र नहीं बदले थे इसलिए ऐसा हो गया आदि...।

कई लोग पूरे सोले के (शुद्ध) वस्त्र पहनते हैं लेकिन वे पहले के जो अशुद्ध वस्त्र पहने हैं उनको खोलते जाते हैं और शुद्ध वस्त्र पहनते जाते हैं। इस प्रकार वस्त्र बदलने से भी कोई विशेष सार की बात नहीं है। कोई-कोई अपने 4-5 वर्ष के बच्चों को भी आहार होने के दो-तीन घण्टे पहले ही शुद्ध वस्त्र पहना देती हैं। वे सर्वत्र घूमते-फिरते हैं, सबको छूते रहते हैं, क्योंकि वे इस बात को नहीं समझते हैं कि शुद्ध सोला क्या होता है। कई लोग तो जान-बूझ करके अर्थात् उन्हें पता भी चल जाता है कि हमें अशुद्ध अर्थात् बिल्कुल अशुद्ध (मंदिर आदि के कपड़े थोड़े शुद्ध होते हैं) वस्त्र वालों ने छू लिया है, अब इन वस्त्रों से आहार देने से मुझे पुण्य के स्थान पर पाप का आस्रव ज्यादा होगा तो भी वे शुद्धि बोलकर साधु को आहार दे देते हैं। उनका कहना रहता है कि जब सब लोग छूकर ही आहार देते हैं, दे रहे हैं तो हम दे दें तो क्या पाप? भले ही सभी छू कर आहार दे रहे हैं उसका पाप, मान लिया, नहीं भी लगा लेकिन आपको झूठ बोलने का अर्थात् शरीर/वस्त्र अशुद्ध होने पर भी शुद्ध कहने से तो पाप लगा ही, क्योंकि आपने जो काय शुद्धि बोली थी वह झूठ थी, झूठ बोला तो आपका मन भी अपवित्र हो गया। **दूसरी बात**, काय शुद्धि बोलते समय तथा अशुद्ध वस्त्रों में आहार देते समय और देने के बाद भी धक्-धक् तो लग ही रही थी उसका पाप तो लगेगा ही।

कई लोगों को तो पता ही नहीं रहता है कि शुद्धि अर्थात् मन:शुद्धि, वचन शुद्धि, कायशुद्धि और भोजनशुद्धि का अर्थ क्या होता है, शुद्धि क्यों बोलना चाहिए। उनको तो शायद ऐसा लगता होगा कि आहार देने के पहले यह विधि करना आवश्यक है। अत: यदि हो सके तो यह अवश्य समझ लें कि मन:शुद्धि, वचनशुद्धि आदि क्यों बोलना चाहिए?

रात में नहीं बनावें :

कई लोगों को बहुत आकुलता रहती है। वे शुद्ध भोजन बनाने का काम

भी सूर्योदय के पहले प्रारम्भ कर देते हैं। कोई जीरा, धना हल्दी को पीसने/बाँटने का काम तक कर लेती हैं, कोई गेहूँ, दाल आदि पीसने का काम कर लेती हैं जबकि रात्रि में बोलने-चलने में हिंसा मानी गई है इसीलिए तो जैन साधु को रात्रि में बोलने और चलने का निषेध किया गया है। कई महिलाएँ सुबह 5 बजे ही केक, खमण आदि का घोल तैयार करके माइक्रोवेव में रख देती हैं। उनको लगता है कि केक को सिकने में बहुत देर लगती है इसलिए जल्दी रख देने से धीरे-धीरे सिकता रहेगा अथवा बाद में लाइट चली जायेगी तो केक नहीं बन पायेगा। इस प्रकार रात्रि में आरम्भ करके केक बनाकर देने की अपेक्षा मौन की रोटी या बिस्किट बनाकर अथवा सामान्य भोजन बनाकर आहार करवा देना भी ज्यादा लाभदायक है। जिनेन्द्र भगवान ने तो यह कहा है कि जिसको रात्रिभोजन का त्याग है वह भी रात में कूटा-पीटा-पीसा, बाँटा हुआ भोजन/पदार्थ नहीं खावे, भोजन में उसका उपयोग नहीं करे। ऐसे पदार्थों का उपयोग करने से उसका रात्रिभोजनत्याग वृत दूषित हो जाता है। कई महिलाएँ जल्दी अर्थात् सुबह अन्धेरे में ही मूँग, मोठ, दाल, किसमिस, मुनक्का आदि गला देती हैं। कई आकुलता वाली महिलाएँ तो कुकर तक लगा देती हैं। ऐसा करने से तो पुण्य के साथ पाप का मिश्रण भी अवश्य हो जाता है। इसी प्रकार के अनेक कार्य होते हैं जिनको रात्रि में करना उचित नहीं है। उन सबको सोचकर आहारदान के समय टालना चाहिए। जब सूर्य के प्रकाश में शोधन करके तैयार की गई भोजन की सामग्री में भी जीव रह जाते हैं तो जो रात्रि में भोजन तैयार करता है उसकी भोजन सामग्री पर कैसे विश्वास हो सकता है। अत: आप भले ही दो आइटम कम बनावें लेकिन रात्रि में आरम्भ (गैस/चूल्हा जलाना, कूटना आदि) के कार्य नहीं करें ताकि आहारदान देने का सही-सही फल प्राप्त हो सके।

अन्य स्थान पर न ले जावें :

वैसे आहार देने वाले लोग समझदार/विवेकवान ही होते हैं लेकिन कभी-किसी अनजान व्यक्ति को भी आहारदान देने की भावना होती है। वे आहार बनाने/देने की विधि नहीं जानते हैं अथवा जानने वाले भी प्रमाद या मोह के कारण आहार के विषय में पुण्य के स्थान पर पाप बाँध लेते हैं। कई लोग तो

दाल, रोटी, बाटी आदि चीजें जो सामान्य गृहस्थ भी चौके/रसोई घर के बाहर नहीं खाता है उन्हें भी दूसरे के चौके में छिपाकर ले जाते हैं और झूठ बोलकर साधु को दे देते हैं। एक बार एक क्षेत्र पर एक साधु संघ विराजमान था। 5-7 कि.मी. दूर से एक गाँव के लोग आहार देने के लिए वहाँ आते थे। एक दिन एक महिला तो दाल-चावल का कुकर लगाकर अर्थात् दाल-चावल बनाकर ही ले गईं। रास्ते में उसका कुकर खुल गया। दाल बिखर गई....। क्या ऐसा करने में आहार दान का कुछ फल मिल सकता है, नहीं। अत: ऐसा कभी नहीं करें। आप ऐसा भी नहीं सोचें कि दालादि अन्य स्थान में ले जाने में कोई दोष नहीं, कुछ नहीं होता है। कोई दोष हो या नहीं, लोकविरुद्ध कार्य नहीं करना चाहिए। लोकविरुद्ध कार्य करने से धर्म की हँसी होती है, यह भी एक पाप है।

तीर्थयात्रा करते समय

यद्वा-तद्वा वृत्ति नहीं करें

आज के युग में घूमने के साथ-साथ तीर्थयात्रा करने की परम्परा भी तीव्र गति में बढ़ गई है लेकिन तीर्थयात्रा करने का बहाना बनाकर लोग घूमने जाते हैं। वे लोग धर्मात्मा होते हैं जो घूमने का बहाना बनाकर तीर्थयात्रा जाते हैं। वर्तमान में तो तीर्थयात्रा का बहाना ही नहीं तीर्थक्षेत्रों पर जाकर भी लोग पिकनिक मनाते हैं, अश्लील मजाकें करते हैं, उल्टी-सीधी प्रतियोगिताएँ करते हैं। इसी का प्रतिफल है कि अच्छे प्रतिष्ठित तीर्थक्षेत्रों की धर्मशालाओं में शराब की खाली बोतलें मिलती हैं। उनके कोनों/दीवालों/आँगन में पाउच-गुटखा के थूके हुए पीक के दाग मिलते हैं। वे इतने उत्तम क्षेत्र पर जाकर भी कितना पाप कमा लेते होंगे, कहा नहीं जा सकता है। कई लोग तो कभी घर में कण्डे पर सिकी बाटी नहीं खाते होंगे, वे भी कई बार क्षेत्र पर जाकर भटे (बैंगन) का भरता और कण्डे पर सिकी बाटी खाते हैं; कई लोग तो इस प्लानिंग से ही क्षेत्रों पर जाते हैं, वैसे वे न कभी बैंगन खाते हैं और न खाने का मन ही होता है लेकिन वहाँ ये चीजें खाने में उन्हें आनन्द आता है। एक दिन लगभग 60-65 वर्ष के दादाजी दर्शन करने आये। मैंने उन्हें बात-ही-बात में कहा-''भैया, कुछ भी त्याग नहीं कर सकते हैं तो बाजार के बिस्किट का ही त्याग कर दीजिए।'' उन्होंने कहा-''माताजी ! मैं तो अब वृद्ध हो गया, क्या बिस्किट खाऊँगा। मैंने

तो आज तक बिस्किट खाये ही नहीं है, मुझे बिस्किट भाते ही नहीं हैं।'' मैंने कहा-''नहीं, कहीं आपने कभी अपने पौत्र के हाथ के बिस्किट में से एक तरफ से उसने और दूसरी तरफ से आपने खा लिया हो, इसलिए पूछ रही हूँ।'' उन्होंने कहा-''नहीं माताजी ! मैं ऐसा कभी नहीं करता, मुझे बच्चे का जूठा खाना पसन्द नहीं है। मैं तो कभी किसी के साथ एक थाली में भी भोजन नहीं करता हूँ।'' मैंने कहा-''और याद करो कहीं एक-आध बार बिस्किट खाये हों तो?'' उसने थोड़ी देर विचार करके कहा-''हाँ, माताजी, मैंने एक बार बिस्किट खाये हैं।'' मैंने कहा-''कहाँ खाये?'' उन्होंने कहा-''शिखर जी के पहाड़ पर।'' उनकी बात सुनकर मुझे लगा, ''देखो ! व्यक्ति में कितना अविवेक है। व्यक्ति जिस पहाड़ के स्मरण मात्र से पापक्षय करते हैं, बहुत पुरुषार्थ करके वहाँ जाकर वहाँ की धूल सिर पर चढ़ाते हैं। जो नहीं जा पाते हैं, वे वहाँ जाने के लिए तरसते हैं और वहाँ जाकर वो पाप कर लेते हैं जो उन्होंने अपनी जिन्दगी में कभी नहीं किया है।'' कहते हैं -

''अन्य क्षेत्रे कृतं पापं धर्मक्षेत्रे विनश्यति।
धर्मक्षेत्रे कृतं पापं वज्रलेपो भविष्यति॥''

अन्य क्षेत्र में किये गये पाप धर्मक्षेत्र में नष्ट हो जाते हैं और धर्मक्षेत्र में किये गये पाप वृजलेप के समान होते हैं अर्थात् उनका छूटना अत्यन्त कठिन होता है। जो तीर्थक्षेत्रों पर जाकर ऐसे पाप करते हैं उनके पाप कहाँ धुलेंगे, भगवान जाने। लोग अपने जीवन भर के किये गये पापों को धोने के लिए तीर्थक्षेत्रों की वंदना करने को जाते हैं और वहाँ थोड़े से अविवेक के कारण पापों को धोने के स्थान पर नये पापों को और बाँध लेते हैं। आश्चर्य तो इस बात का है कि वे उन पापात्मक कार्यों को पाप रूप में स्वीकार भी नहीं कर पाते हैं, समझ ही नहीं पाते हैं कि वे यहाँ कुछ पाप भी कर रहे हैं। इसको यह पता ही नहीं है कि जितना पवित्र स्थान होता है उतना ही पाप-पुण्य ज्यादा बँधते हैं। अर्थात् उस स्थान पर अच्छे कार्य करने से घर की अपेक्षा कई गुणा पुण्य का बन्ध होता है और उस स्थान पर किये गये अशुभ/बुरे कार्य से घर की अपेक्षा अनन्त गुणा पाप का बन्ध होता है। जिस प्रकार राजा के अनुकूल अर्थात्

आज्ञानुसार कार्य करने से भरपूर मात्रा में धन-सम्पत्ति मिलती है और राजा की आज्ञा का उल्लंघन करने से, राजा के प्रतिकूल चलने से भारी सजा मिलती है उसी प्रकार धर्मक्षेत्र में जिनेन्द्र भगवान की आज्ञा का पालन एवं उल्लंघन करने से पुण्य और पाप मिलता है अथवा इससे भी अनन्तगुणा होता है। अत: आप /हम तीर्थयात्रा अवश्य जावें, लेकिन वहाँ जाकर पापों का क्षय करें, धर्म करें, आगे के लिए पापों का बन्ध नहीं करें, यही तीर्थयात्रा का फल है।

लड़ाई नहीं करें :

कई लोगों के मुख से सुना जाता है कि हमारा मामा, मौसी अथवा उस व्यक्ति से बोलना तब से बन्द है जब हम एक साथ यात्रा गये थे, एक बस लेकर यात्रा करने गये थे। वहाँ सीट के लिए, आगे बैठने के लिए अथवा घूमने-दर्शन करने आदि के समय पीछे रह जाने से आपस में अनबन हो गयी थी। अथवा बच्चों के आपसी झगड़े में हमारा झगड़ा हो गया था, आदि छोटी-छोटी बातों को निमित्त बनाकर तीर्थयात्रा जैसे पवित्र-पापनाशक कार्य में हम अभिमान के कारण पत्थर की लकीर के समान भयंकर पाप का बन्ध कर लेते हैं। वह वैर किसी के तो जीवन पर्यन्त चलता रहता है। वर्षों तक (लड़ाई हुई तब से) मिलना नहीं होता है, क्योंकि उनसे हमारा परिचय ही यात्रा के समय पहली बार हुआ था। वे दूसरे गाँव के थे और यदि रिश्तेदार हैं तो हमारा आना-जाना, बोलना-चलना बन्द हो जाता है। वर्षों-वर्षों यात्रा की स्मृतियाँ जिनसे हम जीवन में पुन:-पुन: पुण्य का बन्ध कर सकते हैं, अपने परिणामों में निर्मलता ला सकते हैं, उनको भूलकर इन वैर के कारणों का स्मरण करके, सामने वाले को देखकर (लड़ाई याद आ जाने से) पुन:-पुन: पापों का बन्ध करते रहते हैं। लड़ाई के प्रसंग के समय यदि हम सामने वाले की क्रोधरूपी अग्नि में, कठोर वचन, व्यंग्य, ताने आदि रूप घी नहीं डालते तो शायद वह अग्नि वहीं समाप्त हो जाती। इतना करने पर भी यदि सामने वाले की क्रोधाग्नि शान्त नहीं भी हुई होती तो भी हमारे अन्दर वैर रूपी दावानल तो उत्पन्न नहीं होता। हम अपने से ज्यादा शक्तिशाली अथवा जिनसे हमारा काम सिद्ध होता है ऐसे व्यक्ति के सामने भी तो मौन रखते हैं अथवा हमें मौन रखना पड़ता है। वहाँ हमें गम खाना ही पड़ता है। वहाँ गम खाने से मात्र लौकिक कार्य नहीं बिगड़ता है लेकिन

तीर्थयात्रा के समय यदि हम गम खाते हैं तो तीर्थयात्रा रूपी स्वर्ण में सुगन्ध के समान लौकिक एवं पारलौकिक दोनों कार्य सफल होते हैं अर्थात् चार लोगों के बीच में प्रतिष्ठा मिलती है और अगले भव के लिए पाप का बन्ध नहीं होता है। हम अपने घर में लाखों रुपये ऐसे ही खर्च कर देते हैं, कभी-कभी हजारों रुपये अनावश्यक खर्च कर देते हैं और वहाँ (यात्रा में) हम पाँच-पचास रुपये के लिए लड़ पड़ते हैं यही तो अविवेक कहलाता है।

यह तो और भी आश्चर्य की बात है कि कई लोग तो अपने प्रेमी-प्रेमिका से अर्थात् लड़का-लड़की परस्पर मिलने के लिए साथ-साथ घूमने, सैर, मौज-मस्ती करने के लिए क्षेत्रों पर जाते हैं। किन्हीं का तो प्रेमप्रसंग ही क्षेत्र से प्रारम्भ होता है। कई लोग तो इतने मूर्ख भी होते हैं कि मंदिर की परिक्रमा में लड़कियों को छू लेते हैं, हाथ मार देते हैं। भगवान के दर्शन करते-करते भी लड़की को ही देखते रहते हैं। क्या यह तीर्थयात्रा, क्षेत्र वन्दना, धर्म करने की विधि है? क्या यह विवेकपूर्ण कार्य है? क्या ऐसा करने से हमें तीर्थयात्रा का फल मिलेगा? कभी नहीं, अत: तीर्थयात्रा करते समय मन को थोड़ा संयमित रखें, तीर्थयात्रा का सही फल प्राप्त करें।

सीमा ही लाँघ गये :

2-4 वर्ष पूर्व की एक घटना है। एक लड़की एवं एक लड़का परस्पर प्रेमशील थे। वे दोनों नियमित रूप से मंदिर जाते थे। उनमें जो पहले जाता था वह पत्र लिखकर ले जाता था। उसे दीपक की पेटी में दीपक के नीचे रख देता था। दूसरा जाता तो दीपक की आशिका लेने के बहाने वह पत्र उठा लाता और अपना पत्र रख आता। यह क्रम महीनों तक चलता रहा। एक दिन तो उन्होंने सीमा ही लाँघ दी। वे दोनों अचानक आमने-सामने मिले, दोनों ने आँखों से इशारा किया और मंदिर की सीढ़ियाँ चढ़कर छत पर चले गये..। इसी प्रकार एक लड़का अपने मम्मी-पापा के साथ क्षेत्रों पर, साधु संघ में महीनों रुकता था तो लड़की भी अपने मम्मी-पापा के साथ उसी साधु संघ में रुकती थी। वहाँ वे दोनों प्रतिवर्ष मिलते थे, घूमते थे। इस प्रकार करते-करते वर्षों निकल गये। जब शादी का समय आया तब लड़के-लड़की ने अपने-अपने मम्मी-पापा से कहा कि मैं तो उससे शादी करूँगा/करूँगी। साधु संघों में जाकर तीर्थक्षेत्रों

पर रहकर ऐसे काम करना धर्म की अप्रभावना का कारण है, अन्य लोगों की क्षेत्रों, साधु संघों के प्रति आस्था तोड़ने का काम है, यह कितना बड़ा अविवेक है अत: आप विवेक रखें। ऐसा प्रेम करना ही वासना के अतिरेक का चिह्न है फिर क्षेत्रों/धार्मिक क्षेत्र पर करने वालों की तो मेरे अनुमान से रावण को छोड़कर किसके समान गति हो सकती है? आप स्वयं सोचें एवं विवेक से काम करें।

कई लोग पवित्र स्थानों पर जाकर भी पति-पत्नी ही बने रहते हैं। वहाँ पर भी वे ब्रह्मचर्य का पालन नहीं कर पाते हैं। कोई-कोई तो इतने विवेकहीन होते हैं कि मंदिर की परिक्रमा, प्रांगण में (सम्मेदशिखर, गिरनार आदि पर्वतों पर) भी इस प्रकार के कार्य कर लेते हैं। उन्हें तो स्वदारसंतोषी भी कैसे कहा जा सकता है? वे यद्यपि अपनी पत्नी/पति के साथ ही भोग करते हैं लेकिन विवेक का अभाव होने से उन्हें मात्र पाप का ही बन्ध होता है। अत: आप कभी ऐसे अविवेकपूर्ण कृत्य नहीं करें।

सावधानी :

(1) यात्रा के लिए निकलते समय जब तक लौटकर नहीं आयेंगे, ब्रह्मचर्य-पालन का संकल्प करें।

(2) वैसे पाउच, गुटखा भी कभी नहीं खाना चाहिए लेकिन यदि लत पड़ी है तो कम-से-कम क्षेत्र की धर्मशाला-मंदिर के आँगन आदि में पाउच-गुटखा नहीं खावें/पीक नहीं थूकें।

(3) जिनके साथ विचार नहीं मिलते हों उनके साथ तीर्थयात्रा नहीं जावें ताकि संक्लेश नहीं हो।

(4) थोड़े से मनोरंजन के पीछे भारी पाप नहीं कमावें।

(5) क्षेत्रों के प्रमुख स्थानों पर मोबाइल लेकर नहीं जावें, यदि ले गये हैं तो वन्दना के समय बन्द रखें।

(6) हमेशा घर के समाचार नहीं लें, क्योंकि घर पर सूतक-पातक आदि लगने पर आपकी यात्रा का मजा किरकिरा हो जायेगा। अथवा कुछ अच्छे-बुरे समाचार मिले तो मन खराब हो जायेगा।

(7) अपने मोबाइल का मात्र विशेष परिस्थिति में ही उपयोग करें। सामान्य से न लगावें न सुनें।

(8) किसी लड़की को देखकर मन खराब होने लगे तो बहिन एवं माँ की दृष्टि बनावें।

नियम लेते समय :

संसारी जीव दु:खों से बचने के लिए अथवा आगामी भव को सुधारने के लिए कुछ संकल्प यम-नियम लेता है। वास्तव में भोगों की पटरी पर अंधा धुंध दौड़ती हुई इस जीवन की गाड़ी पर ब्रेक लगाना अति आवश्यक है। ब्रेक के बिना न जाने यह गाड़ी किस नरक-निगोद के गः में जाकर गिरे अथवा कौन-सी बीमारी रूप वृक्ष-पत्थर आदि से टकरा कर चकनाचूर हो जावे, इसका कोई भरोसा नहीं है। इसलिए जीवन में कुछ-न-कुछ छोटा-बड़ा, कठिन-सरल जैसा अपने से पल जावे, नियम लेना चाहिए। नियम लेते समय बहुत ज्यादा भी भविष्य के बारे में नहीं सोचना चाहिए और बिना सोचे-समझे भी नियम नहीं लेना चाहिए क्योंकि ज्यादा सोचने वाला नियम नहीं ले पाता है। जिससे वह स्वच्छन्द वृत्ति से पाप कमाता रहता है और बिना सोचे-समझे भावुकता में नियम ले लेने वाला नियम का सही निर्वाह नहीं कर पाने के कारण नियम तोड़ देता है। अथवा उसे नियम तोड़ना पड़ता है या उसका नियम टूट जाता है जिससे वह भी नियमभंग से पाप कमा कर दुर्गति का पात्र बन जाता है। अत: नियम लेते समय विवेक रखें। **पहली बात** ऐसा नियम लें जिसको सहज रूप में या थोड़े पुरुषार्थ में ही निभाया जा सके। **दूसरी बात** नियम कोई सा भी लें विशेष परिस्थिति की छूट रखें (यदि उस नियम में छूट रखने की गुंजाइस हो तो) ताकि नियम नहीं टूटे। जैसे - प्रतिदिन भगवान के दर्शन का नियम लिया। यदि आपने विशेष परिस्थिति की छूट नहीं रखी तो कभी बीमार हो गये, हड्डी आदि टूटने से बिस्तर में पड़ गये। या किसी साधु के साथ चल रहे थे रास्ते में 4-5 दिन तक मंदिर नहीं मिला तो आप कितने दिन भूखे रहेंगे। उस समय आप कितनी ही कोशिश करें भगवान के दर्शन नहीं कर सकेंगे। फिर आपके नियम का क्या होगा? इसी प्रकार यदि आपने रात्रि में आठ बजे के बाद भोजन करने का त्याग किया है तो कभी दो-चार मिनट भी लेट हुए तो भी आपका नियम टूट जायेगा। इसलिए यदि आपने आठ बजे के बाद का त्याग किया है तो आप धारणा बना लें कि साढ़े सात, पौने आठ बजे के बाद हमें

भोजन का त्याग है तो आपका नियम कभी नहीं टूटेगा। लेकिन यदि नेलपॉलिस, लिपिस्टिक आदि ऐसी चीज का त्याग कर रहे हैं जिनसे शरीर पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है जिसमें उपर्युक्त कोई ऐसी परिस्थिति नहीं आ सकती कि जिसको हल करने के लिए नेलपॉलिस आदि लगाने की छूट लेनी पड़े। इसलिए ऐसे नियमों में कोई छूट नहीं रखें।

छूट का दुरुपयोग नहीं करें :

नियम लेते समय छूट रखने का अर्थ यह नहीं है कि उन चीजों का हम अनावश्यक उपयोग करें या किसी के दबाव या संकोच में पड़ कर उनका भोग करने लगें। छूट रखने का अर्थ औषधि आदि में उन चीजों की आवश्यकता पड़ने पर हमें अभक्ष्य/माँसाहारी औषधि भी नहीं खानी पड़े, हमारा नियम भी नहीं टूटे और हमारे जीवन में कुछ यम-संयम भी बना रहे। इसलिए जिनकी दवाई के रूप में छूट रखी है उन चीजों का उपयोग करते समय थोड़ा विवेक रखें। उनको औषधि के रूप में ही ग्रहण करें। इन्द्रियविषय अर्थात् स्वाद के लिए या मन को संतुष्ट करने के लिए ग्रहण नहीं करें। **दूसरी बात** दवाई का बहाना बनाकर हमेशा नहीं खावें। बीमारी ठीक होते ही वे चीजें वापस छोड़ दें। यह सोचकर कि 8-15 दिन या महीने भर खा ली तो अब हमेशा ही खा लो अथवा इसको हमेशा खाते रहेंगे तो आगे पुन: ऐसी बीमारी नहीं होगी। ऐसा विचार करना गलत है, क्योंकि कोई भी चीज हमेशा खाते रहने से वह भोजन बन जाती है फिर वह दवाई का काम नहीं करती है अत: उन चीजों को रोज नहीं खावें ताकि आगे बीमारी आदि होने पर दवाई का काम कर सके और मन में यह टेंशन भी नहीं रहे कि मेरा नियम टूट रहा है, टूट गया है। इसी प्रकार चाहे भक्ष्य चीज भी हो त्याग करने के पहले विशेष परिस्थिति की छूट रखें। अर्थात् चम्मच आदि लग गया हो या एक-आध पीस भूल से दाल-सब्जी में मिलकर आ गया हो तो उस की छूट रखें ताकि नियम नहीं टूटे। इनकी भी औषधि के रूप में आवश्यकता पड़े तो पूर्वोक्त विधि से ही उपयोग करें। ये चीजें भक्ष्य होने पर भी 'हमारा त्याग है' इसलिए छोड़ने के योग्य ही हैं। इसी प्रकार भगवान के दर्शन आदि में हुआ हो अर्थात् 8-15 दिन अथवा 4-6 महीने किसी कारण मंदिर नहीं जा पाये हों तो जैसे ही आपको भगवान

के दर्शन मिलें अथवा आप भगवान के दर्शन करने योग्य हो जावें तत्काल मंदिर जाना प्रारम्भ कर दें, आपका नियम नहीं टूटेगा, क्योंकि आपने मात्र विशेष परिस्थिति की छूट रखी थी, उसी छूट का उपयोग विशेष परिस्थिति में किया है। अगर आप प्रमाद के कारण शादी, बर्थडे आदि कार्यक्रमों में विशेष परिस्थिति का बहाना बनाकर मंदिर नहीं जाते हैं तो आपका नियम टूटेगा ही। एक दिन एक लड़की ने गुरु से विशेष परिस्थिति की छूट रखकर जिनेन्द्र भगवान के दर्शन का नियम लिया। कुछ दिनों के बाद वह पुन: गुरु के दर्शन करने गई (गुरु उसी गाँव में थे) तो गुरु ने उससे पूछ लिया कि क्या तुम्हारा मंदिर जाने का नियम अच्छी तरह चल रहा है? उसने कहा-हाँ, नियम तो चल रहा है लेकिन बीच में दो-चार दिन मुझे बुखार आ गया था इसलिए मैं मन्दिर नहीं जा पाई थी। उसका उत्तर सुनकर गुरु ने कहा-क्या बुखार आने पर बिस्तर से ही नहीं उठ पाई थी? उसने कहा-नहीं, मैंने उठकर धीरे-धीरे रोटी बनाई, झाडू-पौंछा आदि काम किये थे, करने पड़े थे। इसे बहाना कहते हैं, इसे नियम तोड़ना कहते हैं, इसे विशेष परिस्थिति की छूट का दुरुपयोग कहते हैं। जबकि उसके घर के पास ही मंदिर था, वह चाहती तो जिस प्रकार बुखार में भी उठकर धीरे-धीरे घर का काम किया वैसे ही देवदर्शन हेतु वह मंदिर भी जा सकती थी। आप ऐसा कभी नहीं करें। यह मन तो पागल है। इसे धार्मिक कार्य करना अच्छा नहीं लगता है। फिर इसको यदि कुछ बहाना मिल जावे तो यह जल्दी से धार्मिक कार्य छोड़ ही देता है और आगे भी वैसा करने में स्वच्छन्द वृत्ति करने के लिए तैयार हो जाता है। अत: आप भूलकर भी ऐसा काम नहीं करें।

कब क्या नियम लें ?

कई लोग दुर्लभता से मिलने वाले तीर्थक्षेत्र, गुरुदर्शन, आहार-दान आदि का अवसर मिलने पर उसकी स्मृति के लिए कुछ विशेष नियम लेते हैं। ऐसे समय में अपने जीवन विकास हेतु कुछ-न-कुछ नियम लेना ही चाहिए, क्योंकि ''बूँद-बूँद से घट भरता है और कण-कण से भरता भण्डार'' इस कहावत के अनुसार एक-एक छोटा-छोटा नियम भी हमारे जीवन को संवार देता है, संयमित बना देता है। लेकिन नियम लेते समय भी विवेक रखना आवश्यक होता है अन्यथा लोगों के बीच हँसी का पात्र बनना पड़ता है और परिस्थिति वश नियम

तोड़ने के लिए मजबूर होना पड़ता है। जैसे - कोई सम्मेदशिखरजी महातीर्थ की वन्दना करके केला खाने का त्याग कर देता है, कोई सेवफल का तो कोई जामफल का। वे आलू-प्याज बहुत दिनों के आचार-पापड़, दहीबड़ा आदि जैसी अभक्ष्य वस्तुओं को तो खाते हैं, बाजार-होटल की कचौड़ी, समोसा, चाट जैसी वस्तुओं को खाने का शौक रखते हैं, बच्चों की उम्र में खाने योग्य बिस्किट, टॉफी, च्युइंगम जिनको खाने में माँसाहार का भी दोष लगता है, उनको भी समय आने पर खा ही लेते हैं...। वे इन अभक्ष्य, जीवन के लिए अनुपयोगी इह-पर लोक बिगाड़ने वाली, अहिंसा को नष्ट करने वाली वस्तुओं का तो त्याग नहीं करते हैं और केला आम सेवफल जैसी शुद्ध जीवनोपयोगी वस्तुओं का त्याग कर देते हैं। जब कभी कोई उन्हें अचार आदि अभक्ष्य वस्तुओं को खाते देखता है और उनके मुख से केला आदि का त्याग सुनता है तो सहज रूप से हँसे बिना नहीं रह पाता है। ऐसे नियम लेने वालों को देखकर तो ऐसा लगता है कि शादी का तो त्याग है और व्यभिचार (परस्त्री का सेवन) करते हैं, टी.वी. तो नहीं देखते हैं और सिनेमा देखने जाते हैं, एक टाइम भोजन करते हैं और नाश्ते में चार पराठे-पूड़ी खाते हैं। आप ऐसा नहीं करें। आप पहले अभक्ष्य-अशुद्ध, हिंसात्मक वस्तुओं का त्याग करें। उसके बाद भक्ष्य पदार्थों का अर्थात् पहले अमर्यादित अचार-पापड़, बड़ी, होटल की चीज, बाजार के बिस्किट, कोल्डडिं-क्स या स्वास्थ्य एवं धर्म के लिए हानिकारक आपकी कोई गलत आदत हो जैसे-पाउच गुटखा खाते हो, बीड़ी-सिगरेट-स्मेक आदि पीते हों, नेलपॉलिस, लिपिस्टिक आदि अशुद्ध चीजें लगाते हैं अथवा किसी से आपकी लड़ाई है (बोल-चाल बन्द हो) गाली देने की आदत हों, बच्चों को मारने की, चिड़चिड़ाकर बोलने की आदत हो, यद्वा-तद्वा पैसा खर्च करने जैसी आदतें हैं तो किन्हीं एक-दो का त्याग करें। जब इनमें से सभी दोष समाप्त हो जावें अर्थात् कोई गलत काम आपके जीवन में नहीं बचे, आपके अभक्ष्य का पूरा त्याग हो जावे तब आप भक्ष्य पदार्थों का त्याग करें। आपकी हँसी भी नहीं होगी और नियम भी नहीं टूटेगा।

छल नहीं करें :

कई लोग नियम लेते समय भी गुरु की आँखों में धूल डाल देते हैं

अर्थात् छल करते हैं। एक दिन किसी युवक को गुरु ने प्रेरणा देते हुए कहा-बेटा, रात्रि में भोजन करने का त्याग कर दो। युवक ने कहा-जी, गुरु जी! मैं आज से ही रात्रि में रोटी का त्याग करता हूँ। कुछ दिनों के बाद उसके परिचित लोगों ने उसकी शिकायत करते हुए बताया कि गुरुजी वह युवक आपसे रात्रि में भोजन का त्याग करके गया था लेकिन वह तो रोज ही रात में खाता है। एक दिन गुरुजी ने उससे पूछा कि क्या तुमने नियम तोड़ दिया? युवक ने कहा-नहीं गुरुजी! मैंने रात्रि में रोटी खाने का त्याग किया है। मैंने एक भी दिन रात में रोटी नहीं खाई। उसकी बात सुनकर गुरुजी ने कहा-मुझे तो किसी ने बताया कि तुम रात में भोजन करते हो। उसने कहा-गुरुजी ! मैंने एक भी दिन रात में रोटी नहीं खाई, मैं तो पराठा, पूड़ी, बर्फी आदि खाता हूँ। यह है छल। कई लोग गुरु के सामने तो हाँ कह देते हैं और मन में यह बात रख लेते हैं कि मैं यह नियम एक दिन, आठ दिन अथवा 15-20 दिन तक पालूँगा। यह भी छल है। यदि आप बहुत दिन का नियम नहीं ले सकते हैं तो गुरु को आहार नहीं दें लेकिन झूठ बोलकर या छल करके आहार देना धोखा है। कभी इस भय से कि महाराज मेरे घर से चले जायेंगे तो लोग क्या कहेंगे, छल नहीं करें। आप पहले ही यह जानकारी ले लें कि महाराज क्या-क्या नियम दिलवाते हैं, यदि आप नियम ले सकते हैं तो महाराज/आर्यिकादि साधु का पड़गाहन करें। यदि नहीं ले सकते हैं तो आप संकोचवश पड़गाहन के लिए खड़े न हों और न ही संकोचवश नियम लें, क्योंकि आहार देने का जितना फल मिलेगा उससे कई गुणा पाप छल करने और नियम तोड़ने का लग जायेगा। अत: आप उतना ही नियम लें जितना निभ सके अथवा जितना निभा सकते हैं उससे थोड़ा कम नियम लें ताकि नियम सही निभ सके। जैसे एक माह में 10 दिन का ब्रह्मचर्य पालते हैं तो आठ दिन का नियम लें। जिससे नियम में दोष नहीं लगे। दिन में तीन बार खाते हैं तो पाँच बार ही खाने का नियम लें। लेकिन छल नहीं करें। दिखावे या प्रतिष्ठा के लिए क्षमता से बाहर नियम नहीं लें। अथवा बहुत लोगों के बीच में भावुक होकर अथवा उपदेश सुनकर बिना सोचे समझे या संकोचवश अर्थात् 'मैं बड़ों को मना कैसे करूँ' यह सोचकर भी नियम नहीं ले या अपने आपको मात्र अपनी दृष्टि से ही सही नहीं समझें, दुनिया की दृष्टि

का भी ध्यान रखें अर्थात् भले ही आप अपनी तरफ से अच्छी तरह नियम पाल रहे हैं लेकिन दुनिया (लोगों) आपको नियम सही पालने वाला नहीं मानती है तो कुछ दाल में काला अवश्य है, ऐसा समझना चाहिए। एक बार एक दम्पती ने गुरु से शुद्ध भोजन करने का नियम लिया। उनके भोजन की ही दुकान थी अर्थात् रेस्टोरेन्ट था। वे अपनी दुकान का भोजन शुद्ध ही मानते थे क्योंकि उनकी दृष्टि में वह भोजन शुद्ध था लेकिन...। ऐसा करने वाला क्या अपने-आप को ठगता नहीं है? क्या उसने गुरु के साथ छल नहीं किया है। क्या आप उसको शुद्ध भोजन करने वाला मान सकते हैं? क्या रेस्टोरेन्ट का भोजन भी शुद्ध हो सकता है?..। आप ऐसा छल कभी नहीं करें। इससे तो अच्छा है आप नियम नहीं लें, क्योंकि नियम नहीं लेने वाले की शायद दुर्गति नहीं हो लेकिन नियम तोड़ने वाले की दुर्गति होना तो निश्चित है अत: सोच समझकर नियम लें, छल नहीं करें, पाप से बचें।

नियम पालने में बुद्धि का उपयोग करें :

यदि आपने नियम ले ही लिया है, भूल से अथवा अज्ञानता के कारण विशेष परिस्थिति की छूट नहीं रखी है और आपके साथ कोई ऐसी परिस्थिति आ गई है तो आप अपनी बुद्धि का उपयोग करें ताकि आपका नियम भी नहीं टूटे और आपका स्वास्थ्य भी खराब न हो। जैसे- एक महिला ने नियम लिया कि मैं एक दिन में दो बार से ज्यादा नहीं खाऊँगी अर्थात् पीने की वस्तु तो दो बार से ज्यादा पी सकती हूँ लेकिन खाऊँगी नहीं। अचानक उसका स्वास्थ्य बिगड़ गया। उसको डॉक्टर ने दो सेवफल खाकर दवाई लेने को कहा अर्थात् खाली पेट दवाई नहीं लेना है। उसको मजबूर होकर तीसरी बार खाना पड़ा अर्थात् दोनों टाइम भोजन और प्रात:काल सेवफल। वह ऐसा करने में भी समर्थ नहीं थी कि प्रात:काल सेवफल खाले और एक टाइम भोजन कर ले। इसलिए उसको नियम तोड़ना पड़ा। नियम टूटने के बाद जब वह प्रायश्चित्त लेने आई तब मुझे समझ में आया कि इसका नियम मात्र थोड़ी सी बुद्धि का उपयोग नहीं कर पाने से टूट गया। यदि उसे खाली पेट दवाई नहीं लेनी थी तो वह दो सेवफल को दूध में मेस करके पेय बनाकर पी लेती तो स्वास्थ्य भी सुधर जाता और नियम भी नहीं टूटता। इसी प्रकार शक्कर के त्यागी के ब्लड प्रेसर

लो होने लगा है तो मुनक्का, छुआरा अथवा नारियल (डाब) के पानी से भी ब्लड प्रेसर को ठीक किया जा सकता है। यदि नारियल का पानी नहीं भाता है या पचता नहीं है, पीने से श्वास भरना, आँतों में सूजन आना जैसी तकलीफ होती है तो उसके रसगुल्ले (छेने के), हलुआ आदि बनाकर नारियल का पानी शरीर में पहुँचा कर स्वास्थ्य लाभ लिया जा सकता है। अष्टमी-चतुर्दशी-अष्टाह्निका आदि में हरी का त्याग है, दूध पचता नहीं है, छेना लेना है तो नीबू का रस तपेली आदि में डालकर अग्नि पर सुखा कर उस तपेली में दूध डालकर छेना बनाया जा सकता है अथवा सूखे आँवलों आदि का उपयोग भी किया जा सकता है (टाटरी आदि हिंसात्मक वस्तुओं का प्रयोग कभी नहीं करें) और नीबू को सुखाकर छेना बना दोनों कार्य सिद्ध किये जा सकते हैं। यदि आपने पापड़-बड़ी, खीचला आदि की मर्यादा की है अर्थात् आठ या पन्द्रह दिन या छह माह से ज्यादा पुराने पापड़ादि खाने का त्याग किया है तो आप कहीं पर भी अर्थात् अपने निकटतम रिश्तेदार के यहाँ पर भोजन करने गये हैं आपको उन पर विश्वास भी है फिर भी पूछ कर खावें। यदि पूछने में शरम आती है या पूछने से (व्यंग्यादि के कारण) नियम टूटने की सम्भावना है तो आप वह चीज खावे ही नहीं। ऐसे समय में यदि आप झूठ भी बोल दें कि यह चीज मुझे पचती नहीं है अथवा यह चीज खाने के लिए मुझे डॉक्टर ने मना किया है तो भी आपको पाप नहीं लगेगा। क्योंकि कषाय एवं इन्द्रियों की पुष्टि के लिए बोला गया असत्य ही झूठ है।

कभी-कभी हमारे सामने ऐसी परिस्थितियाँ खड़ी हो जाती हैं कि जिनके सामने हम अपना नियम तोड़ने के लिए मजबूर हों जाते हैं लेकिन ऐसी स्थिति में भी यदि हम थोड़ा-सा विवेक रखें, अपनी बुद्धि का उपयोग करें तो हम अपने नियम को बचाकर पाप से बच सकते हैं। एक दिन एक युवक ने बताया- माताजी, मुझे कुछ दिनों के लिए दिल्ली के हॉस्पिटल में रहना पड़ा। मैं वहाँ एक होटल में भोजन करने गया तो वहाँ छोला-भटूरा बने थे। मुझे द्विदल (दूध-दही के साथ दाल की चीज) खाने का त्याग था। दूसरी कोई खाने योग्य वस्तु नहीं दिख रही थी। भूख भी जोर से लग रही थी। अन्य कहीं भोजन की कोई आशा नहीं थी इसलिए मुझे द्विदल खाना पड़ा...। यदि वह थोड़ा विवेक रखता

तो छोला भी खा सकता था, भटूरा भी खा सकता था और अपना नियम भी निभा सकता था अर्थात् यदि वह पहले भटूरा या छोला कोई एक चीज खाकर पानी पी लेता, पानी से मुँह साफ कर लेता, बाद में दूसरी चीज खा लेता तो उसका नियम नहीं टूटता।

यदि आपने नियम लिया है, अचानक आपकी तबीयत खराब हो गई है। आपको पता है कि आपके घर वाले जल्दी से नियम तुड़वा देते हैं अर्थात् हॉस्पिटल ले जाते हैं तो आप बिल्कुल हल्ला नहीं करें अर्थात् हाय-धाय नहीं करें, उछल-कूद नहीं मचावे, रोना-धोना शुरू न करें। ऐसा करने से आपके घर वाले ही क्यों, गाँव के या कोई अनजान व्यक्ति भी आपकी पीड़ा को देखकर आपको हॉस्पिटल ले जायेंगे। एक बृह्मचारिणी (वृती महिला) के एक दिन भोजन के बाद पेट में ग्रास चुभने लगे अर्थात् तीवृ वेदना होने लगी। वह जोर-जोर से रोने लगी। उसके रोने से उसकी वेदना को देखकर समाज के लोगों ने डॉक्टर को बुलाकर इंजेक्सन लगवा दिया। यदि वह रोती नहीं चुपचाप लेटी रहती या सामान्य रूप से ही बताती तो भी शायद उसका नियम नहीं टूटता। उस दिन से उसने नियम ले लिया कि मुझे कितनी भी कैसी भी वेदना होगी मैं रोना-धोना नहीं करूँगी, उछल-कूद नहीं मचाऊँगी। यह भी नियम निभाने का बहुत बड़ा उपाय है। कम वेदना में भी यदि आपने उछलकूद की हाय-तोबा मचा दी अर्थात् अपनी वेदना को किसी भी प्रतिक्रिया या शारीरिक चेष्टा से व्यक्त किया तो आपका नियम निभना बहुत कठिन है। इसी प्रकार भोजन आदि में भी किसी चीज का त्याग है, आप भोजन करने बैठे। भोजन में दो-तीन चीज मात्र खाने योग्य थी अथवा केवल एक चीज ही खाने योग्य थी तो आप चुपचाप उन दो तीन चीजों से ही या पानी से ही रोटी-पूड़ी खाकर आ जावें। हल्ला-गुल्ला नहीं करें, अपने नियम को प्रकट नहीं होने दे, नहीं तो वहाँ भी आस-पास वाले आपको जबरन खिला देंगे या किसी दूसरी चीज में मिलाकर छल से खिला देंगे या व्यंग्य आदि करके आपको गुस्सा दिलाकर खाने के लिए मजबूर कर देंगे। अत: नियम पालने के लिए वेदना को शान्ति से सहन करना अति आवश्यक है, इससे नियम भी नहीं टूटेगा और भविष्य के लिए असाता वेदनीय आदि पापों का बन्ध नहीं होगा।

सावधानी :

(1) बिना सोचे भी नियम नहीं लेवें और इतना भी नहीं सोचें कि जिन्दगी में कुछ भी नियम नहीं ले पावें।

(2) नियम ले लिया है तो प्राण-प्रण से पालें, नियम लेने का पश्चाताप नहीं करें।

(3) नियम पालने के लिए युक्ति से काम करें ताकि साँप भी नहीं मरे और लाठी भी नहीं टूटे।

(4) अपने नियम को बार-बार सबके सामने नहीं कहते फिरें, नहीं तो हँसी के पात्र बनेंगे और नियम टूटने की संभावनाएँ बढ़ जायेंगी।

(5) दृढ़ संकल्पी/नियम पालने वाले लोगों के साथ रहें ताकि नियम अच्छी तरह पल सके।

(6) उम्र के अनुसार छोटा-मोटा नियम महीने-दो महीने का साल-दो साल के लिए लें ताकि नियम पालने की आदत बनी रहे।

(7) नियम लेने के पहले थोड़ा अभ्यास कर लें ताकि नियम टूटे भी नहीं और नियम लेने के बाद पछताना भी न पड़े।

उपसंहार :

इस संसार में जीव अनेक कार्य करता है। उनमें से कई कार्य शरीर की पुष्टि के लिए करता है। जैसे - प्राणायाम, योगासन, व्यायाम आदि। कई कार्य वह मनोरंजन के लिए अर्थात् मानसिक दबाव से बचने के लिए मन को हल्का एवं प्रसन्न करने के लिए करता है। जैसे-नाटक देखना, मित्रों आदि के साथ हँसी मजाक करना, रेडियो सुनना, टी.वी. देखना आदि। इसी प्रकार कई कार्य वह स्वास्थ्य की रक्षा के लिए, कई कार्य सामाजिकता/व्यावहारिकता निभाने के लिए, कई कार्य ख्याति प्राप्त करने के लिए तो कई कार्य वह आजीविका अर्थात् धन-प्राप्ति के लिए करता है, आदि-आदि इहलोक सम्बन्धी कार्य सभी देशों में सभी जाति वाले, छोटे-बड़े गरीब-धनाढ्य सभी करते हैं लेकिन हमारा भारत एक ऐसा देश है जहाँ इन सबके साथ परलोक (अगले भव) को सुधारने के लिए भी कुछ कार्य किये जाते हैं। भारत के लगभग सभी लोग भगवान को मानते हैं। सभी लोग पुण्य कमाने, सुख प्राप्त करने के लिए कुछ-कुछ धार्मिक

कार्य अवश्य करते हैं। जैन लोग विशेष रूप से धार्मिक अनुष्ठान करते हैं, क्योंकि जैनों के यहाँ कर्म को प्रधान माना गया है अर्थात् व्यक्ति जैसा कर्म/भाव करता है उसे वैसा ही अच्छा-बुरा फल प्राप्त होता है। भगवान न किसी को सुख देता है न दुःख देता है। लेकिन भगवान की भक्ति करने से एवं उनके द्वारा बताये मार्ग पर चलने से यम-संयम का पालन करने से पूर्वोपार्जित पापों का क्षय होता है। भविष्य के लिए पाप का बन्ध नहीं होता है और आगे के लिए भारी-भरकम सुख देने वाले पुण्य का बन्ध भी होता है। भगवान के दर्शन-पूजन, अभिषेक करना, माला फेरना, स्वाध्याय करना आदि अनेक प्रकार के अनुष्ठान करता है। इन अनुष्ठानों को करते समय इसे पानी लाना, गरम करना, द्रव्य धोना आदि अनेक प्रकार के आरम्भजनित कार्य भी करने पड़ते हैं। उन कार्यों को करते समय अज्ञानता या प्रमाद के कारण कुछ ऐसी प्रवृत्तियाँ हो जाती हैं या वह कर लेता है जिनसे पूजा आदि का जितना एवं जैसा फल मिलना चाहिए वैसा नहीं मिल पाता। पुण्य के साथ-साथ पापबन्ध का मिश्रण भी होता जाता है। हमारी धार्मिक क्रियाओं में पुण्य के साथ पाप का मिश्रण न हो उसी विधि को उपर्युक्त प्रकरण में बताया गया है। इन सबको जानकर उनके समान ही धार्मिक स्थलों/कार्यों में हम कैसा एवं कितना अविवेक करते हैं, उसको विचारकर उससे बचें, यही इसको पढ़ने-जानने का फल है। सबकी धार्मिक क्रियाएँ सार्थक हों, भगवान से मेरी यही प्रार्थना है।

पत्थर आदि हिलते हों तो :

कई घरों में मुख्य दरवाजे में प्रवेश करते समय सीढ़ियाँ होती हैं। उसमें सबसे पहली सीढ़ी थोड़ी ऊँची होती है। उस सीढ़ी पर चढ़ने के लिए उस सीढ़ी के नीचे एक पत्थर रख दिया जाता है। सीमेंट आदि से सेट (जमा हुआ) नहीं होने के कारण जब उस पर पैर रखते हैं तो वह पत्थर हिलता है। दिन में पचासों बार वहाँ से आना-जाना रहता है। जितनी बार जो कोई उस पर पैर रखता है उतनी ही बार उस पत्थर के नीचे बैठे हुए जीव या उस पत्थर के नीचे से रास्ता पार करने वाले जीव पत्थर के दबने से वहीं पर दबकर मर जाते हैं। लोक में माँसाहारी जीव साँप, मेंढ़क, छिपकली आदि अंधेरे में ही बैठे रहते हैं इसलिए उस पत्थर के हिलते ही वे मर जाते हैं।

इसी प्रकार कभी-कभी फर्श में से बीच का एक पत्थर निकल जाता है अथवा उसके आस-पास का छोटा-मोटा सपोर्ट निकल जाता है तो वह पत्थर हिलने लगता है, कभी रास्ते में अथवा अपने ही घर में नाली को ढकने के लिए अथवा नाली को पार करने के लिए नाली पर पत्थर रख दिया जाता है वह पत्थर भी दिन में सैकड़ों बार हिलता रहता है। फिर यदि सार्वजनिक नाली पर ढका पत्थर है तो वह हजारों बार महीनों-वर्षों तक हिलता रहता है। कोई विवेकवान यदि उसको जमा दे तो उसे हजारों जीवों की रक्षा का फल मिल सकता है।

इसी प्रकार जब रोटी बनाने के लिए आटा लगाते हैं अर्थात् आटे में पानी डाल कर गूँथते हैं तब थाली, परात आदि जमीन पर रगड़ खाते रहते हैं। उस समय भी उसमें नीचे आ जाने वाले जीव उसके साथ जमीन में रगड़ खाकर मरण को प्राप्त हो जाते हैं। इसलिए आटा लगाते या पापड़-नमकीन का बेसन आदि गूँथते समय जिसमें गूँथ रहे हैं उसके नीचे फट्टी, कपड़ा आदि कुछ डाल दें ताकि वह बार-बार जमीन में रगड़ नहीं खावे।

कई बार हमारे घर के कुर्सी, टेबिल, मेज, स्टूल आदि का भी एक तरफ का पाया छोटा होने से या थोड़ा-सा टूट जाने से हिलता रहता है। जब कभी कोई उसके पास से निकलता है तो उसके स्पर्श मात्र से ही वह हिलता रहता है। उस पाये को छोटा-सा पत्थर या कागज का टुकड़ा आदि लगाकर स्थिर (सेट) करके हिंसा से बचा जा सकता है। हम लोगों ने एक मंदिर में एक टेबिल देखी थी जिस पर यद्यपि मारबल का वजनदार पत्थर रखा था फिर भी उसका एक पाया इतना छोटा था कि कोई-चावल चढ़ाते समय भी उस टेबिल को छू जावे तो वह टेबिल हिल जाती थी। सैकड़ों लोग रोज मंदिर आते थे, चावल चढ़ाते समय कई लोगों से वह टेबिल हिलती थी लेकिन किसी के दिमाग में यह नहीं आया कि हम थोड़ा-सा सपोर्ट देकर इसका हिलना बन्द कर दें। यदि कोई ऐसे स्थान पर थोड़ा-सा ध्यान दे दे तो अहिंसा धर्म का पालन कितना अच्छा किया जा सकता है।

कई लोग भोजन करते समय स्वयं पाटे पर बैठकर या थाली को पाटे पर रखकर भोजन करते हैं। वह पाटा हिलता रहता है लेकिन वह इतना नहीं

हिलता है कि थाली गिर जावे अथवा उस पर बैठने वाला गिर जावे इसलिए जब तक भोजन करते हैं पाटा हिलता ही रहता है। कभी-कभी साधु को आहार (भोजन) कराते समय पाटे के हिलने से उस पर रखा हुआ गिलास-जग आदि लुढ़क जाते हैं, साधु को अन्तराय हो जाता है। कभी-कभी पाटा हिलते रहने से हमारे घर में आहार के लिए बड़ी दुर्लभता से आये हुए साधु बिना आहार किये ही लौट जाते हैं। कभी-कभी जमीन के ऊबड़-खाबड़ या ऊँची नीची होने से भी पाटा आदि हिलते हैं उनको थोड़ा-सा स्थान बदलकर रख देने से भी पाटे का हिलना बन्द हो जाता है। इस प्रकार थोड़ा-सा विवेक रखकर अपूर्व पुण्य कमाया जा सकता है।

पूजन, स्वाध्याय आदि करने के लिए मंदिर में चौकी, बाजोटा, रहल स्टेंड आदि अवश्य होते हैं। उनमें से लगभग 99% चौकी आदि तो मेरे अनुमान से हिलते ही हैं और शायद एक प्रतिशत भी ऐसे धर्मात्मा लोग नहीं होंगे जो चौकी आदि को कुछ सपोर्ट देकर उसका हिलना बन्द करके अर्थात् उसे जमाकर के पूजन करते होंगे। क्या वे भगवान की पूजन करते समय भी पापास्रव नहीं करते जाते हैं। कभी-कभी तो अभिषेक के समय भगवान को विराजमान करने की चौकी भी इतनी हिलती है कि भगवान की प्रतिमा तक डगमगाने लगती है। यदि सिद्ध भगवान की लम्बी पतली पुरुषाकार प्रतिमा हो तो गिर ही जाती है। थोड़े से प्रमाद के कारण कितना बड़ा पाप हमें अनावश्यक ही लग जाता है और यदि हम थोड़ा-सा विवेक रख चौकी आदि को जमाकर पूजन आदि करें तो सातिशय पुण्य कमाकर मोक्षमार्ग भी प्राप्त कर सकते हैं। अत: विवेक अवश्य रखें।

सावधानी :

(1) आटा लगाने के पहले परात (बर्तन) के नीचे फट्टी/कपड़ा आदि अवश्य डाल दें। इससे परात घिसेगी भी नहीं और कोई जीव भी उसके नीचे आकर नहीं मरेगा।

(2) टेबल, कुर्सी आदि हिल रहे हैं तो कागज को फोल्ड करके लगा दें।

(3) यदि पत्थर हिल रहा है, पत्थर के आस-पास गीला होता है तो कागज/कपड़ा/लकड़ी आदि नहीं लगावें, क्योंकि इनमें पानी का सम्पर्क होने

पर हजारों त्रस जीव उत्पन्न होते हैं। पत्थर के पतले टुकड़े लगावें।

(4) कोई भी पत्थर आदि हिल रहा हो तो चूने या ईंट का टुकड़ा या कोमल/पतला सपोर्ट नहीं लगावें, क्योंकि वह तो दो-चार घण्टे में ही टूट जायेगा, उसका चूरा हो जायेगा, जिससे पुन: हिलने वाली स्थिति बनेगी।

(5) मंदिर की चौकी/बाजोट आदि के अपना रुमाल या एक लौंग आदि लगाकर हिलना बन्द कर दें।

(6) आप सक्षम हैं तो सार्वजनिक नाली के ऊपर पत्थर सेट करवा दें, भारी पुण्य का बन्ध होगा।

(7) पत्थर आदि को देखते समय एक साथ दोनों कोने पकड़कर नहीं हिलाएँ। दोनों कोने पकड़ लेने से वह हिल रहा होगा तो भी नहीं हिलेगा, क्योंकि दोनों को आपके हाथ का सपोर्ट मिल जायेगा। एक-एक करके चारों कोने हिलावें ताकि सही समझ में आ जावे कि कहाँ से हिल रहा है।

(8) पाटा, चौकी आदि का उपयोग करने से पहले हिलाकर अवश्य देख लें अन्यथा बीच में बार-बार विकल्प होगा/हिंसा होगी।

किवाड़ादि खोलते समय :

कई लोग जवानी के जोश में होश भूल जाते हैं। वे जब दरवाजा खोलते हैं तो ताकत दिखाते हैं। वे इतनी जोर से दरवाजा खोलते हैं कि उसकी आवाज घर के बाहर तक सुनाई देती है, ऐसा ही वे बन्द करते समय भी करते हैं, बेचारा छोटा-मोटा कोई जीव किवाड़ों के पुर्जों के बीच में अर्थात् जहाँ से दरवाजा बन्द होता तथा खुलता है, बैठा हो तो उसके प्राण पखेरू ही उड़ जाते हैं। एक बार हम लोग एक धर्मशाला में रुके हुए थे। एक दिन वहाँ दरवाजे के आस-पास कोई जीव मरा हुआ पड़ा था। चारों तरफ ढूँढ़ा गया तब लगभग एक विलस्त लम्बी एक छिपकली उन किवाड़ों के पुर्जों के नीचे चिपकी थी। तब समझ में आया कि किवाड़ों को बन्द करते समय प्रमाद के कारण यह छिपकली इसमें दबकर मर गई। एक घर में तो साँप बाहर से द्वार के बीच के खाली स्थान से अन्दर आ रहा था। गृह मालिक ने फट दरवाजा बन्द किया, साँप वहीं कट गया। इसी प्रकार मेंढ़क, चूहा आदि जीव इसके बीच में आकर मर जाते हैं तो छोटे-छोटे कीड़े-मकोड़ों के बारे में तो विचार ही नहीं किया जा सकता है।

कई घरों में एक किवाड़ ढीला होने से खोलते ही बन्द हो जाता है। उसको खुला रखने के लिए उसके आगे एक पत्थर रख दिया जाता है। जब भी किवाड़ बन्द करना होता है उस पत्थर को पैर से एक तरफ खिसका दिया जाता है। उस पत्थर को खिसकाते समय नीचे देखने का तो समय ही नहीं रहता है। कोई देख भी ले तो छोटे-छोटे जीव तो उसमें दिख ही नहीं सकते हैं। वह पत्थर इतना भारी होता है कि जीव को छू जावे तो छोटे जीव तो तत्काल मर ही जाते हैं। अत: पत्थर को खिसकाने के स्थान पर हाथ से उठाकर भी रखा जा सकता है अथवा थोड़ा बीच से देखकर भी पत्थर को अलग करने पर अहिंसा पल सकती है। अथवा एक-बार दरवाजे को ठीक करवा दिया जाय तो जिन्दगी भर के लिए पत्थर लगाने की आवश्यकता ही नहीं पड़ेगी।

कई घरों में किवाड़ थोड़ा बड़ा होता है जिससे खोलते समय जमीन से रगड़ता है। ऐसे स्थानों पर उस रगड़ के कारण वहाँ की जमीन तक में निशान बन जाता है फिर भी खोलने वाले को यह भान नहीं आता है कि हम किवाड़ को थोड़ा ऊपर उठाकर भी खोल सकते हैं लेकिन हमें तो यह पता ही नहीं है कि इस किवाड़ को खोलने में भी हिंसा हो सकती है। कभी यदि कोई दयालु व्यक्ति उस किवाड़ को खोलते समय आवाज सुन ले तो एक चीख सुनाई देती है। वास्तव में यदि अन्तर्मन से उसे कोई सुनले तो इस प्रकार से किवाड़ कभी नहीं खोल सकता। अत: अति उत्तम तो यह है कि आपके घर में यदि कोई ऐसा किवाड़ हो तो ठीक करवा लें ताकि हमेशा की हिंसा समाप्त हो जावे। आप प्रमाद नहीं करें और न यह सोचें कि कोई खास हिंसा की बात नहीं है। आपके एक छोटे से प्रमाद के कारण पचासों वर्षों तक यह हिंसा आपके निमित्त से होती रहेगी, पापास्रव होता रहेगा। अत: ठीक करवा ही लें।

इसी प्रकार डिब्बा, कोठी, टंकी, ड-म आदि को ढकते समय ध्यान रखें। दो चार घण्टे पहले से भी खुले हुए डिब्बे में कोई छिपकली, साँप, चूहा आदि घुस गये हैं हमने डिब्बे को अन्दर देखे बिना ही बन्द कर दिया तो वह जीव उसी में ऑक्सीजन नहीं मिलने से मर जायेगा। इसलिए एक सैकेण्ड में डिब्बे में दृष्टि डालकर उसे बन्द करें ताकि जीव हिंसा से बच सकें।

इसी प्रकार खिड़की, चैनलगेट, अलमारी, शटर आदि को खोलते,

बन्द करते समय भी ऐसी घटना घट सकती है अत: सावधानी रखें।

सावधानी :

(1) किवाड़ खोलने के पहले किवाड़ों को थोड़ा थपथपा दें ताकि कोई जीव हो तो भाग जावे।

(2) किवाड़ खोलने के पहले बीच का स्थान अवश्य देख लें।

(3) यदि किवाड़ जमीन से टच करता हुआ खुलता हो तो उसे ठीक करवा लें।

(4) यदि किवाड़ ढीला हो तो ठीक करवा लें ताकि पत्थर को खिसकाने के पाप से बच जावें।

मुरब्बे में चुहिया :

एक बार एक लड़की ने बताया-माताजी! एक दिन हम आँवले का मुरब्बा खा रहे थे। पापा च्यवनप्रास का एक पीपा लाये थे। जैसे ही मैंने पीपे में अंगुलियाँ डालकर मुरब्बा निकाला तो आँवले के स्थान पर एक छोटी सी चुहिया हाथ में आई...। इसका कारण क्या हो सकता है? पीपे भरकर रख दिये और बन्द करते समय ध्यान नहीं दिया। इसलिए ऐसा हुआ। यद्यपि च्यवन प्रास में तो चुहिया गिरते ही कुछ देर में ही मर गई होगी। फिर भी उसको यदि बन्द करते समय भी निकाल लेते तो कम-से-कम खाने वाले बीमार तो नहीं होते, क्योंकि मृत चुहिया के सड़ने से उसमें कितने ही जीवाणु उत्पन्न हो गए होंगे। भरते ही यदि बन्द कर देते तो चुहिया की हिंसा से भी बच जाते।

ऐसे ही पुस्तक-कॉपी, पेड-डायरी आदि को बन्द करने के पहले भी जहाँ से पुस्तकादि खुले हैं, उसको खड़ी करके फटक लें, आँखों से देख लें ताकि यदि कोई मच्छर, चींटी, कीड़ा आदि उस पर चल रहे हों तो निकल जावे। कभी-कभी रात में पुस्तक पढ़ते, स्वाध्याय करते समय लाइट के कीड़े गिरते रहते हैं। दोपहर में भी मक्खियाँ भिनभिनाती रहती हैं। वे पुस्तक पर भी बैठती हैं। अचानक बिना देखे पुस्तक-कॉपी बन्द कर देने से वे उसी पेज में दबकर चिपक जाती हैं। कई बार स्वयं की पुस्तक-कॉपी में, मंदिर आदि की पुस्तक-कॉपी में मरे हुए, चिपके हुए मच्छर आदि मिल जाते हैं। फोल्डिंग स्टूल, स्टेण्ड, रहल आदि को बन्द करने से पहले भी थोड़ा थपथपा लें, आँखों से देख लें ताकि हिंसा से बच सकें।

इसी प्रकार कपड़े की पेटी, गेहूँ, दाल,चावल आदि के बर्तन खुले नहीं छोड़ें। खुले छोड़ दिये हैं तो देखकर बन्द करें। बन्द करते समय ध्यान रखें कहीं एक तरफ से पेटी आदि में घुसने के लिए छोटा-सा छेद/पोल तो नहीं रह गई है अन्यथा बन्द करना, नहीं करना एक जैसा हो जायेगा, क्योंकि उस पोल में से चूहे आदि जीव अन्दर घुसकर सामान खराब कर देंगे और यदि वे नहीं निकल पाये तो अन्दर ही अन्दर मर जायेंगे। सिर में तेल डालकर शीशी को तत्काल बन्द करें। बच्चों में भी शीशी को तत्काल बन्द करने की आदत डालें। इससे दो लाभ होंगे-पहला अचानक यदि तेल की शीशी लुढ़क गई या हाथ से छूट गयी तो तेल जमीन में गिरकर खराब नहीं होगा। **दूसरा**-शीशी में मक्खी-मच्छर आदि गिरकर नहीं मरेंगे। शीशी में से तेल लेते ही शीशी का मुँह भी अच्छी तरह पौंछ लें। इससे भी जीवों की हिंसा नहीं होगी। यदि नारियल का तेल आदि ठोस चीज सिर में डालते हैं तो भी शीशी को अवश्य बन्द करें, क्योंकि उनमें भी चिकनाई के कारण जीव चिपककर मर सकते हैं। यदि बच्चों/बड़ों की आदत शीशी खुली छोड़ने की पड़ गयी है तो दो ढक्कन वाली, एक छोटा ढक्कन जिसमें एक छोटा-सा छेद होता है दूसरा बड़ा ढक्कन, शीशी रखें ताकि मक्खियाँ आदि तेल में नहीं गिर पावें और शीशी के लुढ़कने, गिरने पर भी तेल का नुकसान नहीं हो।

सावधानी :

(1) बैग, पर्स आदि में से चीज निकालकर तत्काल उसकी चेन बन्द कर दें।

(2) यदि बहुत देर से चेन खुली हुई है तो (पर्स आदि को) अन्दर से देखकर बन्द करें।

(3) बोरी, कार्टून आदि को सिलने/बन्द करने के पहले थपथपा लें।

(4) पुस्तक-कॉपी आदि को बन्द करने के पहले थोड़ा फटक लें।

कपड़े के बैग में साँप :

कई बार कार्टून, बोरी आदि में पुस्तकें, कपड़े आदि सामान जमाकर रख दिये। दो-चार घण्टे या दिनों के बाद सीधे उनको बाँध दिया या सिल दिया तो अधिकांशत: चूहा और छिपकली आदि तो रह ही जाते हैं। बोरी आदि से उन्हें खाने-पीने को कुछ भी नहीं मिलने से वे उसी में तड़फ-तड़फ कर प्राण

छोड़ देते हैं। यदि कार्टून को बन्द करने के पहले, बोरी को सिलने के पहले थोड़ा ऊपर-नीचे कर देख लेते या आगे-पीछे से थप-थपा लेते तो वे जीव डरकर बाहर निकलने की कोशिश करते जिससे हमें समझ में आ जाता कि इसमें चूहा आदि कोई जीव है। हम उसे निकालकर उसकी हत्या के पाप से बच जाते। एक बार कुछ विदेशी पर्यटक भारत घूमने आये। वे एक लॉज में रुके। उन्होंने अपने बैग में से कपड़े निकाले और बैग की चेन बन्द किये बिना ही स्नान करने के लिए चले गये। स्नान करके घूमने को निकल गये। शाम को आये और जल्दी-जल्दी बैग की चेन बन्दकर ताला लगा कर अपने देश को रवाना हो गये। उन्होंने घर जाकर बैग खोला तो कपड़ों के बीच में अचानक दो-ढाई फुट लम्बा साँप कुण्डली डाले बैठा दिखाई दिया। पुण्य योग से साँप कपड़े निकालने वाले के हाथ में नहीं आ पाया अन्यथा क्या होता, भगवान ही जाने। वे लोग एक-दो दिन में ही घर पहुँच गये थे और बैग भी खोल लिये थे इसलिए वह साँप मरा नहीं। लेकिन यदि वे 8-10 दिन बैग नहीं खोलते तो साँप उसी में मर जाता और यदि कपड़े निकालते समय साँप काट लेता तो कपड़े निकालने वाला मरण को प्राप्त हो जाता। दोनों में ही हिंसा होती अत: बैग, पर्स, डिब्बा-डिब्बी, बोरी आदि को खुला नहीं छोड़ें। यदि खुला छोड़ा है तो पहले थपथपा कर थोड़ा आँखों से देखकर बन्द करें, सिलें ताकि हिंसा से बच सकें। आप इस लोभ में नहीं पड़ें कि पर्स-बैग आदि की चेन बार-बार खोलने से खराब हो जायेगी। चार बार नई चेन डलवाने में भी इतना पैसा खर्च नहीं होगा जितना पैसा एक बार किसी जीव-जन्तु के काटने पर हो जायेगा। और यदि जिन्दगी में एक बार भी कोई छोटा-मोटा जीव मर गया तो इतने पाप का बन्ध हो जायेगा जिसके उदय में भवों-भवों तक चेन वाले बैग-पर्स की बात तो दूर कपड़े का सामान्य थैला मिलना भी दुर्लभ हो जायेगा। उस पाप के फल को भोगते समय मात्र आँसू बहाने के अलावा कोई चारा नहीं रहेगा। अत: विवेक अवश्य रखें।

इसी प्रकार दुकानों में भी तेल-डालडा घी आदि के पीपे होते हैं, अधिकांशत: तेल पीपे की पेटी में ही रखा जाता है। बार-बार खोलने-बन्द करने से उस पेटी का ढक्कन लगभग टूट ही जाता है। उसका ढक्कन सही

ढंग से बन्द नहीं होने के कारण उसमें चूहे आकर गिर जाते हैं। व्यापारी उसमें से चूहे को निकालकर सड़क पर फेंक देता है। वह पेटी को यदि अच्छे ढंग से ढककर रखता तो हिंसा से बच जाता। ग्राहकों की भीड़ के कारण बार-बार बन्द नहीं भी कर पाये तो भी दो-चार घण्टे के लिए दुकान बन्द कर रहे हैं, दुकान बन्द करके भोजन करने जाना है, रात्रि में दुकान बन्द करके घर जा रहे हैं तो कम-से-कम डिब्बों-पेटियों को व्यवस्थित ढंग से बन्द कर ही देना चाहिए ताकि हिंसा से भी बच सके और दुकान का माल भी खराब नहीं हो। दुकान में चूहे ज्यादा हैं तो पेटी बन्द करके उस पर कोई वजन वाली चीज रख दें जिससे चूहे उसको नहीं खोल पावें।

इसी प्रकार पेन को खोलकर ढक्कन को पेन के पीछे ही लगा दें। ताकि उसमें कोई जीव न घुस पावे। अन्यथा पेन बन्द करते समय उसमें बैठा जीव मर जावेगा, क्योंकि उस ढक्कन में भी जीव आकर बैठ सकता है और बातें करते-करते बिना देखे ही ढक्कन लगा देने पर वह मर सकता है। इससे एक लाभ और होगा उस ढक्कन को कोई बच्चे आदि उठाकर नहीं ले जा सकेंगे और ढक्कन को ढूँढ़ने में समय भी वेस्ट नहीं करना पड़ेगा।

सिर में जुँए पड़ जावें तो :

संसार में शायद ही कोई महिला होगी जिसके आज तक कभी सिर में जूँ नहीं पड़ी हो। बड़े होने के बाद समझदारी आने पर तो फिर भी सम्भव है जुँए नहीं पड़ी हों लेकिन बचपन में तो जुँए हो ही जाती हैं। जुँए होना ऐसा कोई अपराध नहीं है और न ही सिर में से जुँए निकालना ही बड़ा अपराध है, क्योंकि जुँए काटती हैं, उसकी वेदना से बचने के लिए उन्हें सिर में से निकालना आवश्यक है। जुँए निकालने से इतना पापबन्ध नहीं होता है जितना उनको निकालकर इधर-उधर, जहाँ-तहाँ फेंक देने से, उनकी रक्षा का ध्यान नहीं रखने से होता है। पुराने जमाने में महिलाएँ जुँओं को निकालकर (जो कंघी में बाल आ जाते थे) अपने ही बालों में रखकर किसी एकान्त स्थान में (जहाँ कोई जीव-जन्तु उन्हें खा नहीं पावे, पैरों से कुचल नहीं पावे) रख देती थीं लेकिन पूरे देश में हर स्थल पर शायद ऐसी परम्परा न हो इसलिए अथवा बुद्धिमान किसी महिला ने उसको अनुचित समझकर बन्द कर दिया हो। जैसा भी हुआ

हो इससे यहाँ कोई प्रयोजन नहीं है। वर्तमान में कई महिलाएँ जुँए निकालकर पानी में डाल देती हैं। उनका विचार रहता है कि जुँए पानी में मरती नहीं हैं, वे तो पानी में तैरती हैं। जब हम पानी को धूल में फेंक देते हैं तो पानी को धूल चूस जाती है और जुँए अपने स्थान पर चली जाती हैं। लेकिन यदि आप उन्हें ध्यान से देखेंगे तो समझ में आयेगा कि वे पानी में तैरती नहीं तड़फती हैं अपने आपको पानी में से बाहर निकालने की कोशिश करती हैं।

दूसरी बात सभी महिलाएँ जुँओं के पानी को धूल में ही डालेंगी ऐसा नहीं कहा जा सकता है। **तीसरी बात** यदि बहुत देर अर्थात् 15-20 मिनट भी यदि उस पानी को नहीं फेंका तो आप सोचें वे कब तक पानी में तैरती रह सकती हैं। उनके शरीर में आखिर कितनी देर तक तैरने की शक्ति हो सकती है। एक शक्तिशाली आदमी भी बहुत देर तक तालाब आदि में तैरता रहे तो थक कर डूब जाता है तो वह एक दो ग्राम के वजन वाली जूँ कितनी देर तैर पाएगी? मेरे अनुमान से वह 2-4 मिनट से ज्यादा नहीं तैर पाती होगी। और शायद कोई महिला होगी जो बालों में से जुँए निकालकर 5-7 मिनट में उनको व्यवस्थित कर पाती होगी, क्योंकि 5-7 मिनट में तो सामान्य रूप से ही बाल नहीं बन पाते हैं तो जब जुँए निकालनी होती हैं उस दिन तो ज्यादा टाइम लगता ही है। अत: पानी में डालने पर किसी भी हालत में जुँओं के बचने की गुंजाइस नहीं है।

कई महिलाएँ सिर में से जुँए निकालकर राख में डाल देती हैं तो कोई नाली में ही फेंक देती हैं। कोई महिलाएँ तो इतनी आलसी होती हैं कि तीसरी मंजिल में खड़े-खड़े ही उन्हें नीचे फेंक देती हैं।

आप सोचें यदि आपको तीसरी मंजिल से पटक दिया जाये, राख के ढेर में डाल दिया जाये नाली में फेंक दिया जाय तो क्या आपके प्राण बच पायेंगे, क्या आपको कुछ तकलीफ नहीं होगी? इसी प्रकार उसको भी वेदना होती होगी। कई महिलाएँ सोचती हैं कि इतनी छोटी जूँ को क्या लगती होगी? उनका ऐसा कहना उचित नहीं है, क्योंकि शरीर के छोटे-बड़े होने से सुख-दु:ख का कोई सम्बन्ध नहीं है। वेदना तो मोहनीय कर्म के कारण होती है। जूँ के मोहनीय कर्म है। उसको भी हमारे समान ही वेदना होती है। वे भी हमारे समान रोती-

चिल्लाती हैं लेकिन उनकी धीमी चिल्लाने की आवाज हमारे कानों तक नहीं पहुँच पाती है इसलिए हमें लगता है कि उनको वेदना नहीं होती होगी? कोई-कोई महिलाएँ कहती हैं कि माताजी इन जुँओं को यदि हम अपने घर में अथवा आस-पास छोड़ देंगे, छाया/सुरक्षित स्थान में रख देंगे तो वे आकर पुन: हमारे सिर में चढ़ जायेंगी। अथवा मक्खियाँ उन्हें लाकर हमारे सिर में रख देंगी तो एक जूँ से सैकड़ों जुँए हमारे सिर में हो जायेंगी। ऐसा तर्क करने वालों से मैं पूछना चाहती हूँ कि यदि आपके पड़ोस में किसी के सिर में जुँए होंगी तो क्या वे आपके सिर में नहीं चढ़ सकती हैं अथवा आपके घर आपकी कोई रिश्तेदार अथवा आपकी सहेली आदि कोई आयेगी, उसके सिर में जुँए होंगी तो आप क्या करेंगी? आप किस-किस से बच सकती हैं।

आप अपने सिर से निकली जुँओं की रक्षा करें। आपको जीवरक्षा का फल मिलेगा अन्यथा आप पानी में नाली में डालेंगी तो आप भी नदी नाले, तालाब गटर-नहर आदि में गिरकर, डूब कर मरण को प्राप्त होंगी। यदि आप राख में डालेंगी तो मिट्टी आदि में दबकर आपका मरण होगा और यदि आप उसकी रक्षा करेंगी तो आप भी मौत के मुख में जाकर भी जीवित बची रहेंगी। अत: आपको जैसा भविष्य बनाना है वैसा ही कार्य करें।

आप संकल्प रखें कि हम कुछ भी हो बुद्धिपूर्वक किसी भी जीव को नहीं मारेंगे।

कई महिलाएँ सोचती हैं कि जुँओं को निकालकर पानी में डालेंगे तो पाप लगेगा अत: अपन तो मेडिकर शेम्पू से नहा लो, सिर साफ हो जायेगा। अथवा और कोई ऐसी चीज से नहा लो या सिर में ऐसी चीज डाल दो जुँए अपने-आप खतम हो जायेंगी। ऐसा करने से भी सारी जुँए मर ही जाती हैं। शेम्पू आदि से जुँए तो मरती ही हैं, उसके साथ-साथ उस शेम्पू का पानी जहाँ तक पहुँचता है वहाँ तक के अन्य जीव भी मर जाते हैं और शेम्पू के जहर से हमारे सिर में भी कई बीमारियाँ उत्पन्न हो जाती हैं अत: ऐसी चीजों का कभी उपयोग नहीं करें।

सावधानी :

(1) यदि जुँओं को अपने घर के आस-पास अथवा घर में ही किसी छाया

के स्थान में छोड़ने में शंका होती हो तो बालों के साथ उन्हें एक डिब्बी में रखकर एक-डेढ़ किलोमीटर दूर छोड़ आवें।

(2) मेडिकर शेम्पू आदि जुँए मारने वाली किसी भी चीज का उपयोग नहीं करें, आपको स्वास्थ्य और धर्म दोनों का लाभ होगा।

(3) सिर को साफ रखें। पसीना और तेल आदि का मिश्रण नहीं होने दें ताकि जुँए उत्पन्न ही न हों।

(4) बारिस के पानी से बचें क्योंकि बारिस के पानी से बहुत जल्दी जुँए उत्पन्न होती हैं।

(5) बालों को रोज-रोज गीला नहीं करें और दिन में एक बार कंघी अवश्य करें। गीला हाथ फेर कर ऐसे ही जमाते रहने से बहुत जुँए उत्पन्न होती हैं।

यदि साँप आदि निकल आवे तो :

कभी-कभी घर में साँप-बिच्छू आदि जहरीले जीव निकल आते हैं तो पापी लोग उन्हें मार डालते हैं। वे सोचते हैं कि यदि हम इन्हें छोड़ देंगे तो ये हमें काट लेंगे, हम मर जायेंगे, हमारे बच्चे इन्हें देखकर डर जाएँगे....। मारने वाला थोड़ा गहराई से सोचे कि क्या दो-चार साँप-बिच्छू को हम मार डालेंगे तो संसार के सभी साँप-बिच्छू समाप्त हो जावेंगे। यदि आपने एक साँप को मार डाला तो क्या दूसरा साँप आकर आपको नहीं काट सकता? आपको क्या पता आपके घर के किस कोने में साँप छुपकर बैठा होगा? वह कहाँ से आया, कब आया? हमें कुछ भी पता नहीं है और कब किस दरवाजे से आ जावेगा, आ सकता है, कोई भरोसा नहीं है। जैसे - हम जीव हैं, हम जीने के लिए भोजन-पानी आदि सामग्रियों को जुटाते हैं तो क्या उनको जीवित रहने के लिए भोजन-पानी आदि की आवश्यकता नहीं होती होगी। इसलिए वे भी भोजन ढूँढ़ते-ढूँढ़ते आपके घर में आ गये तो आपने उनके प्राण ही ले लिये, क्या यह न्याय है? मेरे कहने का अर्थ यह नहीं है कि आप साँप-बिच्छू आदि को अपने घर में पाल लो। रहने दो, निकालो ही नहीं। यह सत्य है कि उनसे डर लगता है लेकिन जब तक हम उनका कुछ बिगाड़ते नहीं हैं, हमारे पैर आदि से उनका जब तक कोई नुकसान नहीं होता अथवा पूर्व भव का कुछ वैर परिणाम

नहीं होता है तब तक वे हमारा कुछ भी नहीं बिगाड़ते हैं फिर भी डर लगता है तो आप उन्हें किसी डिब्बा, मटका, बोरी आदि में भरकर गाँव के बाहर जंगल में छोड़ आवें या किसी से छुड़वाकर अपनी रक्षा कर सकते हैं और उनके प्राणों की हिंसा से भी बच सकते हैं।

इसी प्रकार किसी की दुकान, गोदाम, घर आदि में चूहे हो जाते हैं। वे चूहे घर की सामग्रियाँ भी खराब करते हैं और परेशान भी करते हैं। उन चूहों की तकलीफ से बचने के लिए कई निर्दय लोग तो आटे के साथ जहर (चूहे मारने की दवाई आदि) मिलाकर गोलियाँ बनाकर रख देते हैं। खाने के लोभ में चूहे उन्हें खा जाते हैं और घंटे दो घण्टे में तड़फ-तड़फ कर मर जाते हैं। क्या चूहों को घर से निकालने का कोई दूसरा उपाय नहीं हो सकता है? कई लोग इस हिंसा से बचने के लिए चूहों को पकड़ने के लिए पिंजड़ा रखते हैं। पिंजड़ा रखने से ज्यादा पाप नहीं लगता है लेकिन वे उस पिंजड़े को कई दिनों तक सम्हालना भूल जाते हैं, ऐसी स्थिति में बेचारे चूहे उस पिंजड़े में भोजन नहीं मिलने से मर जाते हैं। अथवा किसी ने पहले दिन ही पिंजड़े को सम्हाल लिया। पिंजड़ा लेकर वह जंगल में छोड़ने ले गया लेकिन छोड़ते समय थोड़ी सी सावधानी नहीं रखी तो जैसे ही चूहे पिंजड़े से निकलकर भागे कौवे आदि माँसाहारी जीवों ने आकर पकड़ लिया, मार डाला तो वही बात हो गई। एक ने स्वयं जहर की गोली रखकर मारा तो दूसरे के अविवेक/प्रमाद के कारण चूहे मारे गये/मर गये। यदि हम थोड़ी सावधानी रखें तो चूहों को घर से अलग भी कर सकते हैं और चूहों की रक्षा भी कर सकते हैं; चूहों की हिंसा से बच सकते हैं।

इसी प्रकार कभी-कभी गाँव में कुत्ते बहुत बढ़ जाते हैं, लोग उन्हें जहर खिलाकर मार डालते हैं। उन्हें पकड़कर जंगल आदि में छुड़वाकर भी कुत्तों को कम किया जा सकता है। कुत्तों सम्बन्धी शिकायत करने वाला यदि थोड़ा विवेक रखे; इस ढंग से शिकायत नहीं करे कि नगर-निगम को जहर देकर कुत्तों को मारना पड़े। इसी प्रकार सूअर आदि के बढ़ने पर भी होता है। कभी-कभी कुत्ता, सूअर आदि पागल हो जाते हैं तो उन्हें भी जहर देकर या लाठी से पीट-पीटकर मार डालते हैं। इसकी अपेक्षा उस पागल कुत्ते-सूअर आदि को पकड़कर

किसी कमरे आदि में बन्द कर दिया जाय, समय-समय पर उसको भोजन-पानी देकर उसकी हिंसा से भी बचा जा सकता है और अपनी रक्षा भी की जा सकती है।

साँप को मारने से :

एक सेठ एक दिन एक गाँव में व्यापार के लिए गया। वहाँ उसने एक आश्चर्यजनक घटना देखी। वहाँ एक झोपड़ी धग्-धग् कर जल रही थी और सब लोग खड़े-खड़े तमाशा देख रहे थे, प्रसन्न हो रहे थे। उस व्यापारी ने यह देखकर आश्चर्यचकित हो पूछा-''भाई, बेचारे किसी की झोपड़ी जल रही है उसकी आग बुझाने की बात तो बहुत दूर आप लोग उसे देखकर आनन्दित हो रहे हैं। आपको कितना पाप लगेगा, क्या आपको पता नहीं है ?'' उन्होंने कहा-''सेठ जी इस झोंपड़ी में एक सर्पिणी ने 108 बच्चों को जन्म दिया है। हमेशा एक-दो बच्चे निकलते हैं, हम लोगों को काटते हैं, अत: झोपड़ी को ही जला दिया ताकि सर्प-सर्पिणी तथा उनके बच्चे सब एक साथ जलकर मर जायेंगे। हमेशा की आपद समाप्त हो जायेगी। कुछ ही दिनों में हम सब मिलकर इसके लिए नयी झोपड़ी बना देंगे। उन सर्प-सर्पिणी आदि के मरने से ही हम लोग खुश हो रहे हैं।'' उनकी बातें सुनकर सेठ को बहुत दु:ख हुआ लेकिन तब तक तो झोपड़ी पूरी जल चुकी थी। फिर भी सेठ जी ने उन्हें समझाया और ऐसा कभी नहीं करने की प्रेरणा दी। कुछ दिनों के बाद वह सेठ पुन: व्यापार के लिए उसी गाँव में पहुँचा तो वहाँ कई लोग इधर-उधर झुण्ड बनाकर बातें कर रहे थे, दु:खी हो रहे थे। सेठ ने भी दु:खी होते हुए पूछा-''आप लोग सब इतने दु:खी क्यों हो रहे हैं?'' उन्होंने पूर्व में साँप सहित झोपड़ी को जलाने की बात सुनाते हुए कहा-''वही झोपड़ी आज रात्रि में आग लगने से जल गयी। बेचारा झोपड़ी वाला, उसकी पत्नी तथा बच्चे भी उसी में जल गये। और आस-पास कई झोपड़ियों में भी वह आग पहुँच गई थी जिससे पड़ोस वालों को भी काफी शारीरिक-आर्थिक हानि उठानी पड़ी।'' यह है जैसा पाप किया जाता है वैसा ही फल व्यक्ति को भोगना पड़ता है। उस झोपड़ी वाले ने साँप को परिवार सहित जलाया था इसलिए वह भी परिवार सहित झोपड़ी में जलकर मरा। उस सर्प के परिवार को झोपड़ी में जलाते समय पास-पड़ोस के लोगों

ने खुशी मनाई थी इसलिए उसकी झोपड़ी के साथ पड़ोसियों की झोपड़ियों तथा पारिवारिक लोगों को भी अग्नि से होने वाली हानि एवं शारीरिक वेदनाएँ झेलनी पड़ी थीं। अत: आप अपना अच्छा भविष्य बनावें। आपका कुछ भी नहीं जायेगा न कुछ बिगड़ेगा। थोड़ा विवेक से काम करें। साँप आदि जीव-जन्तु आपको परेशान भी नहीं करें और आपको हिंसा का पाप भी नहीं लगे।

सावधानी :

(1) यदि आपके पड़ोस में निर्दय लोग रहते हैं तो साँप आदि निकलने पर शोर-गुल नहीं करें। अन्यथा आपके मना करते-करते भी वे साँप आदि को मार डालेंगे।

(2) गर्वोन्मत्त होकर मनोरंजन के लिए साँप आदि के साथ छेड़खानी नहीं करें।

(3) यदि आपके घर में साँप ज्यादा निकलते हैं तो घर में दो-चार स्थान पर मयूर पंखों के गुच्छे (5-7 पंख के) बनाकर रख दें, साँप नहीं आयेंगे।

(4) अचानक साँप दिख जाये तो दो-चार बोरियाँ उसके ऊपर डालकर धीरे-धीरे किसी पीपे आदि में लेकर उसे जंगल में छोड़ दें।

(5) साँप को देखकर कोलाहल नहीं करें, नहीं तो साँप आपके ही घर में छुप जायेगा जो बहुत ढूँढ़ने के बाद भी नहीं मिलेगा।

(6) बिच्छू आदि जो छोटे-छोटे जीव हैं उन्हें डरकर कटोरी, लोटा, गिलास आदि से नहीं ढकें अन्यथा वह थोड़ी देर में ही ऑक्सीजन नहीं मिलने से मर जायेगा।

इसी प्रकार साँप को भी ऐसे बर्तन में बन्द नहीं करें जिसमें हवा न जाती हो।

जीवों को भगाते समय :

आप इन साँप-बिच्छू आदि पकड़ते समय, छिपकली, मेंढ़क, मधुमक्खी, भ्रमर आदि पकड़ते, भगाते समय उन्हें बहुत परेशान नहीं करें, अर्थात् बहुत छेड़छाड़ नहीं करें। अधिक छेड़छाड़ करने से कभी-कभी वे कुपित होकर पलटकर काट लेते हैं। उस समय काटने का जहर निश्चित रूप से प्राण ले लेता है, क्योंकि क्रोधावेश में काटने से जहर ज्यादा चढ़ता है। अथवा वे परेशान होकर अपनी सुरक्षा के लिए भागते-भागते तत्काल भले ही नहीं मरें थोड़ी देर में ही भय एवं थकान के कारण मर सकते हैं। एक दिन एक लड़की ने कहा-

माताजी! मुझे प्रायश्चित्त दीजिए। मैंने कहा-किसका? उसने कहा-"माताजी, मुझे छिपकली से बहुत डर लगता है। एक दिन हमारे कमरे में छिपकली आ गई। मैंने उस छिपकली को पीछे से झाडू का स्पर्श कराकर भगाया। वह बहुत देर तक इधर से उधर होती रही। आखिर में उसे कमरे से बाहर करके भगाते-भगाते ऊपर से नीचे ले आई। उस समय तक तो उसको कुछ नहीं हुआ लेकिन घण्टे भर के बाद जब मैं किसी काम से नीचे गई तो वह छिपकली मरी हुई पड़ी थी। मुझे बहुत दु:ख हुआ.......।" अत: आप जीवों को भगावें, लेकिन विवेकपूर्वक भगावें ताकि हिंसा का पाप नहीं लगे, नहीं तो भगाने और मारने में कोई अन्तर नहीं रहेगा।

टी.वी. देखते समय :

आजकल टी.वी. पर भी जिनेन्द्र भगवान की अभिषेक-पूजा, समयसार आदि की क्लास, पंच कल्याणक आदि अनेक धार्मिक कार्यक्रम आते हैं। उनको देखकर मन सन्तुष्ट होता है लेकिन टी.वी. पर होने के कारण उनके प्रति मंदिर जैसा विनय नहीं रखा जाता है अर्थात् जिस प्रकार मंदिर में भगवान का अभिषेक पूजा करते समय विनय-विवेक रखा जाता है वैसा विनय-विवेक नहीं रह सकता है। कई लोग तो चाय की चुस्की लेते जाते हैं और भगवान का अभिषेक देखते जाते हैं। कई लोग भोजन करते जाते हैं और समयसार, गोम्मटसार जीवकाण्ड आदि जैसे महान् ग्रन्थों की क्लास पढ़ते जाते हैं तथा कई लोग तो चॉकलेट-बिस्किट, ब्रेड, गुटखा, पाऊच जैसी अभक्ष्य चीजें मुँह में चबाते/खाते हुए क्लास सुनते रहते हैं। कई महिलाएँ सिलाई, बुनाई, कढ़ाई आदि करती हुई, कई महिलाएँ बच्चों को दूध पिलाती-पिलाती तथा कई महिलाएँ तो प्रसूति जैसी अपवित्र अवस्था में भी क्लास पढ़ती हैं, अभिषेक देखती हैं प्रवचन सुनती हैं...। उनको कितना पाप लगता होगा इसकी तो कल्पना ही नहीं की जा सकती है। इसी के साथ कई लोग तो अपने अभिषेक देखने, स्वाध्याय करने का नियम पूरा होना मान लेते हैं। वे यह नहीं सोचते हैं कि यदि हमारे अभिषेक देखने का नियम पूरा हो गया है तो भगवान का स्पर्शित गंधोदक क्यों नहीं मिला? ऐसा करने वालों को पुण्य के स्थान पर शायद पाप का बन्ध होवे तो कोई आश्चर्य नहीं है। हाँ, यदि कोई मंदिर जाने में असमर्थ है, बिस्तर पर पड़ा है अथवा

वृद्धावस्था के कारण नहीं जा पाता है वह यदि टी.वी. पर अभिषेक देखकर, स्वाध्याय सुनकर सन्तुष्ट हो तो फिर भी अच्छा माना जा सकता है लेकिन जो दुनिया भर में घूमता रहता है और मंदिर में भगवान का अभिषेक नहीं करता है, नहीं देखता है तो विचारणीय विषय तो है ही।

कई लोग तो शयनकक्ष में सोने के बिस्तर पर बैठे-बैठे ही ऐसे धार्मिक अनुष्ठान देखते हैं और मेरे अनुमान से तो क्लास पढ़ते समय नोट्स भी बनाते होंगे। कई महिलाएँ तो मासिक धर्म के समय में भी नोट्स बनाती रहती हैं। कोई-कोई तो अटेचरूम में रखी टी.वी. पर ये कार्यक्रम देखते हैं। लेटि-न-बाथरूम और टी.वी. के बीच में मात्र एक ईंट की दीवाल का अन्तर रहता है। किसी-किसी के तो लेटि-न के गड्ढे पर ही टी.वी. रखी रहती है। कभी-कभी दूसरी और तीसरी मंजिल का कमरा भी लेटि-न के गड्ढे पर हो सकता है क्योंकि किसी-किसी घर में नीचे लेटि-न-बाथरूम होते हैं ऊपर की मंजिलों में नहीं बनाते हैं उनके यहाँ उन लेटि-न-बाथरूम पर ही कमरे बना लिये जाते हैं। ऐसे स्थान पर ऐसी स्थिति में स्वाध्याय करने वाले की, अभिषेक, मुनिराज के आहार आदि देखने वाले की क्या गति होती है? अत: आप टी.वी. पर धार्मिक कार्यक्रम देखते समय विवेक रखें, पाप से बचें।

मोबाइल रखते समय :

आज के जमाने में 90% लोगों के पास मोबाइल होता है। यहाँ मोबाइल रखने या नहीं रखने का प्रकरण नहीं है और न ही मोबाइल रखने से होने वाले हानि-लाभ का ही प्रकरण है। यहाँ तो मोबाइल रखते समय क्या विवेक रखना चाहिए जिससे मोबाइल के रखने से जो पाप होता है उस पाप में विशेष फलदान शक्ति और रहने की अवधि न बढ़े अर्थात् गाढ़ कर्मों का बन्ध नहीं हो। कई लोग मोबाइल में णमोकार जैसा महामंत्र, भक्तामर जैसा महास्तोत्र और जिनेन्द्रदेव जैसे महाप्रभु की फोटो रखते हैं। रखें, रखने में कोई दोष नहीं है लेकिन पाप का कारण तब बनता है जब वे उस मोबाइल को लेकर लेटि-न और बाथरूम (पेशाब घर) में चले जाते हैं। उसी को लेकर मलत्याग कर देते हैं। उसी मोबाइल को लेकर बिस्तरों में सो जाते हैं, क्या यह उचित है? कई लोग तो यह कह देते हैं कि मोबाइल में णमोकार मंत्र, भक्तामर आदि लिखे हुए कहाँ दिखते हैं?

यद्यपि यह सत्य है कि मोबाइल में लिखा हुआ दिखता नहीं है लेकिन उसको चालू करने पर बोलते हुए सुनाई तो देता ही है, उसमें उसके चित्र दिखाई तो देते ही हैं इसीलिए शब्द को मूर्तिक कहा है। उनको निकाला जा सकता है, भरा जा सकता है। इसका अर्थ वे उसमें स्थित तो हैं ही। कई लोगों का विचार रहता है कि मोबाइल में धार्मिक मंत्र, भजन आदि भरने से दिन में पचासों बार धर्म के वाक्य सुनाई देंगे, धार्मिक भजन-स्तोत्र आदि सुनाई देंगे जिससे हमारे भावों में भी निर्मलता आएगी। कभी भी मन नहीं लग रहा होगा तो झट से मोबाइल चालू किया और उसमें से गुरुओं का उपदेश सुन सकते हैं। अपने इष्ट भगवान/गुरुओं की फोटो देखकर उनका स्मरण कर सकते हैं अत: हमें मोबाइल में यह सब रखना ही चाहिए? मेरे विचार से भी यह सब सही है लेकिन विवेक के बिना ये सब मात्र पाप के कारण ही बनते हैं इसलिए या तो मोबाइल में ये सब नहीं रखें, यदि रखते हैं तो लेटि-न-बाथरूम आदि में जाते समय विवेक रखें।

सावधानी :

(1) भले ही कम समय के लिए टी.वी. पर कार्यक्रम देखें लेकिन विनयपूर्वक देखें, ज्यादा लाभ होगा।

(2) यदि धार्मिक कार्यक्रम देखते-देखते उपर्युक्त कार्य आ जावें तो टी.वी. बन्द कर दें।

(3) 3 दिन मेरी क्लास छूट जायेगी तो आगे का विषय समझ में नहीं आयेगा। ऐसा सोचकर मासिक धर्म के दिनों में टी.वी. में क्लास नहीं पढ़ें।

(4) पुण्य के स्थान पर पाप के कार्य नहीं करें।

(5) टी.वी. पर अभिषेक आदि देखकर नियम पूरा होना नहीं माने, क्योंकि नियम लेते समय में अभिषेक देखने का नियम लिया था।

(6) जैसी श्रद्धा, संलग्नता और तत्परता से साक्षात् धार्मिक आयोजन देखते हैं उसी विधि से टी.वी. पर कार्यक्रम देखने की कोशिश करें।

(7) मोबाइल में कोई भी धार्मिक चीज नहीं भरें। यदि भरे हैं तो इसे लेकर लेटि-न-बाथरूम नहीं जावें।

(8) धर्म के लोभ में यद्वा-तद्वा प्रवृत्ति नहीं करें।

(9) यदि डायरी, पर्स आदि में भी धार्मिक चीज है तो उसे लेकर अनुचित कार्य नहीं करें।

वस्त्र पहनते समय :

आप वस्त्र पहनने के पहले एक बार उनको खोलकर फटक अवश्य लें, क्योंकि कितने ही सुरक्षित स्थान पर रखे हुए वस्त्रों में भी मकड़ी, मधुमक्खी, चींटियाँ आदि आकर बैठ ही सकती हैं। एक दिन एक महिला को किसी कार्यक्रम में जाना था। उसने पूरा शृंगार किया और जल्दी-जल्दी में जूड़ा निकालकर बाँध लिया। उसने न उसको देखा और न ही फटकारा। उस जूड़े में एक छोटा-सा बिच्छू बैठा था। जब वह कार्यक्रम में पहुँची तब तक बिच्छू अन्दर ही अन्दर घबराने लगा। उसने घबराकर उसके सिर में डंक मारा। डंक मारते ही वह तिलमिला गई। लेकिन उसने सोचा ऐसा ही कुछ तिनका वगैरह जूड़े में रह गया होगा। वही सिर में चुभ गया है। **दूसरी बात,** वह अपना मनपसन्द कार्यक्रम छोड़कर एक क्षण भी इधर-उधर नहीं जाना चाहती थी। इसलिए उसने बिच्छू के काटने को ऐसे ही टाल दिया लेकिन जब बिच्छू ने दो-चार बार डंक मार लिया तो उससे सहन नहीं हुआ। वह लघुशंका का बहाना बनाकर बाथरूम में गई और जूड़ा खोलकर देखा तो उसमें बिच्छू निकला। थोड़े से अविवेक में स्वयं भी मर सकते हैं अथवा दूसरे के मरने का कारण बन सकते हैं अत: विवेक से काम करना चाहिए।

कैसे कपड़े पहनें/पहनावें :

कई माताएँ अपनी बेटियों को इतने पतले कपड़े पहनाती हैं जिनमें से अण्डरगारमेंट्स की बात दूर अन्दर के अंगोपांग भी झलकते हैं। छोटी उम्र में तो फिर भी ऐसे वस्त्र किसी हद तक अच्छे लगते हैं लेकिन 5-7 वर्ष की उम्र के बाद तो ऐसे वस्त्र किसी भी तरह अच्छे नहीं लगते हैं। कई लड़कियाँ वस्त्र पहनकर दर्पण में यह तो देख लेती हैं कि मैं कितनी सुन्दर लग रही हूँ लेकिन यह नहीं देखती हैं कि मेरी हेल्थ-हाइट पर ये वस्त्र कितने अशोभनीय लग रहे हैं, मेरा सीना कैसा लग रहा है। कहीं मेरे कुर्ते का गला इतना बड़ा तो नहीं है कि मैं थोड़ा-सा भी झुकूँ तो मेरा वक्ष भी सबको दृष्टिगत हो जावे। कई लड़कियाँ अपने शरीर की स्थिति पर विचार किये बिना ही टॉप-स्कर्ट पहन

लेती हैं। उनके उस मोटे-ताजे शरीर में वे टॉप-स्कर्ट ऐसे लगते हैं जैसे कोई कार्टून ही हो।

हम संसार में रहते हैं। हमें वस्त्र पहनने ही पड़ेंगे, अच्छे सुन्दर वस्त्र भी पहनने होंगे। लेकिन उन्हीं वस्त्रों को हम ढंग से पहन सकते हैं, व्यवस्थित रूप से पहनने पर वे ही वस्त्र शील की सुरक्षा करने वाले होते हैं। अपनी उम्र और शरीर की स्थिति के अनुकूल विवेक पूर्वक वस्त्र पहनकर हम अपने अमूल्य शील को बचा सकते हैं। इसके लिए आप अपनी एवं अपनी बेटी की धारणा बनावें कि अभद्र वस्त्र पहनने से ही कोई सुन्दर और व्यक्तित्व वाला नहीं होता है। सभ्यता पूर्वक रहने वाला ही व्यक्तित्ववान होता है। वही सबसे सुन्दर एवं आकर्षक होता है। उसी का शील सुरक्षित रहता है। वही अपने जीवन में सब कुछ कर सकता है जो एक सामान्य व्यक्ति नहीं कर सकता है। अत: आप विवेक पूर्वक वस्त्र पहनें ताकि इस लोक में शील की रक्षा हो, प्रतिष्ठा मिले, सुख मिले तथा पर-भव में सुगति हो।

इसी प्रकार पुरुष वर्ग भी वस्त्र पहनते समय विवेक रखकर शील एवं शरीर की सुरक्षा करें।

सावधानी :

(1) बहुत झीने पारदर्शी कपड़े नहीं पहनें। यदि साड़ी बहुत पतली है तो ब्लाउज और पेटीकोट ढंग के पहनें।

(2) बेटी की फ्राक आदि यदि बहुत झीनी है तो अन्दर टी-शर्ट पहना दें।

(3) बेटी को शुरू से ही ढंग से चुन्नी डालना सिखावें ताकि उसकी ढंग से चुन्नी डालने की आदत पड़ जावे।

(4) बेटी की हेल्थ-हाइट के अनुसार ही वस्त्र खरीदें।

(5) यदि वस्त्र तंग हो गये हैं तो इस लोभ में कि इतने महंगे वस्त्र फेंकने पड़ेंगे, उन्हीं को नहीं पहनाते रहें, क्योंकि उनसे ज्यादा मूल्यवान शील है।

(6) धार्मिक स्थलों पर तो यथासम्भव सादगी से ही जावें।

(7) अपनी उम्र एवं शरीर को देखकर वस्त्र पहनें ताकि शील सुरक्षित रहे और आप सुन्दर भी लगें।

(8) बड़ी बेटी को फैशन के दौर में जीन्स, शॉर्ट सूट, टीशर्ट आदि नहीं पहनावें,

उन्हें नये शौक के रूप में लहंगा-चुन्नी, सीधे पल्ले की साड़ी आदि पहनावें।

झाड़ू लगाते समय :

हम घर में रहते हैं तो हमें घर की सफाई करना आवश्यक है। घर की सफाई में झाड़ू से कचरा साफ करना मुख्य कार्य है। झाड़ू लगाते समय यदि आपके घर में कोटा स्टोन या मार्बल आदि का अच्छा चिकना पत्थर लगा है तो आप फूलझाड़ू रखें ताकि घर की सफाई अच्छी हो और जीवों की रक्षा भी हो। यदि आपके घर में चिकना पत्थर नहीं है, देशी पत्थर है या आपके घर का फर्श कच्चा है तो भी आप खजूर की कठोर-तीखी झाड़ू तो नहीं रखें। घास वाली झाड़ू रखें। उससे भी जीवों की काफी रक्षा हो जाती है। झाड़ू लगाते समय एकागृता रखें, मात्र कचरा/गन्दगी साफ रखने का ही उद्देश्य नहीं रखें धर्म का उद्देश्य भी रखें। सच तो यह है कि धर्म का उद्देश्य रखें, घर की सफाई भी अच्छी होगी और पापों का नाश भी होगा।

यद्यपि झाड़ू लगाना हिंसा का ही काम है लेकिन फिर भी थोड़ा विवेक रखा जाय तो झाड़ू लगाते समय भी अहिंसा का पालन किया जा सकता है। दया परिणाम रखकर जीवों की रक्षा की जा सकती है। अत: आप झाड़ू लगाते समय यदि बहुत चींटियाँ हों तो धीरे से सब चींटियों को एक तरफ करके अथवा किसी बर्तन आदि में लेकर पहले किसी छाया वाले स्थान में छोड़ दें। फिर झाड़ू लगावें ताकि वे चींटियाँ बार-बार झाड़ू की रगड़ से और कचरे में मिल-मिलकर घायल नहीं हों। सफाई करके कचरे को पानी /नाली में नहीं डालें। इससे दो लाभ होंगे। पहला कचरा नाली में फँसकर नाली को जाम (बन्द) नहीं करेगा। दूसरा कचरे के साथ जो छोटे-मोटे जीव हैं वे सूखे स्थान में डालने से कचरे में से निकलकर चले जायेंगे। पानी में डालने से वे वहीं पानी में डूबकर मर जायेंगे।

कचरा फेंकते समय:

कई महिलाएँ ऊपर खड़ी-खड़ी कचरा फेंक देती हैं। कचरा फेंकते समय यद्यपि वे नीचे देखकर ही फेंकती हैं लेकिन कभी-कभी अचानक आस-पास के घर में से कोई निकलकर आ गया। उसी समय आपके हाथ से कचरा छूटा तो वह सीधा उसके सिर पर जाकर गिरेगा। उस कचरे में यदि कोई थोड़ी-

सी भी वजनी चीज/कंकड़-लकड़ी का टुकड़ा आदि, होगी तो उसको लग भी सकती है, अनावश्यक लड़ाई हो जायेगी। **दूसरी बात** आपका कचरा जहाँ जाकर के गिरेगा वहाँ यदि चींटी-कीड़ा अथवा कोई छोटा जीव चल रहा होगा तो वह मर जायेगा, घायल हो जायेगा। उसके हाथ-पैर टूट सकते हैं और कचरे में जो जीव होंगे वे भी मर जायेंगे। अत: कचरे को ऊपर खड़े-खड़े ही नहीं फेंके।

आप इकट्ठे किये हुए कचरे को फेंकने के पहले एक-बार देख लें, क्योंकि कभी-कभी रसोई घर के कचरे में चम्मच, कटोरी, प्लेट आदि छोटे बर्तन भी मिल जाते हैं। कभी तो यदि किसी कारण से अंगूठी, चूड़ी आदि भी खोलकर रखी है तो कचरे के साथ चली जाती है। एक-बार कुछ महिलाएँ मुनिसंघ के दर्शन करने के लिए गयी थीं। वहाँ वे स्वयं भोजन बनाती थीं, स्वयं खाती थीं और साधु को आहार करवाती थीं। एक दिन उन्होंने सोचा, हम आज दो-तीन साधुओं को एक-साथ आहार करवाएंगे। वे आहार की तैयारी कर रही थीं, उन्होंने फल आदि सुधार कर कचरा इकट्ठा करके एक बर्तन में भर लिया। उसी समय दूसरी महिला ने नमकीन बनाकर मशीन को भी उसी कचरे के बर्तन में रख दिया। उसने सोचा अभी धोकर साफ कर लेते हैं लेकिन वो भूल गई। मशीन कचरे में ही पड़ी रही। थोड़ी देर के बाद किसी ने कचरा उठाया और ऊपर से ही खड़े-खड़े फेंक दिया। मशीन भी कचरे के साथ ही कचरे के ढेर में चली गई। दूसरे दिन आवश्यकता पड़ने पर मशीन ढूँढ़ी गई लेकिन मशीन कहीं नहीं मिली। मशीन ढूँढ़ते-ढूँढ़ते दो-तीन दिन निकल गये, मशीन का कहीं पता नहीं चला। जब मशीन नहीं मिली तो एक महिला के दिमाग में आया कि कहीं मशीन फल-सब्जियों के छिलकों के साथ कचरे में तो नहीं चली गई है। उसने चुपचाप कचरे के ढेर को एक लकड़ी से फैलाकर देखा तो ऐसा लगा शायद इसमें मशीन हो सकती है। उसने हाथ से ऊपर-ऊपर का कचरा हटाया तो मशीन मिल गई। योग की बात थी कि दो-तीन दिन से वहाँ का कचरा नहीं उठा था। यदि कचरा उठ जाता तो क्या मशीन मिल सकती थी? थोड़े से प्रमाद एवं अविवेक के कारण मशीन जैसी भारी और बड़ी चीज भी कचरा फेंकते समय, समझ में नहीं आई, तो छोटी-मोटी चीज तो कैसे समझ में आ सकती है। इसमें एक कारण ऊपर खड़े-खड़े कचरा फेंकना भी है। यदि वह

नीचे जाकर धीरे से कचरा डालती तो मशीन दिख ही जाती और कचरा डालने के स्थान पर कोई जीव-जन्तु होते तो वे भी दिख जाते।

इसी प्रकार रसोई घर के अलावा दूसरे कचरे में भी अंगूठी-चूड़ी आदि आ सकती है, क्योंकि बच्चे पूरे दिन घर के सामानों को इधर से उधर करते रहते हैं। कोई भी चीज कचरे के डिब्बे आदि में गिर सकती है कचरे को नहीं देखने पर वे भी कचरे के साथ फेंकी जा सकती हैं अत: आप कचरा फेंकते समय एक तो थोड़ा देख लें। दूसरे जहाँ कचरा फेंक रहे हैं उस स्थान को भी देखकर धीरे से सभ्यता पूर्वक कचरा फेंके ताकि जीवों की हिंसा भी नहीं हो और घर का सामान भी नहीं खोवे। ऐसा करने से एक पाप और हो जाता है या करना पड़ता है। वह यह कि वस्तु खो जाने पर हमारी दृष्टि हमारी विस्मृति, अविवेक पर तो नहीं जाती अपितु जो हमारे यहाँ आया था, आता है उस पर शंका होने लगती है। उसके प्रति बुरे विचार उत्पन्न होने लगते हैं चीज के नहीं मिलने पर कभी-कभी (मूल्यवान चीज हो तो) हम उससे स्पष्ट कह देते हैं, उस पर चोरी का कलंक लगा देते हैं, ऐसा नहीं भी हो तो उससे हमारा प्रेम तो अवश्य टूट ही जाता है। अत: विवेक से कार्य करें ताकि उपर्युक्त पाप नहीं हो और घर का नुकसान भी नहीं हो।

कई महिलाएँ अपने घर के कूड़ादान को तीन-चार दिन तक भी खाली नहीं करती हैं। वे सोचती हैं कि थोड़ा सा कचरा है, अभी बाल्टी/डिब्बा आधा भी नहीं भरा है, जब कल-परसों तक आधे से ज्यादा भर जायेगा तब एक साथ खाली कर देंगे। लेकिन ऐसा करने से उस डिब्बे में डाले कचरे में कितने जीव उत्पन्न हो जाएँगे, कहा नहीं जा सकता। यदि उस कचरे में फल सब्जी या खाने-पीने की गीली चीज का एक टुकड़ा रह गया तो नमी के कारण वह सड़ने लगेगा। उससे बदबू आने लगेगी। बदबू आने का अर्थ निश्चित जीवों की उत्पत्ति हो चुकी है। अथवा सूखा कचरा भी यदि एक स्थान पर पड़ा रहता है तो उसमें कचरे के ही जीव उत्पन्न होने लगते हैं। अत: घर में यदि कम सदस्य होने से कचरा कम होता है तो भी दिन में एक-बार तो कूड़ादान को अवश्य खाली कर दें और यदि ज्यादा कचरा होता है तो दिन में दो बार कचरे का पात्र खाली करें; साफ करें ताकि अहिंसा का पालन हो तथा घर में सफाई भी नजर

आवे।

सावधानी :

(1) कचरा इकट्ठा करने के बर्तन में पानी या बहुत गीला कचरा नहीं डालें, अन्यथा कचरा सड़ने लगेगा।

(2) कूड़ादान को रोज अच्छी तरह साफ करें ताकि उसमें गन्दगी के कारण जीव उत्पन्न न हों।

(3) दूसरी या तीसरी मंजिल से खड़े-खड़े कचरा नहीं फेंके ताकि कचरा किसी के ऊपर भी नहीं गिरे, लड़ाई की नौबत नहीं आवे।

(4) फूलझाड़ू को गीला नहीं करें, यदि गीला हो गया है तो सुखा कर रखें।

(5) रसोई की झाड़ू अलग रखें तथा बाहर की जहाँ चप्पल-जूते खोले जाते हैं, वहाँ की झाड़ू भी अलग रखें।

पौंछा लगाते समय :

आप पौंछा लगाने के पहले झाड़ू अवश्य लगा लें ताकि चींटी आदि जीव पौंछे में आकर नहीं मरें। यदि ज्यादा चींटियाँ हों तो उन्हें अलग करते जावें और पौंछा लगाते जावें। आप यह नहीं सोचें कि ऐसा करने से तो बहुत समय लग जाएगा। ऐसा करने में समय बरबाद नहीं होगा अपितु समय का उपयोग हो जायेगा, क्योंकि आप मंदिर में बैठकर स्वाध्याय करते हुए इतना धर्म नहीं कर पायेंगे जितना झाड़ू लगाते समय चींटियों को बचाने से हो जायेगा। वाइपर से खड़े-खड़े ही सफाई तो हो जाती है लेकिन जीवों की रक्षा नहीं हो सकती है, क्योंकि वाइपर से सफाई करने में पहले पानी फैलाना आवश्यक होता है। पानी फैलाने के बाद चींटियों की रक्षा की बात तो दूर रही दिखना ही कठिन हो जाता है। दूसरी बात वाइपर से खड़े-खड़े ही सफाई करनी पड़ती है। खड़े-खड़े में चींटियाँ आदि नहीं दिख पाती हैं। तीसरी बात वाइपर से सफाई करते समय कोने-किनारे अर्थात् दीवार के किनारों की सफाई नहीं हो पाती है अत: आप पौंछे से ही घर की सफाई करें ताकि वह अच्छी हो और जीवों की रक्षा भी हो सके।

कई लोग एक लम्बे डण्डे पर मोटा-सा कपड़ा बाँध लेते हैं। अथवा

बँधा हुआ बाजार से खरीद लाते हैं। उसी से पौंछा लगाते हैं। वह जिन्दगी में कभी सूखता नहीं होगा, क्योंकि पहली बात तो कोई उसे धूप में नहीं रखता। दूसरी बात कोई धूप में रख भी दे तो भी अन्दर से वह सूख नहीं सकता, क्योंकि वह कसकर बँधा रहता है। निरन्तर पानी की नमी रहने के कारण उसमें छोटे-छोटे खसखस के दानों जैसे हजारों जीव उत्पन्न हो जाते हैं।

कई महिलाएँ पानी गिरा हुआ देख तत्काल पौंछ लेती हैं। यह उनकी अच्छी आदत है लेकिन वे उस पौंछे अर्थात् कपड़े को ऐसे का ऐसा ही रख देती हैं। वह कपड़ा ऊपर से तो सूख जाता है लेकिन अन्दर से गीला रहता है। उसमें भी इसी प्रकार के जीव उत्पन्न हो जाते हैं। दूसरी बार उठाया और पानी में डुबो दिया तो वे जीव कैसे दिख सकते हैं ? कई महिलाएँ तो हमेशा ही ऐसा करती हैं। अगर वे उस कपड़े को थोड़ा फैला दें तो वह सूख जाये फिर उसमें जीव उत्पन्न होने की कोई आशंका ही नहीं रहेगी। यदि आपको डण्डे पर बाँधकर ही पौंछा लगाना है तो पहले आँगन को अच्छी तरह साफ कर लें, फिर लगावें। पौंछा लगाते ही पौंछे के कपड़े को खोलकर सुखा दें। आप यह नहीं सोचें कि रोज-रोज कौन खोलेगा बाँधेगा। आप थोड़ी सी मेहनत करके और विवेक रखकर हमेशा होने वाली हजारों जीवों की हिंसा से बच सकती हैं अत: अवश्य विवेक रखें।

पौंछा लगाने के पहले झाड़ू लगाकर कचरा अच्छी तरह से उठावें। यह नहीं सोचें कि बारीक कचरे से घर गन्दा नहीं दिखेगा या बारीक कचरा तो पौंछा लगाने से साफ हो ही जायेगा। हमारी आँखों से नहीं दिखने वाला बारीक कचरा आपके पौंछे में लिपटकर (गीला होने से) पूरे आँगन में फैल जायेगा। वह जब तक आँगन गीला रहेगा तब तक तो नहीं दिखेगा परन्तु आँगन सूख जाने पर वह अलग से चमकने लगेगा। अत: बारीक कचरे को भी अच्छी तरह उठाकर ही पौंछा लगावें। इससे दूसरा लाभ यह भी होगा कि उस कचरे में यदि कोई छोटे जीव होंगे तो बच जायेंगे। आपके पौंछे में लिपटकर नहीं मरेंगे।

कई लोग यह सोचकर कि अभी फिर से पौंछा लगाना ही है, पौंछा को ऐसे ही बिना फैलाए रख देते हैं। जब तक वह अच्छा गीला रहता है तब तक तो उसमें आँखों से दिखने वाले जीव उत्पन्न नहीं होते हैं लेकिन जब वह पौंछा ऊपर से सूख जाता है और अन्दर हवा नहीं पहुँचने से नहीं सूख पाता

है तब उसमें आँखों से दिखने वाले जीव भी उत्पन्न हो जाते हैं। पौंछे को इस प्रकार रखने पर यदि पौंछा लगाने की आवश्यकता नहीं पड़ी तो वह वहीं दूसरे दिन तक अथवा जब तक उसकी आवश्यकता नहीं पड़ती तब तक ऐसे ही रखा रह जाता है। दूसरी बात ऐसी अर्थात् पौंछे को बिना फैलाए रखने की आदत पड़ जाने पर कभी ऐसे ही पौंछा रखा और योग से कहीं बाहर चले गये तो वह पौंछा कई दिनों तक भी ऐसा ही रखा रहेगा, उसमें जीव उत्पन्न होते रहेंगे। अत: भले ही आधा घण्टे के बाद भी पुन: पौंछा लगाना है तो भी पौंछे को फैलाकर ही डालें ताकि वह सूख जावे, उसमें जीवों की उत्पत्ति नहीं हो।

कई लोग पौंछा फट जाने पर गीला ही सूखी नाली में अथवा सड़क पर फेंक देते हैं। उस नाली में पड़ा-पड़ा वह पौंछा न पूरा सूख पाता है और न ही पूरा गीला रहता है। उसमें रोज थोड़ा-थोड़ा पानी इधर-उधर से पड़ता रहता है जिससे उसमें नमी बनी रहती है। नमी के कारण उसमें जीव उत्पन्न होते रहते हैं। पौंछा फेंकते समय भी ध्यान रखें अर्थात् ऐसे स्थान पर फेंके जहाँ पानी का सम्पर्क नहीं हो पावे।

आप पौंछा ऐसे कपड़े से लगावें जो पानी सोखता हो लेकिन जिसमें मेल चिपकता नहीं हो अर्थात् जो जल्दी से साफ भी हो जाता हो। कई लोग पौंछे को कभी धोते नहीं हैं, उसी पौंछा लगाने के गंदे पानी में या साफ पानी में निचोड़ कर डाल देते हैं, उनका पौंछा जब सूख जाता है तो बहुत कड़क हो जाता है। गंदगी भरे उस पौंछे में जीव उत्पन्न होते रहते हैं इसलिए पौंछे भी अच्छी तरह साफ करें। उसकी गन्दगी निकाल दें। चाहे उसका रंग काला हो तो भी उसमें गन्दगी नहीं होगी तो जीव उत्पन्न नहीं होंगे। देशी फट्टी बोरा/टाट का पौंछा नहीं रखें, क्योंकि उससे पौंछा लगाते समय उसके रेशे पूरे आँगन में पानी के साथ छूटते जाते हैं। पौंछा लगाने के बाद भी आँगन गन्दा ही दिखता है।

कई लोगों के घरों में पैर धोकर प्रवेश करने की परम्परा रहती है। वे बाथरूम में पैर धोकर जाते हैं परन्तु धर्मात्मा लोग बाथरूम में पैर नहीं धोते हैं। वे सूखे स्थान पर पैर धोते हैं। पैर धोते समय कभी-कभी पत्थर में एक तरफ ढलान होता है। वहाँ पानी भर जाता है। वह पानी घण्टों भरा रहता है। उस पानी को वे स्वयं अपने ही पैरों से वहीं फैला दें तो वह पानी जल्दी सूख

जाता है। उसमें जीव आकर नहीं गिरते हैं अथवा यदि वे संन्यासी (साधु) हैं तो श्रावक मुख्य समय पर अर्थात् जब जंगल (शौच), मंदिर तथा आहार करके आने का समय है तब लगभग सभी एक साथ आते हैं, काफी स्थानों पर पैर धोने का पानी हो उस समय वायपर से फैला दें तो पानी भरा नहीं रहेगा। उस पानी को तत्काल साफ कर लेने से एक बहुत बड़ा लाभ और होगा। कोई मंदिर आया उसको यदि पानी नहीं दिख पाया, उसका पैर पानी पर पड़ गया और फिसल गया तो उसकी हड्डी टूट सकती है, पैर में मोच आ सकती है, हाथ-पैर भी टूट सकते हैं। यदि धड़ाम से गिरा, सिर में चोट लगी तो प्राण भी निकल सकते हैं। तत्काल पानी पौंछ लेने से इस हिंसा से भी बच सकते हैं अत: तत्काल पानी पौंछ लेना ही विवेक पूर्ण कृत्य है।

सावधानी :

(1) यदि आपका घर बहुत बड़ा नहीं है तो आप बैठकर हाथ से ही पौंछा लगावें।
(2) पौंछा लगाने के बाद पौंछे को धूप में सुखा दें।
(3) पौंछा ऐसे कपड़े से लगावें जो ज्यादा गन्दा नहीं होता हो।
(4) यदि कपड़े का पौंछा है तो उसे साफ रखें, क्योंकि गन्दगी में भी जीव उत्पन्न होते हैं।
(5) चींटियाँ हों तो उन्हें झाड़ू से दूर करते जावें।
(6) पौंछा लगाने के पहले आँगन झाड़ू से अच्छी तरह साफ कर लें ताकि पौंछा लगाने के बाद आँगन गंदा नहीं दिखे।

छेद हो तो बन्द कर दें :

घर-धर्मशाला आदि में अण्डर ग्राउण्ड से लाइट फिटिंग होती है। लाइट फिटिंग होने के बाद यदि पंखे, बल्ब आदि लगा लेते हैं तो उनके छेद/गड्ढे बन्द हो जाते हैं लेकिन सभी स्थानों पर न पँखे लग पाते हैं और न ही बल्ब। क्योंकि किसी भी धर्मशाला-घर आदि में इतने पंखों आदि की आवश्यकता नहीं होती है। भविष्य में कभी इस स्थान पर पंखा आदि लगाने में कोई खराबी हो गई तो दूसरे स्थान पर लगा लेंगे। इसलिए वे गः खुले रहते हैं। उनमें कई बार तो चिड़िया, कबूतर आदि घोंसले बना लेते हैं। वहाँ जगह कम होने से

उनके अण्डे लुढ़क कर जमीन पर गिर जाते हैं, मर जाते हैं। कई बार स्विच चालू करने पर भी लाइट आदि नहीं जलने के कारण वे स्विच चालू ही रहते हैं जिससे करण्ट आ जाने पर चिड़िया, कबूतर आदि वहीं पर चिपक कर मर जाते हैं। कई बार दीवाल में लगी हुई कील निकल जाने से या दीवार में कील नहीं जाने पर अनेक स्थान पर कील लगानी पड़ती है तब कील के छोटे-छोटे गः दीवाल में बने रहते हैं उन गःों में भी अधिकतर जीव उत्पन्न होते हैं। उन गःों में जाले बन जाते हैं, उनमें अनेक प्रकार के छोटे-छोटे जीव आकर बैठ जाते हैं। जब कभी दीवार में कील लगानी होती है तो सीधा गः में ही कील डाल दी जाती है, उस कील से गड्ढे में बैठे जीव मरण को प्राप्त हो जाते हैं। इसलिए आपके घर में छोटे-बड़े जो भी गः हों आप उन्हें मिट्टी, सीमेंट आदि से बन्द कर दें। पंखे आदि लगाने के गःों को प्लास्टिक, लकड़ी आदि लगाकर बन्द कर दें ताकि चिड़िया, कबूतर तथा उनके अण्डे जैसे बड़े-बड़े जीवों की हिंसा हमारे घर न हो पावे। थोड़ा-सा श्रम करने से हम पाप से बच सकते हैं।

औषधि के प्रयोग में :

मनुष्य-तिर्यञ्चों का शरीर सप्तधातु से बना होता है। उसमें वात-पित्त और कफ मुख्य होते हैं। इन तीनों में किसी एक की भी विकृति अर्थात् हीनाधिकता होती है तो अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं। कुछ रोग ऐसे होते हैं जिनको शरीर अपने-आप ठीक कर लेता है जैसे-फुंसी होना, कहीं चोट लगना, चमड़ी छिल जाना आदि। कुछ रोग काल की मर्यादा से ठीक हो जाते हैं। जैसे-सर्दी-जुकाम, आई फ्लू, चिकनगुनिया आदि। कुछ रोग ऐसे होते हैं जो भोजन में अपथ्य छोड़कर पथ्य का सेवन करने से ठीक हो जाते हैं। जैसे-अजीर्ण हो गया हो तो भोजन छोड़कर पानी, नींबू-पानी आदि का सेवन, बुखार आने पर पूरा भोजन छोड़कर लंघन (पानी को छोड़कर कुछ नहीं खाना) करना आदि। कुछ बीमारियाँ ऐसी होती हैं जो शरीर के ऊपर लेप करने, लगाने, डालने से ठीक हो जाती हैं। जैसे-कान-आँख में ड-ाप्स डालने से, ओठ फटने पर नाभि में तेल लगाने से, कुछ चर्म रोग मलहम आदि लगाने से ठीक हो जाते हैं तथा कुछ बीमारियाँ ऐसी होती हैं जिनको ठीक करने के लिए औषधियों का सेवन करना आवश्यक होता है। इन सबको ठीक करने के लिए औषधि का उपयोग/

सेवन करते समय यदि थोड़ा-सा अविवेक/प्रमाद हो जावे तो बीमारी ठीक होने के स्थान पर बढ़ जाती है, उस बीमारी के साथ अन्य और बीमारियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। कभी-कभी थोड़ी-सी लापरवाही में रोगी का जीवन नष्ट हो जाता है। वह जीवन भर के लिए उससे उत्पन्न होने वाली वेदना को भोगने के लिए मजबूर हो जाता है। अत: औषधि खाते-लगाते समय, औषधि बताते (देते) समय तथा औषधि खिलाते समय विवेक रखना अति आवश्यक है। नि:स्वार्थ औषधि देने, दिलाने को बहुत बड़ा दान, बहुत बड़े पुण्य का कार्य माना गया है। यदि वह पात्र में दी जाती है तो पूर्वोपार्जित पापों का क्षय भी होता है अत: औषधि देने, खाने-खिलाने आदि के पहले विवेकपूर्ण सावधानी रखना आवश्यक है।

अविवेक से आँखों पर प्रभाव :

एक महिला की आँखों में बहुत तकलीफ हो रही थी। उसकी बहू/बेटी ने उसकी तकलीफ को दूर करने के लिए आँख में डालने की दवाई खरीदी। वे हमेशा समय पर माँ की आँखों में दवाई डालती थीं। एक दिन आँख की दवाई तथा वैसी ही अमृतधारा की शीशी रखी थी। उसने जल्दी-जल्दी में शीशी को देखा ही नहीं और अमृतधारा की शीशी को ही आँख की दवाई की शीशी समझ कर माँ की दोनों आँखों में डाल दिया। एक आँख में डालते ही माँ जब तक दूसरी आँख में डालने के लिए मना करती तब तक तो (जल्दी होने से) उसने दूसरी आँख में भी डाल दी। एक क्षण में माँ की दोनों आँखों की ज्योति चली गई। वह जीवन भर के लिए अंधी हो गई। थोड़ी सी लापरवाही में माँ का जीवन अंधकारमय बन गया।

इसी प्रकार एक मुनि महाराज की आँखों में जलन होने के कारण गुलाब जल डालना था वहाँ भी गुलाब जल एवं अमृतधारा की शीशी पास-पास रखी थी। भक्त ने गुलाबजल के स्थान पर महाराज की एक आँख में जैसे ही अमृतधारा डाली, महाराज ने उसका हाथ पकड़ लिया जिससे उनकी एक आँख बच गई। अन्यथा क्या होता? उनकी रत्नत्रय की आराधना का क्या होता? बिना आँखों के वे कैसे समितियों का पालन करते....।

इसी प्रकार एक वृद्धा हमेशा अपनी आँखों में गुलाब जल डलवाती थी। एक दिन उसने अपनी बेटी से गुलाबजल डालने को कहा। उसी दिन योग

से नई शीशी लाये थे। उसने पैक शीशी को खोला और बिना देखे ही वृद्धा की आँखों में डाल दिया। गुलाबजल डालने के 5-7 मिनट में ही वृद्धा की आँखें लाल होने लगीं, दर्द बढ़ने लगा तब कारण की खोज की गई तो शीशी में एक मकड़ी थी। उसका जहर ही गुलाबजल में मिल गया था। उसका प्रभाव आँखों पर पड़ा। यह तो भाग्य ही था कि उसकी आँखों की ज्योति समाप्त नहीं हुई लेकिन आठ-दस दिन तक वेदना तो भोगनी ही पड़ी।

इसी प्रकार एक मुनिराज का स्वास्थ्य खराब हो गया था। वैद्य ने उनको आठ दिन तक दवा की एक-एक पुड़िया लेने के लिए कहा। एक व्यक्ति को पुड़िया ले जाने की जिम्मेदारी दी गई। उस व्यक्ति ने सोचा आठ दिन तक रोज-रोज कौन दवाई देता रहेगा। अत: उसने एक ही दिन में 5-7 पुड़िया दे दी। उसका फल यह हुआ कि दो-चार घण्टे में ही मुनिराज के शरीर में छाले होना शुरू हो गये। पाँच-सात दिन में ही महाराज की समाधि हो गई। थोड़े से अविवेक के कारण मुनिराज की समाधि हो गयी। इस प्रमाद का उसको कितना पाप लगा होगा, कल्पना ही नहीं की जा सकती है।

दवा सम्बन्धी परामर्श :

किसी भी बीमारी की दवाई बताने के पहले उसके शरीर की प्रकृति, मौसम, मात्रा, बीमारी का निदान आदि जानना आवश्यक होता है। भारत में तो लगभग हर घर में वैद्य अर्थात् दवाइयाँ जानने वाले लोग होते हैं। अथवा यह कह दें तो भी अतिशयोक्ति नहीं होगी कि भारत के बहु प्रतिशत लोग कुछ-न-कुछ दवाई अवश्य जानते हैं और यदि कोई अपनी बीमारी बतावे तो वे कोई-न-कोई औषधि अवश्य बता देते हैं। आप भी कई रोगों की दवाइयाँ जानते हैं, उन दवाइयों का प्रयोग बतावें लेकिन बताने के पहले बीमार व्यक्ति की उम्र, खाने-पीने की व्यवस्था अर्थात् यदि आपने गरम औषधि बताई है तो दवाई लेने वाले के घर में घी-दूध, रस आदि की व्यवस्था नहीं है तो वह उसके ऊपर विपरीत प्रभाव करेगी। यदि साधु/त्यागी-वृती है, एक बार ही भोजन पानी लेते हैं, अन्तराय का कोई भरोसा नहीं है। अत: परिस्थितियों को देखकर दवाई बतावें, देवें। कभी यह नहीं हो जावे कि हम तो दूसरे का उपकार अर्थात् दूसरे की वेदना को दूर करने गये और उसकी वेदना हमारे कारण वृद्धि को प्राप्त

हो गई।

एक बार हमारे बड़े माताजी को बवासीर की बहुत तकलीफ हो रही थी। श्रावकों ने एक वैद्य को बुलाया। वैद्य ने कहा-''चने के बराबर रसकपूर को घी में डालकर लगा देना, बवासीर ठीक हो जायेंगे।'' लोगों ने पूछा-''क्या मलहम जैसा बनाकर लगाना है?'' उन्होंने कहा - ''हाँ, ऐसा ही करना है।'' हम लोगों ने थोड़े से घी में चने के बराबर रसकपूर डालकर माताजी से निवेदन किया तो माताजी ने सोचा-नयी दवाई है अत: एक बार थोड़ा सा लगाकर देखती हूँ, कैसा लगता है इसलिए उन्होंने लगभग एक-दो तिल के बराबर मलहम लेकर बवासीर में लगा ली। मलहम लगाते ही बवासीर में एवं उसके आस-पास बहुत सारे घाव हो गये। उससे इतनी वेदना बढ़ गई जिसको जिह्वा से कहा नहीं जा सकता है। वास्तव में, लगभग 50 ग्राम घी में चने के बराबर रसकपूर डालना था। वैद्य के बताने में थोड़ा-सा अविवेक होने के कारण साधु को कितनी वेदना हो गई।

इसी प्रकार कई डॉक्टर भी रोग का सही निदान नहीं करके दवाई दे देते हैं जिससे कभी-कभी तो 'साइड इफेक्ट' होने से व्यक्ति की जिन्दगी ही बरबाद हो जाती है और कभी तो रोगी मृत्यु की गोद में सो जाता है। यदि वह घर का मुखिया ही है तो बेचारे पत्नी-बच्चों की हालत बिगड़ जाती है। कभी-कभी लोभ के वश डॉक्टर बिना प्रयोजन भी ऑपरेशन कर देता है। कभी ऑपरेशन करते-करते कैंची, सुई आदि जैसे शरीर को नष्ट करने वाली चीजें अन्दर रह जाती हैं। कभी अन्य बीमारी के स्थान पर अन्य दवाई दे देता है। मैं सोचती हूँ डॉक्टर भले ही 50 मरीज के स्थान पर 25 मरीज देखे लेकिन सावधानी से, जिम्मेदारी से मरीज की वेदना को ठीक करने के उद्देश्य से देखे तो भले ही वह पैसे से इलाज करे तो भी उसको अतिशय मात्रा में पुण्य का बन्ध होता है, क्योंकि उसका उद्देश्य पैसा नहीं, मरीज की तकलीफ को दूर करना है।

एक दिन एक महिला कपड़े धो रही थी। कपड़ों में भूल से एक छोटी सी सुई रह गई थी। कपड़े धोते-धोते वह सुई उसके हाथ में घुस गई। छोटा -सा टुकड़ा उसके हाथ में रह गया, शेष सुई कपड़ों में रह गई। उसको लगा कि शायद मेरे हाथ में सुई का टुकड़ा रह गया है। उसने तत्काल डॉक्टर के

पास जाकर पूरी बात बताई तो डॉक्टर ने यह कहते हुए कि आपके हाथ में कुछ नहीं है ऐसे ही चुभ गया है ड-ेसिंग कर दी। दो-तीन दिन तक लगातार ड-ेसिंग करवाने के बाद भी जब हाथ ठीक नहीं हुआ; वेदना ठीक होने के स्थान पर बढ़ती गई तो उसने दूसरे डॉक्टर को अपना हाथ दिखाया तो उसने कहा- आपके हाथ में तो सुई अभी भी है, पुण्योदय से उसको विशेष इन्फेक्शन नहीं हुआ अन्यथा क्या होता, आप स्वयं सोचें। ऐसे लापरवाह डॉक्टरों को तो पुण्य मिलने की बात तो बहुत दूर है, पूर्वोपार्जित पुण्य भी पाप में परिवर्तित हो जायेगा।

सावधानी :

(1) डॉक्टर बनने के पहले परोपकार/दूसरे की वेदना दूर करने का लक्ष्य बनावें, धन का नहीं।

(2) यदि आपके पास समय नहीं है तो रोगी को नहीं देखें लेकिन गलत औषधि अथवा चलाऊ/उल्टा सीधा इलाज नहीं करें।

(3) औषधि खाने खिलाने/डालने के पहले औषधि का उपयोग किस प्रकार करना है, यह बात अच्छी तरह समझ लें।

(4) औषधि खिलाने-डालने के पहले औषधि को अच्छी तरह देख लें ताकि उसमें कोई जीव-जन्तु हो या कोई अन्य विकृति हो तो दिख जावे।

(5) 50 रोगियों के स्थान पर 40 रोगियों को देखें। लेकिन उनकी वेदना को अपनी वेदना समझ कर अपनत्व से देखें।

(6) औषधि तैयार करने के पहले औषधि बनाने की विधि भी अच्छी तरह समझ लें।

छत एवं फुटपाथ पर :

आज के जमाने में एक छोटा-सा मकान बनाने में भी लाखों रुपये खर्च हो जाते हैं। मकान बनाने में हिंसा निश्चित रूप से होती है लेकिन मकान बनाये बिना हमारा काम नहीं होता है। समझदार लोग बना-बनाया मकान खरीद लेते हैं। उनको मकान बनाने का पाप नहीं लगता है लेकिन अधिकांश लोग तो मकान बनाते ही हैं। वे मकान बनाने में लाखों रुपये खर्च करते हैं परन्तु थोड़े से अविवेक के कारण या अनावश्यक खर्चा समझकर वे छत एवं फुटपाथ अर्थात् मकान में प्रवेश करने का मार्ग जहाँ स्कूटर आदि खड़े किये जाते हैं

उस स्थान पर प्लास्टर नहीं करवाते, वहाँ पत्थर नहीं लगवाते हैं। वह स्थान कच्चा छोड़ देते हैं या उस पर जैसा लेंटर हुआ है वैसा ही छोड़ देते हैं। लेंटर खुरदरा होने से पानी सोखता है। बारिश के समय में यदि आपने कभी ध्यान दिया हो तो आपके मकान की छत पूरी हरी हो जाती है। हरी होते-होते वहाँ काई के मोटे-मोटे पटल जम जाते हैं, जिससे वह काली हो जाती है। उस काली छत पर जब भी पानी बरसता है या ओस गिरती है तो पानी के संयोग से अनन्त निगोदिया जीव उत्पन्न हो जाते हैं। उन सबकी हिंसा जब भी हम छत पर जाते हैं तो हमारे पैरों से होती है। बच्चे यदि छत पर खेलते हैं तो उनसे होती है। सामान्य घरों में तो हमेशा ही छत पर कपड़े सुखाने जाना ही पड़ता है। बारिस एवं गर्मी के मौसम में सोने के लिए छत पर जाना होता है। इन सबके लिए नहीं भी जावे तो भी दाल, चावल, जीरा-धना आदि घरेलू चीजों को धूप दिखाने के लिए पापड़, खीचले आदि तो धूप में ही सुखाने पड़ते हैं इसलिए छत पर जाना ही पड़ता है। उस छत की काई में स्थित सभी जीव हमारे पैरों के घर्षण से मरते हैं। इस हिंसा से बचने के लिए मात्र एक ही उपाय है कि हम मकान बनाते समय ही छत पर भी सीमेंट का अच्छा प्लास्टर करावें अथवा ऐसे पत्थर आदि लगवा दें जो पानी को न सोखते हों। इसमें मकान बनाने की अपेक्षा तो एक प्रतिशत खर्चा भी नहीं होगा। यदि आपका मकान बन चुका है, आपके मकान की छत ऐसी है तो थोड़ा सुधरवा लें। इसमें आपको अहिंसा धर्म की परिपालना के साथ-साथ छत के पानी सोखने से वह पानी आपके मकान की दीवारों में घुस कर नींव तक पहुँच सकता है। दीवारों को कमजोर बनाकर पचास वर्ष चलने वाले मकान को 30-35 वर्ष में ही खराब कर सकता है। ऐसे मकान कई बार चूने (पानी टपकना) भी लगते हैं। कभी-कभी दीवार में नमी (सीलन) रहने से दीवार के पास रहे हुए पदार्थ, बिस्तर, पेटी आदि भी खराब हो जाते हैं। खाने की वस्तुओं में जल्दी जीव उत्पन्न हो जाते हैं। प्लास्टर करवा देने से छत पानी नहीं सोखेगी जिससे इन सभी विकृतियों से भी आप बच जायेंगे। आप यह नहीं सोचें कि छत कौन देख रहा है, छत से कोई मकान भद्दा नहीं लगता है इसलिए क्यों छत पर प्लास्टर आदि करवा कर पैसा खर्च किया जावे। अहिंसा की दृष्टि से छत अच्छी बनवाएँगे तो आपको मकान बनवाने का जो

पाप लगा है वह भी कम हो जायेगा। अत: आप छत को व्यवस्थित ही बनावें और आपके ऐसी छत है तो अवश्य सुधरवा लें। आपको धर्म का फल मिलेगा।

इसी प्रकार हमारे घर के बाहर जहाँ घर में प्रवेश होता है दोनों तरफ हमारा छोटा-सा बगीचा होता है और बीच में से हमारे घर में प्रवेश करने का रास्ता होता है वहाँ भी आप उपर्युक्त विधि को अपनावें अन्यथा वहाँ तो चौबीसों घण्टे हिंसा होती रहेगी। मेरे विचार से तो भले ही आप किराये के मकान में रहते हैं या सरकारी क्वार्टर में रहते हैं तो भी छत और फुटपाथ (रास्ते) को चिकना करवा दें, आपको भारी पुण्य का बन्ध होगा। आप उस क्वार्टर/मकान को छोड़कर चले भी जायेंगे तो भी उसमें आने वाले दूसरे व्यक्ति परिवार से भी तो ये हिंसा होगी ही/उसको ठीक करवा देने से वे भी हिंसा से बच जायेंगे। जीवों की हिंसा नहीं होगी। उसका फल भी जब तक आप जीवेंगे आपको अवश्य मिलेगा। अत: यह कार्य करवाने में प्रमाद नहीं करें। इसको भी एक बहुत बड़ा दान समझें।

कभी-कभी लेंटर होने में अथवा कारीगर की लापरवाही से छत में ढलान सही नहीं बनता है अथवा छत में कहीं पर भी ढलान रह जाता है जिससे बारिस के दिनों में पानी भर जाता है इससे भी इतनी ही हानि होती है जितनी हानि छत के चिकने नहीं होने से होती है। इसमें पानी भरा रहने से कई त्रस जीव उत्पन्न होते रहते हैं। वे सब पानी सूखने से मरण को प्राप्त हो जाते हैं। चिकनी छत बनाने के साथ इसका भी ध्यान रखें यदि कहीं गड्ढा रह गया हो तो ठीक करवा दें।

ऐसा केवल घर में ही होता है, ऐसी कोई बात नहीं है। कहीं-कहीं तो मंदिरों की भी ऐसी स्थिति होती है। एक दिन हम लोग एक चैत्यालय के दर्शन करने गये। दसलक्षण का पहला ही दिन था। वर्षा का मौसम था। बारिस हो रही थी इसलिए उस चैत्यालय के प्रवेश द्वार के बाद जहाँ से खुला स्थान (जहाँ छत नहीं होती है) था वहाँ से इतनी काई थी कि पैर का अंगूठा रखकर भी चले तो भी चलना असंभव था। हम लोग बहुत दूर से ही दर्शन करके आ गये लेकिन वहाँ दर्शन-पूजन करने वालों को कितने पुण्य का बन्ध होता होगा, भगवान की भक्ति का कितना फल मिलता होगा, वे स्वयं जानें। जिन दसलक्षण

पर्वों में भी व्यक्ति स्थावर जीवों की हिंसा का भागी बन जाता है और उसको इस बात का पता ही नहीं रहता है कि वह कुछ पाप भी कर रहा है अथवा अविवेक के कारण उससे कुछ पाप भी हो रहा है और ऐसा पाप एक दिन ही नहीं, सर्दी में ओस के कारण और बारिस में बरसात के कारण काई आती रहती है। उसी रास्ते से जाते हुए पाप लगता ही रहता है। अत: मंदिर का रास्ता सुधार कर डबल पुण्य का लाभ लिया जा सकता है। अथवा मंदिर के व्यवस्थापक यह काम कर समाज को एवं स्वयं को पाप से बचा सकते हैं।

इसी प्रकार मंदिर की छत पर भी ऐसा ही होता है। मेरे अनुमान से अधिकांश मंदिरों की छतें ऐसी ही होती हैं, क्योंकि पुराने जमाने में आर.सी.सी का लेण्टर तो नहीं चलता था लेकिन चूने के मकान/मंदिर बनते थे। चूना भी पानी सोखता है इसलिए पुराने मंदिरों की छतों पर काई ही रहती है। यद्यपि मंदिर की छत पर लोगों का आना-जाना कम होता है लेकिन फिर भी यदा-कदा मंदिर की छत पर भी जाने का काम पड़ ही जाता है। साधु-संतों के आने पर अथवा गंधोदक का विसर्जन कई मंदिरों की छतों पर किया जाता है तो हमेशा ही छत पर जाना पड़ता है तो बारिस आदि के दिनों में हमेशा हिंसा होती रहती है अत: मंदिर की छत को भी सुधरवा लें और नया मंदिर बन रहा हो तो उसे पंचायती काम नहीं समझे। जिम्मेदारी से पहले ही अच्छी छत बनवावें ताकि बाद में सुधरवाने का विचार नहीं करना पड़े।

सरिये व्यवस्थित करें :

वर्तमान में अधिकतर मकान आर.सी.सी. के ही बनते हैं। इन मकानों की नींव भरने के रूप में लोहे के सरियों के पिलर बनाकर लगाए जाते हैं। वे लोहे के पिलर ऊपर छत तक पहुँचते हैं। लोग लापरवाही से उन सरियों को ऐसे ही छोड़ देते हैं। उन सरियों में कई बार रात्रि में अंधेरे के कारण उलझ कर गिर जाते हैं। यदि छोटे-छोटे सरिये हों तो उसमें उलझकर व्यक्ति/बच्चे इतनी जोर से गिरते हैं कि दाँत ही टूट जावे और पैरों में उन सरियों की बहुत जोर से लगती है। यदि लम्बे सरिये हों तो उनमें उलझ जाते हैं। यदि आड़े अर्थात् दीवार में से सरिए निकले हैं तो थोड़ा ध्यान नहीं रहे तो सीधे वे सिर में या आँखों में घुसते हैं। यदि आँख में घुस जावे तो जिन्दगी भर के लिए

अंधे-काणे हो जाते हैं। किसी मर्म स्थान पर लग जावे तो मृत्यु भी हो सकती है। लोहे में जंग लगता ही है और छत पर पानी आदि का संयोग होने से विशेष जंग लगा रहता है। सरिये लगने पर टिटनेस होने की सम्भावना रहती है। अत: सरियों में ईंट आदि भरकर पैक कर दें। खम्भे बना दें ताकि ऐसी घटना नहीं घटे। यदि खम्भा नहीं बनवा पावें तो उनमें पीपा आदि पहना दें ताकि कोई टकरा भी जावे तो गिरे नहीं, उसको लगे नहीं।

इसी प्रकार कई पुराने मंदिरों/पुराने घरों के दरवाजे छोटे होते हैं। हमेशा अभ्यस्त लोग तो झुककर निकल जाते हैं लेकिन कभी-कभी दरवाजे में घुसने के पहले ही झुक जाते हैं या सही अनुमान नहीं लगा पाते हैं तो दरवाजा छोटा होने के कारण सिर के ठीक बीच में या सिर में कहीं भी इतनी जोर से लगती है कि कभी-कभी तो चक्कर खाकर गिर पड़ता है या बैठ जाना पड़ता है। उसके बाद भी बहुत देर/दिनों तक दर्द होता रहता है तथा यदि कोई नया व्यक्ति है तो उसको तो लगती ही है। उसके साथ भी उपर्युक्त सभी घटनाएँ हो सकती हैं। वहाँ आप थर्माकोल चिपका दें ताकि यदि कोई टकरा भी जावे तो उसको चोट नहीं लगे।

इसी प्रकार कहीं-कहीं सीढ़ियाँ भी ऐसी बनी रहती हैं कि जिन पर चढ़ते समय लगने की सम्भावना रहती है। सीढ़ियों में तो तीखापन भी रहता है उससे टकराने पर तो खून भी निकलता है और यदि वहाँ गिर जावे तो दूसरी सीढ़ियों की भी लगती है। उन पर अर्थात् जहाँ लगने की, टकराने की सम्भावना हों, वहाँ यथायोग्य थर्माकोल आदि चिपका कर कितना बड़ा परोपकार किया जा सकता है। कितने लोगों को गिरने से, मरने से, चोट लगने से बचाकर पुण्य कमाया जा सकता है।

हमारे घर/धर्मशाला आदि में खिड़कियों के किवाड़ बाहर खुलते हैं तो किसी के अन्दर की तरफ। जहाँ खिड़की के किवाड़ खुलते हैं वहाँ बैठने का काम पड़ता है तब उठने पर किवाड़ के कोने की लगती रहती है तो उन किवाड़ों के भी जहाँ से लगती है वहाँ थर्माकोल चिपकाकर बचाव किया जा सकता है।

दाल-चावल आदि रखने में :

जहाँ साल भर के लिए दाल-चावल, गेहूँ, जीरा, धना, मिर्च आदि इकट्ठे करके रख लिये जाते हैं, वह भण्डार घर कहलाता है। कई स्थानों पर गेहूँ आदि को धोकर रखा जाता है। गेहूँ आदि को सुखाते समय यदि थोड़ी सावधानी नहीं रखी जाती है तो उनमें हजारों इल्लियाँ/लटें उत्पन्न हो जाती हैं। यदि गेहूँ को अच्छा सुखाये बिना ही या सुखाकर गरम-गरम ही टंकी/कोठी आदि में भर दिये जाते हैं तो वे गेहूँ बहुत जल्दी सड़ जाते हैं। उनमें घुन लग जाते हैं। पूरे गेहूँ खराब हो जाते हैं अत: यदि गेहूँ को धोकर रखते हैं तो दो-तीन दिन तक अच्छी तरह धूप में सुखाकर ही कोठी/टंकी में भरें ताकि गेहूँ सड़े नहीं।

कभी-कभी गेहूँ को छत पर सुखा देने के बाद वे छत पर ही रखे रहते हैं। जो समझदार होते हैं, वे शाम के समय गेहूँ को इकट्ठा करके ढक देते हैं तो उनके गेहूँ सालों तक भी खराब नहीं होते हैं और जो शाम को इकट्ठा करके नहीं रखते हैं उनके गेहूँ में शीत-उष्ण योनि अर्थात् रात्रि में ठण्डक और दिन में धूप की गर्मी दोनों मिलकर शीतोष्ण योनि उत्पन्न होती है। इस कारण से विशेष जीव उत्पन्न होते हैं। गेहूँ ठोस पदार्थ होने के कारण उनमें तत्काल भले ही जीव उत्पन्न न हों तो भी थोड़े ही दिनों में उनमें जीव उत्पन्न हो जाते हैं। ऐसे गेहूँ में 4-6 महीनों में ही जीव उत्पन्न हो सकते हैं। काचरी, आँवला, इमली, अमचूर आदि में तो 2-4 दिनों में ही लम्बी-लम्बी लटें, जाले, फफूँद आदि यथायोग्य जीवों की उत्पत्ति दिख जाती है अत: आप छत पर कोई भी चीज सुखाएँ वह चीज चाहे सूखी हो या गीली, शाम के समय इकट्ठी करके ढक दें। यदि इकट्ठा करने की गुंजाइस नहीं हो तो फैली हुई चीज ही कपड़े से ढक दें। आपकी किसी भी चीज में जीव उत्पन्न नहीं होंगे।

एक दिन एक छत पर थाली में दाल सूख रही थी। उस थाली में दाल कम दिख रही थी, जीव ज्यादा दिख रहे थे। उसका कारण क्या है? उसका कारण दाल समय पर धूप में नहीं सुखाई होगी अथवा दाल के डिब्बे को पैक नहीं रखा होगा अर्थात् डिब्बे को पैक नहीं रखने से उनमें नमी की हवा लग गई होगी। हवा लगने से उसमें जीव उत्पन्न हो गये होंगे। धूप में सुखाकर अच्छी

ठण्डी होने के पहले ही डिब्बे में भर दिया होगा, आदि-आदि...।

एक व्यक्ति ने बताया-माताजी, वैसे कभी गोंद में जीव नहीं पड़ते हैं लेकिन एक बार हमारे यहाँ आधा डिब्बा गोंद रखा था। बारिस का मौसम था उसमें कुछ पानी के छींटे लगे हों या नमी की हवा। उस गोंद से पूरा डिब्बा भर गया अर्थात् उसमें इतनी फफूँद आ गई कि वह डिब्बा पूरा भर गया। यदि हम उसे पहले दिन ही डिब्बे में से निकालकर फैला देते, धूप में सुखा देते तो इतने सारे जीवों की हिंसा नहीं करनी पड़ती। अथवा पहले से ही डिब्बे को अच्छा पैक रखते तो भी गोंद में फफूँद नहीं आती। आप भी कभी यह सोचकर कि इन चीजों में तो जीव पड़ते ही नहीं, लापरवाही नहीं करें ताकि कोई चीज सड़े नहीं।

एक लड़की ने बताया-माताजी, अब की बार मेरी मम्मी की तबीयत खराब हो गई थी इसलिए वह दाल-चावल आदि को सम्भाल नहीं पाई अर्थात् धूप में नहीं डाल पाई थी। उसने एक दो बार पापा से कहा कि दाल-चावल आदि को धूप में डाल दें लेकिन पापा ने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया। आज मम्मी की तबीयत थोड़ी ठीक हुई तो उसने दाल-चावल आदि देखे तो चावल में इतनी लटें हो गईं कि उन्हें देखकर मम्मी को इतना पश्चाताप हुआ कि उसने एक साल तक के लिए चावल खाने का ही त्याग कर दिया। आप थोड़ी सावधानी रखें। सावधान रहें। यदि ऐसा मौका आ जाये तो आप फोन आदि से अपने रिश्तेदार, अड़ोस-पड़ोस आदि को कहकर दाल-चावल आदि को व्यवस्थित करवा लें ताकि उनमें जीव उत्पन्न न हों।

कई लोगों की धारणा रहती है कि जितने पुराने चावल होते हैं उतने ही अच्छे रहते हैं। चावल जितने-जितने पुराने होते जाते हैं उतना उनका स्वाद बढ़ता जाता है, वे बनाने के बाद अच्छे सुन्दर लगते हैं और यह असत्य भी नहीं है लेकिन रखते समय यदि विवेक नहीं रखा तो उनमें हजारों लटें उत्पन्न हो जाती हैं। इसी प्रकार गेहूँ-दालें आदि जितने पुराने होते हैं, उनकी पूडी आदि बनाते समय तेल, घी कम लगता है। आप इन पदार्थों को बहुत सालों तक रखें लेकिन सावधानी से रखें, उनको धूप दिखाते रहें, दवाई आदि बदलते रहें ताकि उनमें जीव उत्पन्न न हों। सुखाते समय मौसम का ध्यान रखें। अच्छे गेहूँ-

चावल आदि के पास घुनी हुई किसी भी चीज को नहीं सुखावें, अन्यथा घुने अनाज के जीवों में से एक जीव भी अच्छे अनाज में मिल गया तो पूरा अनाज घुन जायेगा। उसमें जीव राशि उत्पन्न हो जायेगी।

सावधानी :

(1) यदि गेहूँ धोकर रखे हैं तो 4-6 महीने में उन्हें धूप अवश्य दिखावें।

(2) अमचूर, इमली, काचरिया, भिण्डी आदि सूखे हुए रखे हैं तो उन्हें भी 2-3 महीने में धूप दिखा दें।

(3) बिना धुले गेहूँ आदि हैं तो 6-7 महीने में नीम के पत्ते, राख, गोली आदि जो भी उनकी सुरक्षा के लिए रखे हैं उन्हें बदलते रहें।

(4) इन सबकी पैकिंग अच्छी रखें, हवा न लगने दें। हवा लगने पर दवाई आदि रखने पर भी जीव उत्पन्न हो जायेंगे।

(5) जिस पात्र (कोठी, टंकी आदि) में रखा अनाज घुन गया (यदि जीव हो गये) है तो उसको पहले अच्छी तरह साफ करें। अगर धो सकते हैं तो धोकर दो-तीन दिन तक धूप दिखावें ताकि उसमें भरा जाने वाला अनाज नहीं घुने। लेकिन यदि सफेद रंग के छोटे-छोटे पतले-पतले फूंक देने मात्र से उड़ जाते हैं ऐसे जीव हुए हैं तो उस टंकी/कोठी को बदल दें, क्योंकि ऐसे जीवों के होने पर वह बर्तन कभी साफ होता ही नहीं है, उसको कितना ही साफ करके अनाज भरो तो भी जीव उत्पन्न हो ही जाते हैं।

(6) यदि औषधि या स्वाद के लिए चावल आदि रखने हैं तो व्यवस्थित रखें। कई चतुर महिलाओं के घर में 20-25 वर्ष पुराने चावल, जीरा, धनिया आदि सुरक्षित रखे मिल जाते हैं अत: आप भी चतुराई से काम करें।

(7) कोई भी चीज सुखाते समय शाम को अवश्य उठा लें या ढक दें।

(8) गेहूँ सुखाने छत पर डालें तो कपड़े से ऊपर से ढक दें जिससे उनमें पक्षियों की बीट न पड़े, नहीं पक्षी उसे जूंठा कर सकें।

सेल्फ पर सामान रखते समय :

कभी-कभी दाल-चावल आदि के पीपे भर कर सेल्फ पर रखने होते हैं तो महिलाएँ/लड़कियाँ सोचती हैं कौन स्टूल-कुर्सी लायेगा। उस पर चढ़कर पीपा रखेगा। अभी कोई भैया, पापा/बेटा वगैरह आदमी आयेंगे। वे उठाकर

सेल्फ पर रख देंगे अथवा स्वयं पीपा उठाकर सेल्फ पर खिसका देती हैं। वे यह नहीं सोचती हैं कि कहीं शेल्फ पर छिपकली, मेंढ़क अथवा चिड़िया बैठी होंगी तो उस पीपे से कटकर-कुचलकर मर जायेगी। उसका कितना पाप लगेगा। यदि थोड़ी सी मेहनत करके कुर्सी/स्टूल पर चढ़कर एक सैकेंड में शेल्फ पर देख लेते फिर पीपा आदि रखते तो उनकी हिंसा से बच जाते। कई लोग आलसी भी नहीं होते हैं वहीं कुर्सी भी रखी रहती है फिर भी यौवन के मद में अपनी ताकत दिखाते हैं । वे पीपे आदि को सेल्फ पर रखते ही नहीं हैं अपितु एक तरह से फेंक देते हैं। यह ताकत का दुरुपयोग है। ऐसा करने से बल के मद का भी पाप लगता है और जीवहिंसा का भी। अत: आप देखकर सेल्फ पर रखें, हिंसा से बचें।

बेल्ट आदि खरीदते समय :

आज के युग में दुकानदार का एक ही उद्देश्य रहता है कि हमारा माल बिक जावे चाहे उसके लिए हमें झूठ बोलना पड़े। मायाचारी करनी पड़े। आप किसी दुकान पर बेल्ट, घड़ी का पट्टा आदि खरीदने जायेंगे तो आप पूछेंगे कि भैया! यह बेल्ट चमड़े का तो नहीं है? वह कहेगा-हाँ, चमड़े का नहीं है। रेगजीन का है और आप कहेंगे यह बेल्ट चमड़े का है न तो वह कहेगा हाँ चमड़े का ही है। आप कोई भी चीज खरीदने के पहले उस पर लगा 'लेबिल' अवश्य देख लें। लेबिल देखने से आपको समझ में आ जायेगा कि यह चमड़े का है या रेगजीन का? आप यह नहीं सोचें कि चमड़ा इतना सस्ता कैसे हो सकता है? ऐसी कोई बात नहीं है। चमड़े की भी क्वालिटी होती है। हल्की क्वालिटी वाले चमड़े का सामान या चोरी से लाया गया माल बहुत सस्ता भी मिल सकता है। एक दिन एक लड़का एक बड़ी सी घड़ी बाँधे था। मैंने पूछा-क्या तुम्हारी घड़ी में चमड़े का बेल्ट है? उसने कहा, नहीं माताजी, कुल मिलाकर चालीस रुपये की तो घड़ी है, इसमें चमड़े का बेल्ट कैसे हो सकता है? मैंने कहा-मुझे तो यह चमड़े का लग रहा है जरा खोलकर दिखाओ। उसने सहज रूप से खोलकर दिखा दिया क्योंकि उसको विश्वास था कि घड़ी का बेल्ट चमड़े का हो ही नहीं सकता है। जब बेल्ट का लेबिल देखा तो उसमें स्पष्ट लेदर लिखा था। इसी प्रकार एक लड़की जरकिन पहने थी। मुझे लगा शायद इसके काज-

बटन की पट्टी चमड़े की है मैंने कहा-क्या तुम्हारे काज-बटन की पट्टी चमड़े की है। उसने कहा-नहीं माताजी, हो ही नहीं सकती। मुझे तो बहुत सालों से चमड़े की वस्तु पहनने का त्याग है। मैंने कहा-भले ही तुम्हें चमड़े का त्याग हो लेकिन तुम्हारे जरकिन में तो चमड़ा लगा ही है। उसने कहा-माताजी, मैं दुकानदार से अच्छी तरह पूछकर लाई हूँ इसलिए इसमें चमड़ा नहीं हो सकता। मैंने कहा-अच्छा दिखाओ। उसने जरकिन खोलकर दिखाया। मैंने पास ही बैठे एक श्रावक से कहा-भैया, इसके काज की पट्टी को थोड़ा मोड़कर मसलो और सूंघो। उसने उसको मसलकर सूँघा तो उसमें स्पष्ट रूप से चमड़े की गंध आ रही थी। ऐसे ही एक लड़का सर्दी के दिनों में हाथ में काले रंग के मोटे से दस्ताने पहने था। उसको भी जब ऐसा ही करके सूँघने को कहा तो उनमें भी स्पष्ट चमड़े की गंध आ रही थी जबकि वे मात्र 20 रुपये के थे। इसलिए सस्ते और महंगे से चमड़े का निर्णय नहीं करना चाहिए। अत: आप जूते-बेल्ट आदि खरीदने के पहले सावधानी रखें। ताकि आपका नियम भी नहीं टूटे और आप हिंसा से भी बच जावें।

इसी प्रकार साड़ी आदि खरीदते समय भी ध्यान रखें। सामान्य साड़ियों में भी कभी-कभी कौसा-सिल्क का तार रहता है। आपको सिल्क-कौसा आदि के वस्त्र पहनने का त्याग है तो दोष लगेगा। त्याग नहीं है तो त्याग कर दें, क्योंकि मात्र एक साड़ी बनने में लगभग 6000 कीड़ों की हत्या होती है। वस्त्र पहनना आवश्यक है लेकिन दूसरे की जान के साथ खिलवाड़ करके अपना सौन्दर्य बढ़ाने वाला तो विवेकवान नहीं माना जा सकता है। आज के सिन्थेटिक युग में अच्छी-अच्छी डिजायन, कलर, क्वालिटी वाले भरपूर मात्रा में, सस्ते-महंगे वस्त्र उपलब्ध हैं तो क्यों हम हिंसा जैसा पाप करके भविष्य के लिए अपने प्राणों को नष्ट करने का काम करें।

इसी प्रकार चप्पल, सेंडिल-जूते, पर्स-बेल्ट आदि भी सिंथेटिक मिलते हैं। उनसे भी हम अपना काम चला सकते हैं। अत: मन को थोड़ा-सा समझाकर लगभग 40,000 कत्लखानों एवं माँसाहार की हजारों दुकानों में होने वाली हिंसा से बच सकते हैं। एक बार भी किसी एक चमड़े की चीज का प्रयोग करने पर भी सभी कत्लखानों में होने वाली हिंसा का छठा भाग (अंश) हमें लगता

ही है, क्योंकि वहाँ की हिंसा से उत्पन्न पदार्थों का उपभोग करने से उनको प्रोत्साहन मिलता है इसलिए परोक्ष रूप से हमें भी कारित एवं अनुमोदना से हिंसा का पाप लगता ही है।

एक बार भी आप कत्लखाने को बाहर से भी या भीतर से उसको देख लेंगे या चमड़ा प्राप्त करने की विधि पढ़ लेंगे तो आपके रोंगटे खड़े हो जायेंगे। चमड़ा पहनने की बात तो बहुत दूर आप किसी को चमड़ा पहनने भी नहीं देंगे।

सावधानी :

(1) जूते-बेल्ट आदि खरीदने के पहले लेबिल अवश्य देख लें।

(2) यदि लेबिल नजर नहीं आवे तो थोड़ा-सा फोल्ड करके देखें। यदि प्लास्टिक का होगा तो दरार सी दिखेगी। चमड़े का होगा तो लोच खाकर पूर्वाकार हो जायेगा।

(3) जरकिन आदि में स्पष्ट न हो पावे तो छोटा-सा टुकड़ा निकालकर जलाकर देखें, बदबू आयेगी।

(4) यदि चमड़े का बेल्ट होगा तो ऊपर-नीचे एक जैसा नहीं होगा। प्लास्टिक आदि का होगा तो एक जैसा होगा।

भोजन खरीदते समय :

वैसे सर्वोत्तम तो यही है कि आप होटल में कभी नहीं खावें, क्योंकि होटल का भोजन कितना शुद्ध/स्वच्छ होता है, उसका प्रमाण यही है कि होटल वाला कभी अपनी होटल में भोजन की बात तो बहुत दूर पानी तक नहीं पीता है, क्योंकि उसको पता है कि उसकी दुकान में क्या वस्तु किस ढंग से एवं किन-किन पदार्थों से बनी है। आप अपने गाँव में तो होटल में कभी नहीं खावें। बाहर भी गुंजाइस हो तो टिफिन साथ ले जावें। मजबूरी से यदि होटल में खाना पड़े तो यदि ऐसा स्थान जहाँ पर विशेष माँसाहार चलता हो, जैसे - आसम, गोआ, तमिलनाडु, अमेरिका, इंगलैंड आदि में आप होटल पर यह नहीं पूछें कि शाकाहारी भोजन मिलेगा? बल्कि यह पूछें कि माँसाहार मिलेगा? इससे आपको सही समझ में आयेगा कि इस होटल में वास्तव में माँसाहार मिलता है या शाकाहार? अन्यथा आपको शाकाहारी समझकर या शाकाहार कहकर

आपको माँसाहार से मिश्रित भोजन करवा देगा। उसको आपके नियम-धर्म से मतलब ही क्या है? उसे तो अपनी चीज बेचने से मतलब है।

विशेष :

यद्यपि वर्तमान में बिस्किट, टाफी, चाकलेट, जिम जैम, कैडबरी आदि बच्चों के खाने योग्य अथवा बड़े भी जिनको खाते हैं उन सभी पदार्थों पर ग्रीन (हरा) और ब्राउन (भूरा) निशान लगा रहता है अर्थात् ग्रीन का अर्थ शाकाहारी और ब्राउन का अर्थ माँसाहारी होता है। समझदार/शाकाहारी व्यक्ति ग्रीन निशान को देखकर ही खाने की चीज खरीदता है लेकिन सरकारी अधिसूचना में माँसाहार के अंतर्गत बाल, पंख, सींग, नाखून, चर्बी, अण्डे की जर्दी को बाहर रखा गया है अर्थात् इन चीजों को माँसाहार में नहीं गिना गया है। परंतु वास्तव में ये चीजें भी माँसाहार में ही आती हैं, क्योंकि ये जीवों के शरीर से ही प्राप्त होती हैं। यह भी नहीं कहा जा सकता है कि दूध के समान ये वस्तुएँ जीवों से अलग बनती होंगी या इनको जन्तुओं में से अलग करते समय उनको वेदना नहीं होती होगी, अपितु उनको वेदना होती ही है...। अत: ये सब माँसाहार में ही आते हैं। इनको माँसाहार से बाहर रखने के कारण कम्पनी वाले इन चीजों को सहज रूप से खाद्य सामग्री में मिलाकर भी ग्रीन निशान ही लगाते हैं। पहली बात तो अधिकतर लोगों को यह पता ही नहीं है कि इन बिस्किट आदि में माँसाहार का कोई पदार्थ डाला भी जा सकता है, क्योंकि उस पर ग्रीन चिह्न लगा है। दूसरी बात-पैकेट पर उनमें डाली जाने वाली चीजों के नाम भी लिखे रहते हैं या ये चीजें इन वस्तुओं को डालकर बनाई जाती हैं। इनके अलावा इनमें गौण रूप से अर्थात् बहुत अल्प मात्रा में क्या-क्या डाला जाता है इन सबके नाम पैकेट पर लिखे रहते हैं या उन सबको संकेत रूप में लिखा जाता है, इस बात का विचार ही नहीं आता, आयेगा भी क्यों, क्योंकि खाने वाले को तो यह पता ही नहीं है कि इन पैकेटों पर इन छोटे-छोटे अक्षरों में क्या लिखा रहता है। दुनिया की क्या बात-आज तक मैंने भी कभी नहीं सोचा कि दवाई की शीशी/डिब्बी आदि पर ये छोटे-छोटे अक्षरों में इतना सारा क्या लिखा है। कभी विचार आया तो यही सोच लिया कि ये सब अपने काम की बातें नहीं हैं या यह सब अपनी समझ के बाहर हैं या इन सबको जानने की हमें

आवश्यकता ही कहाँ है ? लेकिन मैंने जब पम्पलेट देखा तो दिमाग में कुछ विचार उत्पन्न हुए। मैंने उसको कई बार पढ़ा परंतु मुझे इनका भाव कुछ भी समझ में नहीं आया तो मैंने कुछ पढ़े-लिखे लोगों से उसके बारे में पूछा...।

इसको समझने के बाद मैंने एक बिस्किट का खाली पैकेट लेकर देखा। उस पर भी मुझे स्पष्ट रूप से कुछ भी समझ में नहीं आया तो मुझे लगा कि शायद सामान्य व्यक्ति को ये बातें समझ में नहीं आती हैं और विशेष व्यक्ति हो, पढ़ा-लिखा भी हो तो भी यदि विशेष रूप से इस पर विचार नहीं करे तो उसे इसके बारे में कुछ भी समझ में नहीं आ सकता है इसलिए आप भले ही 'ग्रीन-मार्क' वाली चीजें खरीदें, उस पर लगे हुए E नम्बर अवश्य देखें।

E नम्बर क्या है :

बिस्किट आदि खाद्य पदार्थों में डाले जाने वाले अन्तर्घटक (कम मात्रा में डाली जाने वाली सामग्रियाँ) तत्त्वों के नाम बहुत बड़े होने के कारण उन्हें बड़े अक्षरों में लिखा जाना असंभव होता है इसलिए उन्हें E नम्बर डालकर लिखा जाता है। ये E नम्बर इतने बारीक अक्षरों में लिखे रहते हैं कि उनपर किसी का ध्यान ही नहीं जा पाता है। वास्तव में यदि हमें शुद्ध एवं सोले के भोजन की बात तो बहुत दूर मात्र शाकाहारी भी बने रहना है तो इन E नम्बर का अर्थ समझना आवश्यक है।

E नम्बर देखने की विधि :

Emulsifier (इमल्सी फायर) लिखकर अर्थात् यह स्पेलिंग लिखकर उसके आगे 322, 252, 921 आदि दो-तीन नंबर लिखे रहते हैं। इन नंबरों को इंटरनेट में www.veggieglobals.com पर देखने से इस नम्बर की चीज में डाले जाने वाले अन्तर्घटक तत्त्व समझ में आ जायेंगे।

सभी खाद्य पदार्थों पर ये नम्बर डले रहते हैं। किसी का छोटा पैकेट होने के कारण यदि पूरी स्पेलिंग लिखने की जगह नहीं होती है तो केवल E लिखकर उसके आगे नम्बर लिखे हो सकते हैं। कभी-कभी ये नम्बर पैकेट की पैकिंग में अर्थात् पैकेट को जहाँ से मोड़ा जाता है उसमें चले जाते हैं, उन्हें भी ध्यान लगाकर देखें तो दिख सकते हैं। अत: ब्राउन चिह्न वाला तो माँसाहार में ही है लेकिन हरे चिह्न वाला भी माँसाहार हो सकता है इसलिए E नम्बर

देखकर शाकाहारी बने रहें/बने रहने का प्रयास अवश्य करें। आपको कभी माँसाहार का दोष नहीं लगेगा।

जब बाहर जाते हैं :

आप 8-15 दिन के लिए किसी रिश्तेदार के यहाँ, तीर्थयात्रा या, शादी आदि में जावें तो घर की उन वस्तुओं को जिनमें जीवोत्पत्ति की सम्भावना हो, जो सड़ सकती हैं, उन्हें व्यवस्थित करके जावें। जैसे-फ्रिज में फल, दूध, आइस्क्रीम आदि रखे हैं तो उन्हें निकालकर साथ ले जावें या खा-पीकर खतम कर दें अथवा अड़ोस-पड़ोस में रिश्तेदार आदि को देकर जावें। बाहर सब्जी की टोकरी में यदि नींबू-मिर्च आँवला आदि भी रखे हैं तो उन्हें भी व्यवस्थित करके जावें। आटा, बेसन आदि चीजें जिनमें बहुत दिन के होने पर लटें उत्पन्न हो जाती हैं उनको भी किसी को देकर जावें। आप यह नहीं सोचें कि जब लौटकर आयेंगे तब आते ही क्या खायेंगे, किसकी रोटी बनाएँगे। आप जिनको आटा आदि देकर गये हैं, आकर उन्हीं से आटा बेसन ले सकते हैं या एक टाइम का भोजन उन्हीं के यहाँ कर सकते हैं। अथवा जहाँ से आ रहे हैं वहीं से एक टाइम का टिफिन या आटा आदि ला सकते हैं, आटा आदि छोड़कर जाने से उसमें सैकड़ों लटें उत्पन्न हो जावेंगी। उनको देखकर वह आटा खाने का मन नहीं होगा। उस आटे को गाय आदि को खिलाएँगे तो भी पाप का बन्ध तो होगा ही।

बाहर जाते समय पानी के बर्तन भी खाली करके जावें अन्यथा आपके पीतल आदि के घड़े में भी छोटी-छोटी मछलियाँ उत्पन्न हो जायेंगी। मिट्टी का घड़ा होगा तो उसमें काई भी आ जायेगी अर्थात् वह अन्दर में बहुत चिकना हो जायेगा। बाहर से आकर उसको साफ करते समय अनन्त जीवों की हिंसा करनी पड़ेगी। लोटा-गिलास आदि भी साफ पौंछकर उलटे कर दें। ताकि उनमें जीव आकर न गिरें और पानी नहीं रहने से वे खराब भी नहीं हों।

इसी प्रकार बाहर की टंकी, हौद, हौदी आदि जिन बर्तनों में पानी भरा जाता है उन्हें भी खाली करके सुखा दें ताकि उनमें मछलियाँ उत्पन्न न हों। बहुत दिनों तक रखे हुए टंकी के पानी में बदबू भी आने लगती है। इसका अर्थ ही यह है कि उसमें जीव उत्पन्न हो चुके हैं। बाहर से आते ही घर में बोरिंग

है तो पानी मिल ही जाता है यदि नहीं है तो आस-पास के हेण्डपम्प या किसी घर के बोरिंग/जेट आदि से भी पानी ला सकते हैं। अत: आप पानी के पूरे बर्तन टंकी आदि को खाली करके/साफ, सुखा करके जावें।

इसी प्रकार रोटी का डिब्बा भी साफ/खाली करके जावें अन्यथा आधी रोटी भी उसमें रखी होगी तो डिब्बा बन्द रहने के कारण उसमें फफूँद आ जायेगी। आप यह भी नहीं सोचें कि डिब्बा खाली कर देंगे तो हमारे घर में अन्न समाप्त हो जायेगा। हमेशा के भोजन में से यदि डिब्बा खाली कर दिया जाये तो फिर भी ऐसा सम्भव है लेकिन जिस कार्य से हिंसा हो उस कार्य को करने से लक्ष्मी बढ़ ही कैसे सकती है? क्योंकि उससे तो पाप का आस्रव होता है। पाप के आस्रव से लक्ष्मी नष्ट होती है।

यदि आपके घर में कबूतर-चिड़िया आदि रहते हैं तो आप कमरे की एक खिड़की खुली छोड़कर जावें। कबूतर-चिड़िया आदि बाहर निकालकर जायेंगी तो उनके अण्डे/बच्चों को भोजन पानी नहीं मिलने से वे मर जायेंगे। यदि बाहर नहीं निकालेंगे तो वे भी अन्दर भोजन-पानी नहीं मिलने से मर जायेंगे। अत: दो-चार दिन के लिए बाहर जा रहे हैं तो दरवाजा बन्द करते समय विवेक रखें। यदि आपके कमरे-दुकान में बिल्ली रहती है, बिल्ली का आना-जाना रहता है तो दुकान में खट-पट करके घूमकर के देख लें ताकि बिल्ली, बिल्ली के बच्चे अन्दर न रह जावें। एक दिन एक युवक ने कहा-माताजी! प्रायश्चित्त दे दीजिए। मैं दसलक्षण में आपके पास आ गया था। जब लौटा तो दुकान में एक बिल्ली मर कर सड़ चुकी थी, भयंकर बदबू आ रही थी...। ऐसा कहीं भी कभी-भी हो सकता है अत: इस बात का विवेक अवश्य रखें ताकि हिंसा से बच सकें।

पानी में चींटी आदि गिर जावे तो :

लाल चींटियाँ, मक्खियाँ, मच्छर आदि यदि पानी में गिर जावें तो उनको देखते ही यह नहीं सोचें कि ये मर ही गये होंगे, क्योंकि चींटी आदि पानी में गिरने के घण्टों बाद भी जीवित रहते हैं। यद्यपि तत्काल देखते ही ऐसा लगता है कि ये सब मर गई होंगी। लेकिन ऊपर से मरे हुए लगकर भी वे मरती नहीं हैं। बेहोश या सुषुप्त हो जाती हैं इसलिए उनका हिलना-डुलना बन्द हो जाता

है। उन्हें निकालकर नाली या कचरे के पात्र में अथवा रास्ते में फेंक दिया तो वे निश्चित मर जायेंगी और यदि उनको सूखे कपड़े पर लेकर उनका पानी सुखा दिया जाय तो वे एक-दो मिनट में ही हिलने-डुलने लगती हैं। यदि बहुत देर से पानी में गिरी हैं तो कपड़े के अन्दर लेकर थोड़ी गर्मी दे दें तो भी चींटियाँ हिलने लगती हैं। इसी प्रकार मक्खियाँ भी यदि सामान्य पानी में गिरी हैं तो उनको निकाल कर साइड में जहाँ किसी के पैर नहीं पड़ें, वाहन आदि से वे कुचल नहीं पावें ऐसे स्थान पर डालें ताकि वे थोड़ी देर में पंख आदि सूखने पर उड़ सकें। यदि जूठन के पानी में गिरी हैं तो धीरे से निकालकर उन पर थोड़ी सी कण्डे की राख डाल कर हिला दें। आवश्यकता हो तो पतली घास की सीक (जो ज्यादा तीखी न हो) या कपड़े के तन्तुओं से उसके पंख आदि को खोलने की कोशिश करें। मक्खियाँ जीवित बच सकती हैं। तेल आदि चिकनाई में मक्खियाँ गिरें, यदि थोड़ी देर हुई है तो जीवित रह सकती हैं। वे जीवित रहें या न रहें आपको उन्हें बचाने के भावों का फल तो अवश्य मिलेगा। अत: पहले तो ढक कर रखें ताकि मक्खियाँ आदि गिर नहीं पावें। यदि प्रमाद से गिर गई हैं तो विवेक रखकर उनको बचाने की कोशिश करें, यही कर्त्तव्य है।

पानी भरते समय :

आप घड़े, बाल्टी, टंकी, लोटा-गिलास में पानी भरने के पहले उसके अन्दर एक बार झाँक करके अवश्य देख लें। उनमें कोई भी जीव हो सकते हैं। चींटियाँ, मक्खियाँ, मच्छर आदि बैठे हुए रह सकते हैं। एक दिन मुझे कमण्डलु में पानी डलवाना था। मैंने कमण्डलु उठाकर देखा तो उसमें सैकड़ों मच्छर थे। मैंने बहुत बार मच्छरों को निकाला। बार-बार निकालने पर भी फिर-फिर मच्छर निकलते जा रहे थे। मुझे जब विश्वास हो गया कि अब कमण्डलु में मच्छर नहीं होंगे तो मैंने पानी डलवा लिया। पानी डलवाकर जब हिलाकर देखा तो एक मच्छर पानी में तैर रहा था। इतना देखने के बाद भी मच्छर रह सकता है तो बिना देखे पानी डालने वाले के बर्तनों में कितने जीव रह जाते होंगे। एक बार एक महिला सेक करने के लिए एक बॉटल में गरम पानी भरकर लाई। उसने जल्दी-जल्दी में बॉटल को देखा ही नहीं और पानी भर दिया। जब मैंने बॉटल को देखा तो उसमें दस-बारह जीव तैर रहे थे। क्या हमारे साथ भी ऐसा

नहीं हो सकता है? अत: आप किसी भी बर्तन में पानी भरने के पहले उसे आँखों से देखें। यदि आँखों से नहीं दिख पा रहा है तो धीरे से हाथ डालकर या कपड़ा डालकर देख लें ताकि उसमें कोई जीव नहीं रह जावे।

घर में मन्दिर नहीं बनायें :

कई लोग अपने घर में एक मंदिर-सा बना लेते हैं। वहाँ वे भगवान की, कुछ क्षेत्रों की तथा गुरुओं की फोटो रख लेते हैं। उनके (फोटो) सामने दीपक जलाते हैं, आरती करते हैं एवं भगवान के समान उनका आदर करते हैं। इस प्रकार करते हुए वे यह नहीं सोचते हैं कि एक तरफ तो हम उन फोटो के सामने आरती करते हैं, दीपक जलाना आदि कार्य करते हैं और दूसरी तरफ हम उनके सामने ही खाते हैं, लड़ते-झगड़ते हैं, पंचेन्द्रियों के विषयों में प्रवृत्ति करते हैं। यदि हम यह मानते हैं कि फोटो के सामने दीपक जलाने, माला फेरने आदि से विशेष धर्म/पुण्य होता है तो उनके सामने लड़ने-झगड़ने, सोने, पैर पसारने आदि गलत कार्य (जो कार्य मंदिर में नहीं किये जा सकते हैं) करने से विशेष पाप का बन्ध भी होगा। दूसरी बात किसी भी प्रतिमा-स्टेच्यू या फोटो आदि के सामने बार-बार जाप आदि करने से वे पूज्य हो जाती हैं। तीसरी बात यदि उसे हम मंदिर के बराबर मानते हैं तो हमें मंदिर में विराजमान भगवान के समान इनकी भी विनय करना पड़ेगा तथा जिस प्रकार प्रतिमा के खण्डित होना आदि विकृतियाँ होने पर विधि पूर्वक उनका विसर्जन किया जाता है उसी प्रकार केलेण्डर-फोटो आदि के फट जाने पर, जीर्ण-शीर्ण हो जाने पर उतने ही विनय से विसर्जित करना पड़ेगा। लेकिन ऐसा हम नहीं कर सकते हैं। दूसरी बात केलेण्डर फोटो आदि कुछ ही वर्षों में जीर्ण-शीर्ण हो ही जाते हैं। उनको बार-बार इस विधि से विसर्जन नहीं किया जा सकता है अत: आप अपने घर में आदर्श रूप से भगवान, गुरु आदि की फोटो अवश्य रखें लेकिन उनके सामने दीपक जलाना आदि कार्य नहीं करें। आप यह भी नहीं सोचें कि मंदिर बहुत दूर पड़ता है या बच्चे आदि शाम को मंदिर नहीं जा पाते हैं इसलिए घर में आरती आदि कर लेने से बच्चों में आरती करना आदि रूप धर्म के संस्कार पड़ते रहते हैं। यह सत्य है लेकिन ऐसा करने से बच्चों में जितने धर्म के संस्कार

नहीं पड़ पायेंगे उतने मंदिर जाने के संस्कार छूट जायेंगे क्योंकि आपके आरती आदि धर्म के कार्य करने/कराने से उनकी यह धारणा बन जायेगी कि यह भी एक मंदिर है। यहीं दर्शन करके हम मंदिर दर्शन का नियम पूरा कर सकते हैं...। अत: फोटो के सामने आरती आदि नहीं करें ताकि वहाँ अन्य विषय-भोग करने पर भी विशेष पाप का बन्ध नहीं हो और फोटो आदि को अलग करने पर भी विकल्प नहीं हो। इसकी अपेक्षा आप अपने घर के एकान्त में एक साधना कक्ष बनावें वहाँ स्वाध्याय, माला, जाप, पाठ करके परिणामों की विशुद्धि बढ़ावें, सायंकालीन धर्मध्यान करें लेकिन वहाँ पर भी दीपक जलाने, आरती करने आदि कार्य नहीं करें।

गेहूँ आदि पिसाते समय :

आपको गेहूँ, दाल, मक्का आदि पिसाने या पीसने हैं। आपने उनको अच्छा छानकर तैयार कर रखा है फिर भी पिसाते/पीसते समय एक बार पुन: सरसरी दृष्टि से अवश्य देख लें क्योंकि उसमें भी कोई जीव आकर बैठ सकता है। एक-बार एक महिला ने शाम को गेहूँ शोधन करके रख लिये। दूसरे दिन उसने गेहूँ का पात्र उठाया और सीधा पीसने के लिए चक्की में डाल दिया। जैसे ही उसने गेहूँ डाले उसमें से एक लम्बा साँप ऊपर आया। साँप को देखते ही तत्काल चक्की बन्द कर दी फिर भी चक्की बन्द होते-होते साँप के तीन-चार टुकड़े हो गये। उसका कारण क्या हो सकता है? गेहूँ शोधन करके तो रखे थे लेकिन चक्की में डालते समय बर्तन को थोड़ा हिलाया नहीं, इसीका दुष्फल था, इसी अविवेक का दुष्परिणाम था कि इतना बड़ा पाप हो गया। इसी प्रकार उसमें छिपकली, मेंढ़क आदि भी आकर बैठ सकते हैं। ये सब बड़े जीव हैं परन्तु छोटे-छोटे कीड़े-मकोड़े, चींटियाँ आदि तो उनमें आ भी जायेंगी तो पीसने के बाद भी और पीसते समय भी नहीं दिख पायेंगी, क्योंकि वे बहुत छोटी होती हैं इसलिए न निकलकर भाग सकती हैं और न ही उनका माँस-खून आदि आपको आटे में दिख सकता है। नहीं दिखने पर आटे में मिलती हैं ही। इसमें माँसाहार का भी पाप लगता है और जीवों की हिंसा का भी। अत: पीसते-पिसाते समय थोड़ा विवेक रख कर दोनों ही पापों से बचा जा सकता है।

व्यापार करते समय :

जिसका परिवार है या जो परिवार बनाना चाहता है अर्थात् शादी करना चाहता है उसे धन अर्जन के लिए कुछ-न-कुछ कार्य तो अवश्य करना ही पड़ता है। वह चाहे व्यापार करे या नौकरी, खेती-बाड़ी करे या दलाली उसे कुछ तो करना ही होगा। धन अर्जन के क्षेत्र में कुछ कार्य ऐसे होते हैं जिनमें झूठ बोले बिना चल ही नहीं सकता। जैसे-वकालत करना, दलाली करना आदि। कुछ कार्य ऐसे होते हैं जिनमें हिंसा की मुख्यता रहती है। जैसे-झाडू, साबुन-सर्फ बेचना, मुर्गीपालन केन्द्र खोलना, ऐसी फैक्ट-ी खोलना जिसमें अण्डे आदि माँसाहारी पदार्थ डाले जाते हैं। जैसे-बेकरी से बनने वाले बिस्किट-ब्रेड आदि। कुछ कार्य ऐसे होते हैं जिनमें सामने वाला मजबूरी से अन्दर-ही-अन्दर कुढ़ते हुए पैसा देता है। जैसे-सोने-चाँदी आदि के आभूषण लेकर पैसे देना अर्थात् गिरवी (साहूकारी) का व्यापार करना। कुछ कार्य ऐसे होते हैं जिनमें हिंसा का मिश्रण होता है। जैसे-ऐलोपेथिक, होम्योपेथिक औषधियाँ बेचना। इनमें कुछ दवाइयों में जीवों के शरीर के अंश अर्थात् हड्डी, चर्बी, ब्लड आदि डाले जाते हैं अथवा जो मारने एवं मरने की अर्थात् अबोर्सन, चूहे मारने की दवाई आदि। कुछ कार्य ऐसे होते हैं जिनमें भरण-पोषण की, जीवन की व्यवस्था बनती है जैसे-दाल-चावल, तेल-घी आदि। इन सबसे यद्यपि सामान्य से पाप होते ही हैं लेकिन किसी में ज्यादा पाप होते हैं तो किसी में कम। व्यापार शुरू करने के पहले विवेक रखने वाला क्रूर पापों से बच सकता है। अन्धाधुन्ध बिना सोचे-समझे व्यापार शुरू करने वाला जीवन भर पापों का अर्जन करता रहता है और उसके पुत्र-पौत्र भी उस व्यापार को सहज रूप से बन्द नहीं कर पाते हैं जिससे वे भी पापों का अर्जन करते ही रहते हैं। इसलिए व्यापार शुरू करने के पहले विवेक रखें।

वैसे उच्च कुलीन लोगों को पदार्थ के उत्पादन का निषेध किया है अर्थात् उच्च कुल वाले तेल नहीं निकालते, दाल नहीं बनाते, कपड़ा नहीं बुनते (बनाते) कहने का अर्थ यह है कि उच्च कुलीन लोग फैक्ट-ी खोलना, खान में से पत्थर निकालना उनकी कटिंग करना, सीमेंट बनाना, ब्यूटी पॉर्लर खोलना आदि काम नहीं करते, क्योंकि इन कार्यों में चौबीस घण्टे जीवों की हिंसा होती रहती है

इसलिए हमारे आचार्यों ने षट्कार्य की व्यवस्था बताते हुए जुलाहे को कपड़े बुनने का, कुम्भकार को घड़े, ईंटें आदि बनाने का, तेली को तेल निकालने का, शिल्पी को पत्थर काटना-कलाकृति आदि कार्य करने की व्यवस्था सौंपी थी। इन पाप कार्यों को करने के कारण ही इन्हें नीचकुलीन कहा गया है। उच्च कुल वाले इन लोगों से यह सब सामग्री खरीद कर जनता के जीने की व्यवस्था करते हैं। इससे वे इन सामग्रियों को उत्पन्न करने के पाप से बच जाते हैं। वर्तमान में लोगों के ये विचार बन गये हैं कि बड़ी-बड़ी फैक्टि-यों वाले ही धनाढ्य होते हैं लेकिन यह गलत धारणा है। माल को खरीद कर बेचने वाले भी बहुत बड़े धनाढ्य सेठ-साहूकार बन बनते हैं। एम.पी. में स्थित गढ़ाकोटा से एक-डेढ़ कि.मी. दूर पटेरिया गाँव में एक बहुत बड़ा मंदिर है जिसमें भगवान पार्श्वनाथ स्वामी की तीन विशाल पद्मासन प्रतिमाएँ विराजमान हैं। उस मंदिर का निर्माण कपास के व्यापारी एक सेठ ने केवल एक दिन की कमाई से करवाया था। वर्तमान में भी कई थोक व्यापारी एक दिन में लाखों रुपये कमाते ही हैं, इसलिए यदि आपके घर में फैक्ट-ी आदि नहीं है, आप नया व्यापार शुरू कर रहे हैं तो विवेक रखें। ऐसा माल खरीदें-बेचें जो जनता के जीवन के लिए आवश्यक है। जिसके बिना व्यक्ति का जीवन ही नहीं रह सकता है। जिसके बिना जीवन नष्ट होने की सम्भावना है। खरीदने और बेचने में पाप कम लगता है, हम ऐसा व्यापार कर सकते हैं, ऐसा सोचकर कोई चमड़े के जूते-बेल्ट आदि सौन्दर्य प्रसाधन के अशुद्ध/हिंसात्मक पदार्थ खरीद कर बेचने लगे, यह उचित नहीं है, क्योंकि ये पदार्थ जीवन के लिए अति आवश्यक नहीं हैं। ये चीजें मात्र शरीर के सजाने के लिए, विषय-भोग की सामग्रियाँ हैं। इनसे तो जीवन पतित होता है। इसलिए इनको तो खरीद कर बेचने के व्यापार का भी निषेध किया गया है अत: यदि आपके दादा-पिता आदि का ऐसा कोई व्यापार है जो बहु आरम्भ का अर्थात् उच्च कुलीन लोगों के करने के योग्य नहीं है, नरक आदि दुर्गति को देने वाला है, उसे यदि आपको अपने भाग्य और भगवान की भक्ति पर विश्वास है तो पूरा भी एक साथ बन्द कर दें। आप अच्छा, कम आरम्भ वाला व्यापार प्रारम्भ करें आपको पैसा मिलेगा। पूर्व के व्यापार के समान अच्छी आय होगी और यदि आप में इतना साहस नहीं है तो धीरे-धीरे दूसरा व्यापार

जमाते जावें और पूर्व का व्यापार बन्द करते जावें। वास्तव में जिसके भाग्य में धन लिखा होता है वह कोई सा व्यापार करे उसके थोड़े से पुरुषार्थ में ही धन मिल जाता है तथा जिसके भाग्य में धन नहीं लिखा होता है उसके अनेक प्रकार के पुरुषार्थ करने पर भी लक्ष्मी दूर भागती है। फिर भी पुरुषार्थ से भाग्य जगाया जाता है? पाप को भी पुण्य में बदला जा सकता है लेकिन पाप का बन्ध करने वाला कार्य पुरुषार्थ नहीं कहलाता है। ऐसे कार्य करने से तो पाप का पुण्य में बदलना तो बहुत दूर उसका तो पुण्य भी पाप में परिवर्तित हो जाता है इसलिए ऐसे पापात्मक/हिंसात्मक, आरम्भ प्रधान व्यापार नहीं करें। भले ही पूर्वोपार्जित पाप के उदय से वर्तमान में धन नहीं भी मिले, भविष्य के लिए पाप का अर्जन तो नहीं होगा। अन्यथा पूर्वोपार्जित पाप के उदय से आप कैसा भी व्यापार करें आपको धन नहीं मिलेगा और पाप का बन्ध होने से भविष्य में भी धन नहीं मिलेगा। इसलिए आप व्यापार करते समय विवेक रखें।

लोभ नहीं करें :

आप पैसे के लोभ में दीपावली के सीजन में पटाखे, फुलझड़ी, टिकली, तमंचा, पिस्तौल आदि आतिशबाजी की सामग्रियों की दुकान नहीं खोलें और अपनी दुकान में भी ये आइटम नहीं लावें। भले ही आपको इन सामग्रियों को बेचने से साल भर में होने वाली आय से कई गुनी आय होती हो। लेकिन इन सामग्रियों को बेचने से आपको इतने पाप का बन्ध होगा जितना शायद जीवन भर में अन्य योग्य सामग्रियों का व्यापार करने से नहीं होगा। आपके द्वारा बेचे गये पटाखे आदि से जितने छोटे-बड़े जीवों की हत्या होगी, बच्चे-बूढ़ों की आँखें फूटेंगी। खराब होंगी, घर-दुकान आदि में आग लग जायेगी, किसी के मुँह-हाथ आदि जल जायेंगे, उनकी आवाज से जितने गर्भपात होंगे आदि-आदि जितने पाप होंगे, जितना नुकसान होगा उन सबका फल आपको भी मिलेगा, क्योंकि आपने ऐसी हिंसात्मक सामग्री उपलब्ध कराई है। आप यह भी नहीं सोचें कि क्या मैं पटाखे नहीं बेचूँगा तो बाजार में पटाखे बिकेंगे ही नहीं। बाजार में पटाखे बिकेंगे या नहीं बिकेंगे परन्तु कुछ मात्रा तो कम होगी ही और आप पाप से तो बच ही जायेंगे। यह सत्य है कि वस्तु जितनी सहज और सस्ती उपलब्ध होती है उतनी ही लोग ज्यादा खरीदते हैं। आवश्यकता नहीं होने पर और मन

नहीं होने पर भी बार-बार किसी को देखने से उसका उपयोग करने का मन हो ही जाता है। आप कल्पना करें, मान लिया आप पटाखे नहीं बेचते हैं, नहीं फोड़ते या चलाते हैं और अचानक किसी के द्वारा चलाये गये पटाखे से आपकी दुकान जल गई या आपके हाथ-पैर जल गये, आँखें फूट गईं, आपका बच्चा घायल हो गया आदि कोई घटना घट गई तो आपको पटाखे बेचने और चलाने वाले के प्रति कैसे और क्या भाव उत्पन्न होंगे। बस, ऐसे ही भाव आपके प्रति उन हजारों लोगों के होंगे जिनके घर में जिनके साथ छोटी-मोटी कोई घटना होगी। उनकी बददुआएँ आपको लगेंगी। पाप के साथ-साथ उन बददुआओं का भी प्रभाव आपके धन, परिवार एवं मन पर पड़ेगा। उसका फल आपको भविष्य में अवश्य मिलेगा। अत: आप पटाखे के स्थान पर आपके नगर-ग्राम में कम उपलब्ध होने वाली या नहीं उपलब्ध होने वाली सामग्रियों की दुकान लगावें। इसमें आपको पटाखे बेचने से भी ज्यादा लाभ हो सकता है और पाप से भी बचा जा सकता है। एक गाँव में हम लोगों का वर्षायोग चल रहा था। दीपावली के अवसर पर एक व्यक्ति ने कहा-माताजी, ये प्रतिवर्ष लगभग 5 लाख के पटाखे बेचते हैं। हमने उन्हें पटाखों से होने वाली हानि को समझाया तो उन्हें समझ में तो सब आ गया लेकिन उनकी आँखों के सामने प्रतिवर्ष होने वाली लगभग डेढ़-दो लाख की आय घूम रही थी। जैसे-तैसे करके उनको समझाया तो उन्होंने उसी वर्ष के लिए पटाखे का त्याग कर दिया उसी के फल में उन्हें पटाखे की अपेक्षा भी दूना लाभ हुआ तब उन्होंने आकर कहा - माताजी ! आपके आशीर्वाद से हम पटाखे बेचने के पाप से भी बच गये और लाभ भी दूना हुआ। यह रावतभाटा की सच्ची घटना है। आप भी पटाखे नहीं बेचें, उसके स्थान पर नवीन आवश्यक सामग्रियाँ बेचें ताकि पाप से बच जावें और निर्दोष लाभ भी हो। हाँ, नेलपॉलिस, लिपिस्टिक आदि जीव-जन्तुओं की हिंसा से उत्पन्न होने वाली सौन्दर्य प्रसाधन सामग्री लाकर दुकान लगाने की गलती न कर लें, नहीं तो कुँए से निकलकर खाई में कूदने वाली बात हो जायेगी अर्थात् आप पाप से तो नहीं बच पायेंगे। एक दिन मैंने पटाखों से घटी दुर्घटनाओं का एक पोस्टर देखा तो मेरा दिल दहल गया। उसे देखकर मुझे ऐसा लगा कि वास्तव में हमारे देश में कितना अविवेक है, एक तरफ हमारे देश के लोग भूखे मर

रहे हैं और एक तरफ पटाखों में करोड़ों की सम्पत्ति बरबाद हो रही है। सम्पत्ति के साथ चेतन सम्पत्ति अर्थात् मनुष्यों का और जीव-जन्तुओं का कितना नाश हो रहा है। गरीब हो या अमीर, पटाखों की आग किसी को नहीं छोड़ती। अच्छे-अच्छे सम्पत्तिशाली व्यक्ति के बच्चों की पटाखों से आँख फूट जाने पर संसार की कोई शक्ति नहीं है जो उसको वापिस ज्योति दे सके। राष्ट-पति हो या प्रधानमंत्री हो या उनके पुत्र-पत्नी आदि के पटाखे से बदसूरत हो जाने पर कौन उनको खूबसूरत बना सकता है। क्या ऐसा करना उचित है? क्या यह विवेक है? क्या ऐसा करते हुए हम इस लोक और परलोक में सुख पा सकते हैं? नहीं, अत: ऐसी भूल कभी नहीं करें। मैंने सोचा इस पोस्टर को यहाँ अवश्य देना चाहिए। संभव है देखने वाले का दिल भी दहल जावे, वह भी पटाखे बेचने, चलाने, प्रेरणा देने से होने वाले पापों से बच जावे। आप इसे गौर से देखें और अपने मासूम बच्चों, पौत्र-पौत्रियों, दोहित्र,अड़ोस-पड़ोस, रिश्तेदार आदि जिनको दिखा सकते हैं बार-बार दिखा कर उनके मासूम हृदय में यह भाव उत्पन्न करें कि ऐसा दु:खदायक/पापात्मक कार्य हम कभी नहीं करेंगे ताकि वे भविष्य में पटाखे चलाने/बेचने जैसे दुष्कृत से बच सकें। यदि कभी आपको लगे कि पटाखे चलाने में, इनकी आवाजों में, इनकी सुन्दरता में कितना आनन्द आ रहा है। तो आप इन चित्रों को देखें/सोचें, यदि मेरे पटाखे से किसी की ऐसी हालत हो जायेगी तो क्या मैं मानव कहलाने का अधिकारी रहूँगा और मेरे पटाखे से मेरी ही या मेरे बच्चों/रिश्तेदारों की ऐसी हालत हो गई तो मैं जीवनभर उसको भूल पाऊँगा...? और किसी दूसरे के पटाखे से कभी मेरे बच्चे आदि की ऐसी स्थिति होगी तो मेरे दिल में जीवन भर उसके लिए कैसा भाव होगा.....।

सावधानी :

(1) पटाखे का अर्थ केवल पटाखे ही नहीं समझें, आतिशबाजी की सब सामग्रियाँ समझें।

(2) यदि पटाखे खरीदने के बाद आपको पटाखों से होने वाली हानि समझ में आई है तो पड़ोस/रिश्तेदार आदि को देने की अपेक्षा उन्हें तोड़कर फेंक देना ज्यादा अच्छा है, क्योंकि पड़ोसी आदि को देने पर हिंसा से नहीं बच पायेंगे।

(3) यदि आपकी दुकान में दादा-पिता आदि के समय से ही पटाखे आदि आतिशबाजी का सामान बिकता है तो उस परम्परा को समाप्त कर दें।

(4) धन के लोभ में बहाने बनाकर पटाखे आदि नहीं बेचें अर्थात् आप स्वयं तो नहीं बेचें लेकिन भाई, पुत्र, पिता, नौकर आदि को पटाखे बेचते समय कुछ नहीं कहना (यदि आप सक्षम हैं तो उन्हें भी पटाखे आदि बेचने के लिए मना अवश्य करें)

पैसा बैंक में जमा कराने से :

कई लोग एक साथ बहुत सारा पैसा कमाकर व्यापार करना बन्द कर देते हैं। उनका विचार रहता है कि अब व्यापार करके क्यों पाप का काम करें, आरम्भ-समारम्भ करें। अब आराम से बैठे-बैठे खायेंगे और पाप से भी बच जायेंगे। वे उस पूरे पैसे को फिक्स-डिपोजिट करवा देते हैं। भले ही आँखों से दिखने वाले पाप/आरम्भ से बच जाते हैं लेकिन परोक्ष रूप से होने वाले पापों के बारे में वे नहीं सोच पाते हैं। उनका वह पैसा किस काम में आता है, आखिर बैंक वाले कुछ ही वर्षों में उनको दूना पैसा या प्रतिमाह ब्याज के रूप में पैसा कहाँ से लाकर दे देते हैं? वास्तव में ऐसा पैसा अधिकतर लोन के रूप में दिया जाता है। वह लोन लेने वाला उस पैसे का अर्थात् आपके पैसों का क्या उपयोग करेगा। हो सकता है आपके पैसे बैंक कत्लखाना या मुर्गीपालन केन्द्र अथवा किसी कसाई को भी दे सकता है। उन सब पाप का छठा अंश बैंक में पैसा रखने वाले को भी लगेगा। इसकी अपेक्षा यदि आपके पास 50 लाख रुपये हैं उन्हीं को आप पास में रखकर आराम से जीवन जीना चाहते। धर्म-ध्यान करना चाहते हैं तो आप इन्हीं में से एक लाख रुपये भी प्रतिवर्ष अर्थात् 8000 रुपये प्रतिमाह खर्च करें तो भी 50 वर्ष तक आराम से जी सकते हैं। यदि आपकी अभी वर्तमान में 40 वर्ष की मात्र उम्र है तो भी 50 लाख खर्च होने तक आप 90 वर्ष के हो जायेंगे। इससे ज्यादा तो शायद आपको भी विश्वास नहीं होगा कि आप जी सकते हैं। आप सामान्य से धर्मात्मा व्यक्ति अवश्य होंगे तब तो आपके पास इतना संतोष है कि आप अब व्यापारादि करके पापों में नहीं फँसना चाहते हैं, परिग्रह नहीं बढ़ाना चाहते हैं इसलिए आपके यद्वा-तद्वा अर्थात् होटल में जाना, पाउच-गुटखा आदि खाना, इधर-उधर

अर्थात् देश-विदेश के पर्यटन स्थलों पर जाने का खर्चा तो है ही नहीं। मात्र तीर्थयात्रा, गुरुओं के दर्शन, आहार-औषधि दान आदि का सामान्य खर्च होगा। उसके लिए 8000 रुपये प्रतिमाह में आपका खर्चा अच्छी तरह चल सकता है। इसलिए बैंक में पैसा डालकर उसके ब्याज को खाकर व्यापार से भी ज्यादा पाप नहीं कमावें। इसकी अपेक्षा आप यह संकल्प रखें कि मैं एक वर्ष में मात्र इतना पैसा कमाऊँगा (जितना आपको आवश्यक हो) उतना पैसा यदि आप दो महीने या चार महीने में ही कमा लें तो शेष दिनों के लिए दुकान/व्यापार नहीं करें आपको आराम से धर्म-ध्यान, तीर्थयात्रा, गुरुदर्शन, आहारदानादि सबका लाभ भी मिलेगा और आपको उपर्युक्त पाप भी नहीं लगेगा। अथवा उतने पैसों का मकान खरीद कर किराये देकर 10-15 हजार रुपये प्रतिमाह प्राप्त कर निश्चिन्तता का जीवन व्यतीत कर सकते हैं। आप यह भी नहीं सोचें कि मकान आदि किराये देने पर डूबने अर्थात् किरायेदार हमारा मकान हड़प ले, खाली नहीं करें तो हमारा क्या हो? इसलिए हम ऐसी झंझट में नहीं पड़ना चाहते हैं, ऐसा भी नहीं है। यदि आपके भाग्य में कुछ ऐसा होना लिखा है तो बैंक का पैसा भी डूब सकता है। बैंक में भी चोरी हो सकती है। बैंक भी घाटे में जा सकता है अत: विवेक पूर्वक कार्य करें। यह नहीं हो कि हम बहुत धर्म करते हुए दिखें और अण्डरग्राउण्ड में पाप पलता रहे।

पैसा उधार देते समय :

(1) शराबी, माँसाहारी, जुआरी, शिकारी आदि को तो कभी पैसा उधार देवें ही नहीं। अन्य लोगों को देते समय भी थोड़ी सावधानी रखें, कहीं आपके पैसे से वह शराब आदि स्वास्थ्य को हानि पहुँचाने वाली हिंसात्मक चीजें न खा ले अथवा पटाखे, अशुद्ध सौन्दर्य प्रसाधन-सामग्रियाँ, अबोर्सन आदि की दवाई बेचना आदि पापात्मक व्यापार न कर ले। यदि आपके पैसे से उसने ये व्यापार/काम किये तो आपको भी पाप का अंश लगेगा।

(2) गुटखा, पाउच, मीठी सुपारी, अधिक मात्रा में पान खाने के लिए पैसे उधार नहीं दें, चाहे वह आपका कितना ही निकटतम रिश्तेदार या मित्र/परिचित हो, क्योंकि इनसे स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव पड़ता है।

सावधानी :

(1) व्यापार प्रारम्भ करते समय मात्र लाभ की तरफ ही ध्यान नहीं दें, हिंसा-

अहिंसा/पुण्य-पाप का भी ख्याल रखें।

(2) कली, पाण्डु, झाडू, साबुन, कूटना (कपड़े धोने का) आदि कभी नहीं बेचें क्योंकि इनसे मात्र हिंसा ही होती है।

(3) जैविक सौन्दर्य प्रसाधन, माँसाहार में उपयोग आने वाली खाद्य सामग्री, अबोर्सन के इन्जेक्सन-गोली आदि लक्ष्मणरेखा, संजीवनीसुरा, चूहे आदि मारने की दवाइयाँ, ऑलआउट, गुड नाइट आदि वस्तुएँ नहीं बेचें। इन चीजों से भी हिंसा ही होती है।

(4) बोन चाइना, हाथीदाँत, लाख, रेशम आदि के आइटम नहीं बेचें।

(5) फैक्ट-ी, ऑयल मिल आदि खोलने की अपेक्षा माल खरीदें, बेचें क्योंकि तेल निकालना तेली का, कपड़े बनाना जुलाहे का काम है। फैक्ट-ी आदि खोलने से 24 घण्टे पाप का ही बन्ध होता है।

(6) धन के लोभ में स्वास्थ्य का ख्याल नहीं भूलें और घर की व्यवस्था हेतु रिश्तेदारों के साथ व्यवहार नहीं तोड़ें।

(7) उतने ही पैर पसारें जितनी शारीरिक, आर्थिक एवं मानसिक शक्ति हो।

उपसंहार

हम संसार की 84 लाख योनियों में अनादिकाल से भटकते आ रहे हैं। उन योनियों में मनुष्य योनि सर्वोत्तम मानी गई है। मनुष्य जन्म में भी सम्मूर्च्छन जन्म वालों में तो विवेक रखने की योग्यता ही नहीं है। भोगभूमियाँ जीवों को विवेक रखने के भाव ही उत्पन्न नहीं होते हैं। कर्मभूमि में भी सब जीवों को विवेक रखने की जानकारी नहीं रहती है, उन्हें विवेक रखने का उपदेश ही नहीं मिल पाता है। इस पुस्तक में घर में किये जाने वाले कार्यों में, धार्मिक अनुष्ठानों में तथा थोड़े बहुत किये जाने वाले सामान्य कार्यों में रखने योग्य विवेक के बारे में बताया गया है। विवेकपूर्वक कार्य करने से हम पापों से बच जाते हैं, भविष्य के लिए पुण्य का बन्ध भी कर लेते हैं और हमारे पूर्वोपार्जित पापों का क्षय भी होता है, लेकिन इतना मात्र करना जीवन-विकास के लिए पर्याप्त नहीं होता है। ये सब कार्य तो 20-30 वर्ष की उम्र में ही सीखे जा सकते हैं, सीखकर किये जा सकते हैं। जीवन विकास की परम्परा से उम्र बढ़ने के साथ-साथ जीवन जीने का विवेक बढ़ना भी आवश्यक है। उम्र के साथ हमारे

खाने-पीने-चलने-बोलने, साज-शृंगार करने आदि में यदि विवेक नहीं रखा जाता है तो हम लोक में हँसी के पात्र बनते हैं और भविष्य के लिए दु:खों का संग्रह कर लेते हैं। जैसे-60-65 वर्ष की उम्र में या स्वयं के बच्चे हो जाने पर भी अर्थात् 20-25 वर्ष की उम्र में भी बच्चों के खाने योग्य बिस्किट, टॉफी, कुल्फी आदि खाते रहना। 40-45 वर्ष की उम्र हो जाने पर भी रात भर खाते रहना, आँतें गरिष्ठ पचाना बंद कर दें तो भी अर्थात् वृद्धावस्था में पंगत, पार्टी, सामूहिक भोज आदि में जाते रहना, शादी आदि के कार्यक्रमों को अटेण्ड करने का उत्साह रखना, बच्चों के योग्य हो जाने, उनके बार-बार मना करने पर भी व्यापार धन्धे में, धन कमाने में लगे रहना आदि। इसलिए हमें किस प्रकार जीवन में उम्र के साथ परिवर्तन करना चाहिए। किस प्रकार विवेक रखना चाहिए, इन्हीं बातों को यहाँ बताया गया है–

1. यदि आप धर्म नहीं करते हैं तो 35-40 वर्ष की उम्र में तो मंदिर जाना, गुरुओं के दर्शन करना, उन्हें आहार देना आदि कार्य प्रारम्भ कर ही दें, क्योंकि इस उम्र से जीवन का ढलान शुरू हो जाता है।
2. यदि आप उपर्युक्त कार्य पहले से ही करते हैं तो रात्रिभोजनत्याग अथवा परिस्थिति है तो रात्रि में 9 या 10 बजे के बाद भोजन का तथा अचार, आलू-प्याज-लहसुन आदि जमीकन्द का त्याग कर दें अथवा अष्टमी-चतुर्दशी आदि पर्वों में इनका त्याग रखें। यह पहली सीढ़ी है, साठ वर्ष की उम्र होते-होते इनको पूरा त्याग करने की धारणा बना लें ताकि बहुत वृद्धावस्था आने के पहले ही इनके प्रति आकर्षण समाप्त हो जावे।
3. यदि आपने यौवन अवस्था में धन के लोभ या यौवन के मद में अथवा किसी परिस्थिति के कारण सम्मेदशिखर, गोम्मटेश बाहुबली आदि क्षेत्रों की वन्दना नहीं की है तो 50-55 वर्ष की उम्र होते हुए तो कर ही लें। इस उम्र के बाद आपको इन क्षेत्रों की वन्दना करने का आनन्द नहीं आयेगा क्योंकि इस उम्र के बाद शरीर की शक्ति कम हो जाने से श्रम की विशेष अनुभूति होती है।
4. शादी के 2-4 वर्ष बाद ही ब्रह्मचर्य की थोड़ी-थोड़ी साधना शुरू कर दें। 50-60 वर्ष तक पूर्ण ब्रह्मचर्य व्रत ले लें। यदि नहीं ले सकते हैं तो यह

संकल्प अवश्य कर लें कि मैं 5-10 वर्ष में ब्रह्मचर्य व्रत ले लूँगा।

5. 40-45 वर्ष की उम्र में भगवान का अभिषेक-पूजन, माला जाप आदि प्रारम्भ कर दें ताकि रिटायरमेंट की उम्र में आते-आते हमेशा प्रातःकाल के 1-2 घण्टे धर्मध्यान करने में सहज ही मन लग जावे।
6. धर्म अवश्य करें लेकिन पंचायत के सदस्य, अध्यक्ष आदि पदों पर नहीं बने रहें। नयी पीढ़ी को आगे बढ़ने का अवसर दें। ताकि लोग (समाज) आपके मरने की कामना नहीं करें।
7. 50-60 की उम्र में तो वर्ष में दो-चार बार क्षेत्र पर या गुरुचरणों में जाकर रहना शुरू कर दें ताकि घर के कार्य/व्यापार आदि से निवृत्त होकर धर्मध्यान करने का समय मिल सके।
8. चातुर्मास अष्टाह्निका पर्व आदि में गुरुओं के चरणों में रहें। आस-पास के गाँव में या परिचित स्थानों पर बड़े विधान, वेदीप्रतिष्ठा, पंचकल्याणक आदि कार्यक्रम हो रहे हों तो वहाँ अवश्य जावें। अपना भोजन बनावें, खावें और धर्मध्यान करें। यदि गुरु हों तो यथायोग्य आहारदान, वैयावृत्य आदि करें।
9. बेटे-बहू, अड़ोस-पड़ोस, मित्र आदि को खुद बीमार हो जाने पर हॉस्पिटल ले जाने के लिए मना करते रहें और साधु-सन्त के पास ले जाने की प्रेरणा देते रहें ताकि अन्तिम समय में समाधिपूर्वक मरण कर सकें।
10. 50-60 की उम्र में तो आप कम-से-कम पंगत आदि में जहाँ 1000-500 लोगों का सामूहिक भोजन तैयार होता है, जाना बन्द कर दें, क्योंकि सच पूछा जावे तो पंगत का भोजन अपने घर के भोजन जितना भी शुद्ध नहीं होता है, क्योंकि वर्तमान पंगत में बनाये जाने वाले भोजन का सामान अर्थात् मसाला, आटा, मावा, मैदा, दही आदि सब बाजार से ही खरीदा जाता है जिसको किसी भी हालत में शुद्ध नहीं कहा जा सकता है।
11. ढलती उम्र में नाती-पोतों के साथ बिस्किट, टॉफी, च्युंगम, कुल्फी आइस्क्रीम आदि नहीं खाते रहें। पेपसी, लिम्का आदि नहीं पीते रहें। इसका अर्थ यह नहीं कि मित्रों के साथ पी लें। कभी नहीं पियें। ये चीजें वृद्धावस्था में स्वास्थ्य के लिए भी हानिकारक हैं।
12. घण्टे भर न्यूज पेपर पढ़ने की आदत को सत्साहित्य, शास्त्र पढ़ने, भक्तामर

जी आदि के पाठ करने में ढालना शुरू कर दें। ताकि वृद्धावस्था में बहू-बेटों के काम में इण्टरफियर करने से बच जावें अर्थात् सत्साहित्य पढ़ने में मन लगने पर बहू-बेटे के काम की तरफ ध्यान न जाने से लड़ाई का प्रसंग नहीं बनेगा।

13. वृद्धावस्था आते-आते ही अपनी मुख्य सम्पत्ति सोना-चाँदी, जमीन दुकान, मकान आदि का वसीयत नामा लिखकर तैयार कर लें ताकि आपके जाने के बाद बच्चों में लड़ाई-झगड़ा नहीं मचे। लेकिन एक हिस्सा अपना रखें, जिससे आपके जाने के बाद कुछ दान में और कुछ सेवा करने वालों के लिए लिख दें ताकि सेवा करने वाले को एक-दूसरे पर नहीं टालना पड़े।

14. अपने विचार वाले दो चार मिलकर (पति-पत्नी दोनों) वृद्धावस्था में साथ रहें। अपना भोजन बनावें/खावें। वृद्धावस्था में सामूहिक भोजन के चक्कर में नहीं पड़ें। भले ही रोटी बनाने वाली बाई /लड़का आदि रख लें।

15. 50-55 की उम्र से ही सप्ताह में दो दिन मिठाई खाना बन्द कर दें, ताकि शुगर, ब्लडप्रेसर जैसी बीमारियाँ नहीं लगें।

16. अपनी परिचित दुकान पर विश्वास करते हुए वृद्धावस्था में भी हमेशा कलाकन्द, जलेबी, समोसा आदि नहीं खाते रहें, क्योंकि दुकान/होटल तो होटल होती है, परिचित की हो या स्वयं अपनी ही क्यों न हो, वहाँ भोजन तो अभक्ष्य ही होता है।

17. 50-55 की उम्र से तो साज-शृंगार, तैयार होकर घर से निकलना, इत्र फुलेल लगाना (नेलपॉलिस-लिपिस्टिक) पाउडर क्रीम, शेम्पू आदि का उपयोग बन्द करके सादगी का जीवन जीवें।

18. 40 वर्ष की उम्र से एक सप्ताह में एक एकासन/उपवास अवश्य करें।

19. यदि आप 50-60 वर्ष की उम्र में भी सामूहिक भोजन में जाना नहीं छोड़ पा रहे हैं तो वहाँ लड्डू-विशेष मिठाई, दाल, रोटी, पूड़ी इनके अलावा दूसरी चीजें नहीं खावें। क्योंकि इन चीजों की अपेक्षा दूसरी चीजें पिज्जा, चाउमिन आइस्क्रीम आदि ऐसी चीजें जिनमें माँसाहार की पूरी सम्भावना है, विशेष अभक्ष्य हैं, इसलिए लड्डू आदि जो सामान्य रूप से शाकाहारी ही होते हैं, उन्हें ही खाने का नियम बनावें।

धर्मस्नेही पाठक,

जयजिनेन्द्र।

- यह कृति आपको कैसी लगी, इसमें लिखे विवेक रखने के ऊपर विचारों को भलीभाँति समझ लिया होगा। निश्चित ही आप अपने जीवन को संस्कारित करने की दिशा में आगे बढ़ने का प्रयास करेंगे।
- विवेक मञ्जूषा कृति में पूज्य आर्यिका श्री ने उन-उन बिन्दुओं को सूक्ष्म पैनी नजर से अपने अनुभवों के आधार पर रखे हैं, जो जैनधर्म की आचार संहिता और सिद्धान्तों में शत-प्रतिशत खरे उतरते हैं।
- हम सभी माताजी के चरणारविन्द में कोटि-कोटि वंदामि निवेदित करते हुए संकल्प करते हैं कि जिस तरह हमने अपने जीवन को पापों से बचाने के लिए तैयार किया है, उसी तरह कम से कम 10 श्रावकों को इस कृति को पढ़ने के लिए प्रेरित करें। जिससे समाज में पल रहे अविवेक पूर्ण कार्यों में सुधार हो सके।

प्रकाशक